सर्वश्रेष्ठ रूसी और सोवियत पुस्तकमाला

व्लादीमिर कोरोलेन्को

अंधा संगीतज्ञ

प्रगति प्रकाशन
मास्को

प्राक्कथन

विख्यात रूसी लेखक व्लादीमिर गलक्तिओनोविच कोरोलेन्को (१८५३–१९२१) के व्यक्तित्व में मानवीय आदर्शों के प्रचारक एवं सेनानी के स्वभाव तथा गद्य-लेखक के कौशल का अद्भुत योग था।

२३ वर्ष की आयु मे कोरोलेन्को को साइबेरिया में निर्वासित किया गया। क्रांति के वर्ष १९१७ तक उन्हे ज़ारशाही पुलिस के अनेक अत्याचार सहने पड़े, उनपर हमेशा नज़र रखी जाती थी, कई बार उनपर मुकदमा चलाया गया। लेकिन यह संघर्षरत पत्रकार सदा तमसदूतों और जल्लादो, नौकरशाहों और जनता के कट्टर दुश्मनों के मुंह सामने बेधड़क सच बोलता रहा।

इकतालीस साल तक ज़ारशाही कोरोलेन्को पर कड़ी निगाह रखती रही, पर उधर कोरोलेन्को ने भी लेखक और जनता का अन्तःकरण होने के नाते ज़ारशाही पर कड़ी निगाह रखी। कोरोलेन्को ने ज़ारशाही के प्रति वफ़ादारी की सौगंध खाने से इनकार किया, परंतु उन्होंने मुल्तान के उद्मूर्तों की रक्षा के लिए, जिन्हे निरापराध ही मानव-बलि का अपराधी ठहराया गया था, भगीरथ प्रतिज्ञा की। कोरोलेन्को ने अंतर्राष्ट्रीय प्रतिक्रियावादियों द्वारा फ़्रांसीसी लेखक एमील ज़ोल्या के विरुद्ध चलाये गये घृणित अभियान की निंदा की। वह मौत की सज़ा ख़त्म करवाने के लिए संघर्ष करते रहे। ज़ारशाही फंदे से जिन लोगों को बचाने के लिए जनवादी लेखक ने विशेष संघर्ष किया, उनमें बोल्शेविक मिख़ाईल फ़्रून्ज़े भी थे। "मानव की सृष्टि परम सुख पाने के लिए हुई है, वैसे ही जैसे पक्षी की उड़ान के लिए"—कोरोलेन्को ने घोषणा की थी और इस मानव-सुख के लिए संघर्ष को उन्होंने अपना समस्त जीवन अर्पित कर दिया।

लेखक की गद्य रचनाओं मे भी हम उन्हें ऐसे ही संघर्षकारी रूप में पाते हैं।

1*

व्लादीमिर कोरोलेन्को का जन्म उक्राइना में हुआ था। रूस के दक्षिण-पश्चिमी क्षेत्रों के इन सुंदरतम स्थानों का वर्णन, जहां लेखक का बचपन बीता, उन्होंने लघु-उपन्यास "अन्धा संगीतज्ञ" में किया है। अपने जीवन के अड़सठ वर्षों में से पैंतालीस वर्ष उन्होंने साहित्य-सृजन को दिये। इस काल में उन्होंने अनेक अद्भुत कहानियों और लघु उपन्यासों की रचना की, जिनका संकलन कुछेक खंडों में हुआ है। "कोरोलेन्को की पुस्तकों के प्रत्येक पृष्ठ पर एक आत्मीय, अर्थपूर्ण मुस्कान है, उस महान आत्मा की, जिसने बहुत कुछ देखा है, सोचा-विचारा है, मनन किया है," गोर्की लिखते हैं।

व्ला० कोरोलेन्को का लघु-उपन्यास "अन्धा संगीतज्ञ" एक उज्ज्वल काव्यमय कृति है। यह केवल एक अन्धे, प्रतिभावान बालक की मर्मस्पर्शी कहानी नहीं है। यह मानव के आत्मिक प्रबोधन की, अन्धे के अंत:चक्षुओं के खुलने की कहानी है।

प्राय: कहते हैं कि "अन्धा संगीतज्ञ" उपन्यास का विषय है परम सुख। "मानव के लिए परम सुख क्या है, उसकी प्राप्ति का कौनसा सबसे सही मार्ग है?" लेखक के इस प्रश्न का उत्तर उपन्यास का प्रत्येक नायक देता है—अन्धा प्योत्र, उसकी मां, उसकी प्रिया, प्योत्र के गुरु मामा मक्सिम और वे सब, जिनसे "अन्धा संगीतज्ञ" मिलता है। पाठक भी इस प्रश्न पर विचार किये बिना नहीं रह सकता। इस पुस्तक के पाठकों के दिलों में जो विचार उठते हैं, उन्हीं में इस बात का रहस्य छिपा है कि देश-विदेश में भिन्न-भिन्न आयु के लोग अनबुझ रुचि के साथ इसे पढ़ते आये हैं और आगे भी पढ़ेंगे।

सन्त्रामोहन

रूस के दक्षिण-पश्चिमी प्रदेश के एक धनी परिवार में, रात्रि के गहन अन्धकार में, एक शिशु का जन्म हुआ। युवा मां बेसुध पड़ी थी। किन्तु जब नवजात शिशु का हल्का-सा, करुण क्रन्दन प्रथम बार उसके कानों में पड़ा, तो वह अपने पलंग पर छटपटा उठी। उसकी आंखें बन्द थीं और होंठ कुछ बुदबुदा रहे थे। उसका बच्चों जैसा कोमल मुख मुरझा गया था और उसमें वेदना की अनुभूति प्रतिबिम्बित हो रही थी। शायद यह वही वेदना की अभिव्यक्ति थी, जो दुःख के प्रथम साक्षात्कार के समय किसी भी दुलारे शिशु के मुख पर झलक उठती है।

दाई उन धीरे-धीरे हिलते हुए होंठों पर झुकी।

"क्यों? वह क्यों..." मां ने प्रश्न किया। उसकी आवाज़ अस्पष्ट थी।

दाई न समझ सकी। बच्चे का क्रन्दन फिर सुनाई दिया और मां के अन्तस् की पीड़ा एक बार फिर घनीभूत होकर अश्रुप्रवाह के रूप में बह निकली।

"क्यों? क्यों?" पहले ही की तरह फिर उसके होंठ हिले।

इस बार प्रश्न दाई की समझ में आ गया। उसने शान्ति से उत्तर दिया:

"पूछती हैं, बच्चा क्यों रोता है? हमेशा यही होता है। आप उसकी चिन्ता न करें।"

परन्तु मां शांत नहीं हो पा रही थी। वह बच्चे के प्रत्येक चीत्कार पर चौंक जाती और सरोष अधीरता से पूछती, फिर पूछती:

"ऐसा क्यों... क्यों... इतना दर्दनाक?"

दाई को बच्चे के क्रन्दन में कुछ भी असाधारण नहीं लग रहा था। और यह देखकर कि मां अपनी पूरी चेतना में नहीं है और शायद बेसुधी में बुदबुदा रही है, उसे छोड़कर वह शिशु की परिचर्या में जुट गयी।

युवा मां मौन हो गयी। कभी-कभी उसकी वेदना तीव्र हो उठती और शब्दों अथवा शारीरिक चेष्टाओं के माध्यम से निकलने का मार्ग न पाकर बन्द आंखों से आंसुओं के रूप में वह निकलती। आंसू सघन बरौनियों से छलककर उसके संगमरमर जैसे श्वेत गालों पर लुढ़कते और विलीन हो जाते।

क्या माता के हृदय को सतत दुख की काली घटा का पूर्वाभास मिल गया था, जो नवजात शिशु का अभिन्न अंग बनकर अवतरित हुई थी और आमरण उसी के साथ बनी रहेगी?

अथवा शायद यह उसका प्रलाप ही था? कुछ भी हो, शिशु अन्धा पैदा हुआ था।

२

पहले किसी ने भी इस ओर कोई ध्यान न दिया। शिशु की दृष्टि वैसी ही धुंधली और जड़ थी, जैसी कि प्रायः कुछ काल तक नवजात शिशुओं की होती है। दिन बीते और बीते सप्ताह, अब बच्चे की आंखें साफ़ हो चुकी थीं। आंखों से धूमिल परत हट गयी थी और पुतलियां स्पष्ट हो आयी थीं। परन्तु जब पक्षियों के कलरव और खुली हुई खिड़कियों में से दिखाई पड़नेवाले हरे बीच-वृक्षों के मर्मर-स्वरों के साथ-साथ प्रकाश की किरणें कमरे में प्रवेश करतीं, तो शिशु उनकी ओर दृष्टि करके अपना सिर इधर-उधर न घुमाता। प्रसव से प्रकृतिस्थ होकर पहले पहल मां ने ही इस बात पर बेचैनी से ध्यान दिया कि शिशु की भावभंगिमा में कुछ विचित्रता है। उसके मुख पर अजीब-सी जड़ता और गंभीरता छायी रहती थी।

युवा मां भयभीत कपोती की भांति लोगों की ओर देखती और उनसे पूछती :

"बताइये ना यह ऐसा क्यों है?"

"कैसा?" उदासीन पराये लोग उससे उल्टा पूछते। "इस उम्र के और बच्चों से कोई अंतर नहीं इसमें।"

"लेकिन देखिये तो वह किस अजीब तरह से हाथों से कुछ टटोल रहा है।"

"बच्चा छोटा है और जो कुछ देखता है, अभी उसके अनुरूप अपने अंगों का संचालन नहीं कर सकता," डाक्टर ने कहा।

"परन्तु वह एक ही दिशा में क्यों देखता है? क्या वह... क्या वह अन्धा है?" मां की छाती से अचानक यह भयानक अनुमान फूट निकला और उसे कोई भी सांत्वना न दे सका।

डाक्टर ने बच्चे को उठाया, उसे तेजी से प्रकाश की तरफ़ घुमाया और उसकी आंखों में आंखें डालकर देखा। वह सकपका-सा गये और कुछ इधर-उधर की बातें कहकर वहां से चले गये, लेकिन यह वादा करते गये कि एक दो दिनों में वह फिर आकर बच्चे को देखेंगे।

मां आहत पक्षी की भांति बच्चे को छाती से लगा-लगा कर रोयी-तड़पी। मगर बच्चे की आंखें वैसी ही जड़, वैसी ही निश्चल बनी रहीं।

डाक्टर सचमुच ही दो-एक दिन बाद आ गये। वह अपने साथ ऑफ्थैल्मोस्कोप भी लेते आये। उन्होंने एक मोमबत्ती जलायी और उसे बच्चे की आंख के पास और फिर दूर ले जाते हुए आंख में देखा। थोड़ी देर तक इस तरह देखने के पश्चात व्याकुल से होकर उन्होंने कहा:

"आपका कहना ग़लत न था... मुझे दुःख के साथ कहना पड़ता है कि बच्चा सचमुच अन्धा है और ठीक होने की कोई आशा नहीं..."

मां ने यह समाचार शांत विषाद में सुना।

"मुझे बहुत पहले से ही पता था," मृदु स्वर में उसने उत्तर दिया।

३

जिस परिवार में इस अन्धे बच्चे का जन्म हुआ था, वह कोई बड़ा परिवार न था। उसमें मां थी, पिता थे और मामा मक्सिम थे, जिन्हें घर के सभी लोग और बाहरवाले भी इसी नाम से पुकारते थे। पिता दक्षिण-पश्चिमी प्रदेश के हज़ारों दूसरे जमींदारों जैसे ही एक जमींदार थे। उनका स्वभाव मधुर था। कहा जा सकता है कि वह दयालु स्वभाव के थे। वह अपने मजदूरों के साथ अच्छा व्यवहार करते थे। उन्हें नयी-नयी पन-

चक्कियां बनवाने का बहुत शौक़ था। इस कार्य में ही उनका सारा समय व्यतीत होता और इसलिए घर पर उनकी आवाज दिन में कुछ निश्चित क्षणों पर ही सुनाई देती थी। यह नाश्ते, दोपहर के खाने तथा इसी तरह की अन्य घटनाओं के क्षण होते। ऐसे अवसरों पर वह हमेशा पूछा करते, "आज तुम्हारी तबीयत कैसी है, मेरी प्यारी?" और फिर खाना खाने बैठ जाते और इसके बाद शायद ही कभी कुछ बोलते। बस कभी-कभार चक्की के दंड या गरारी की बातें करते। प्रत्यक्षतः उनके शांत और सरल अस्तित्व का पुत्र के मानस पर अधिक प्रभाव न पड़ा। परन्तु मामा मक्सिम की बात दूसरी थी। यहां वर्णित घटनाओं से दस-बारह बरस पहले तक मामा मक्सिम सबसे ख़तरनाक क़िस्म के झगड़ालू आदमी समझे जाते थे, अपनी जागीर के पास-पड़ोस में ही नहीं, बल्कि कीयेव के "कोन्त्राक्ती"* में भी। सब लोग यह देखकर हैरान थे कि पानी** पोपेल्स्काया (कुंवारेपन में यात्सेन्को) के परिवार जैसे सम्मानित परिवार में ऐसा दुष्ट भाई कहां से हो गया। लोगों को समझ में ही न आता था कि मामा मक्सिम से किस ढंग से बात की जाये और कैसे उन्हें ख़ुश किया जाये। जब कभी पान लोग उनके साथ सज्जनता का बर्ताव करते, तो वह उनके साथ बदतमीज़ी से पेश आते। और किसानों को उनकी रुखाई और उद्दण्डता माफ़ कर देते थे, जिसके बदले शरीफ़ से शरीफ़ श्ल्याख्तिच*** भी थप्पड़ लगाये बिना न छोड़ता। आख़िर एक बार मामा मक्सिम को किसी बात पर आस्ट्रियाइयों पर गुस्सा आ गया और वह इटली चले गये, जिससे सभी "शिष्ट" लोगों को बहुत ख़ुशी हुई। वहां पर वह अपने जैसे ही

---

*"कोन्त्राक्ती"—किसी ज़माने में मशहूर कीयेव के मेले का स्थानीय नाम।—ले० इस मेले मे व्यापारी लोग सौदे तय किया करते थे, इसी लिए यह कोन्त्राक्ती (सौदा, ठेका आदि) कहलाता था।—अनु०

**पान, पानी—पुराने ज़माने में पोलैंड में रईस लोगों विशेषतः ज़मीदारों, दरबारियो आदि को पान (पुरुषों के लिए) और पानी (स्त्रियो के लिए) कहते थे। आजकल भी ये शब्द आम सबोधन मे श्री और श्रीमती के अर्थ मे प्रयुक्त होते हैं।—अनु०

***श्ल्याख्तिच—तद्कालीन पोलिश साम्राज्य का छोटी-मोटी जागीरवाला दरबारी।—अनु०

बैसाखी के सहारे चलते थे। बायां हाथ इतना लुंज-पुंज हो गया था कि सिवा एक छड़ी संभाल लेने के वह उससे और कुछ भी काम न ले सकते थे। वैसे भी अब वह गम्भीर और शान्त हो गये थे। बस कभी-कभी उनकी तेज़ जबान वैसा ही सही वार कर देती, जैसा कभी उनकी तलवार करती थी। अब वह "कोन्त्राक्ती" मेले में कभी भी न जाते और संगी-साथियों में तो यदा-कदा ही उठते-बैठते। उनका अधिक समय अपने पुस्तकालय में व्यतीत होता, जहां वह ऐसी पुस्तकें पढ़ते, जिनके बारे में कोई कुछ न जानता था। फिर भी लोगों की सामान्य धारणा यह थी कि वे नास्तिकता से भरी हैं। वह कुछ लिखते भी थे, परन्तु चूंकि उनका कोई भी लेख कभी "कूरियर" में प्रकाशित नहीं हुआ था, इसलिए लोग उनके साहित्यिक कार्यों को कोई महत्त्व न देते थे।

जिस समय गांव के उस छोटे-से घर में नये शिशु का जन्म हुआ था, उस समय मामा मक्सिम के छोटे-छोटे बालों में कुछ-कुछ सफ़ेदी झलक आयी थी और लगातार बैसाखी के बल चलते रहने के कारण उनके कंधे कुछ इतने चढ़ गये थे कि शरीर एक चौखटा बनकर रह गया था। जो लोग उन्हें अच्छी तरह नहीं जानते थे, वे प्रायः उनसे डरते थे और जब वे उनकी विचित्र शक्ल और चढ़ी हुई त्यौरियां देखते, बैसाखी की तेज़ पटापट सुनते और पाइप में से निकलते हुए घने धुएं पर, जो उन्हें सदा घेरे रहता था, निगाह डालते, तो सहम जाते थे। सिर्फ़ उनके निकटतम मित्र ही जानते थे कि उनके लुंज-पुंज शरीर के भीतर धुकधुक करते हुए हृदय में कितनी दया, कितनी करुणा है और केवल वे ही समझते थे कि छोटे-छोटे, लेकिन घने बालों से ढंके उनके चौकोर सिर में कितनी उथल-पुथल मची हुई है।

मामा मक्सिम अपने जीवन के इस काल में किस समस्या के समाधान में उलझे हुए थे, यह बात उनके अभिन्न मित्र तक न जानते थे। वे सिर्फ़ यही देखा करते थे कि वह नीले धुएं के बादलों से घिरे घंटों तक एक स्थान पर बैठे रहते, उनकी दृष्टि धुंधली होती और घनी भौंहें चढ़ी हुई होतीं। इस बीच वह पंगु योद्धा सोचा करता कि जीवन संघर्ष का ही नाम है और उसमें अपाहिजों का कोई स्थान नहीं। उसे रह-रह कर यह विचार आता कि वह सेनानियों की क़तारों में से निकल चुका है और अब व्यर्थ ही बोझा बनकर जी रहा है। उसे लगता कि वह योद्धा है, जिसे

जीवन ने उसकी काठी में से धकेलकर धूल में फेंक दिया है। मगर क्या जमीन पर गिरकर कुचले हुए केंचुए की तरह छटपटाना कायरता नहीं? श्रौर क्या ज़िन्दगी के बचे हुए थोड़े-से दिनों के लिए अपने विजेता के आगे हाथ पसारना भी कायरता नहीं है?

जब मामा मक्सिम के मस्तिष्क में इन विचारों के पक्ष-विपक्ष का द्वन्द्व मचा हुआ था, उसी समय दुनिया में एक ऐसे बच्चे ने जन्म लिया, जो शुरू से ही अशक्त था, असमर्थ था, विकृत था। पहले तो उनका ध्यान अंधे बच्चे पर नहीं गया, परन्तु शीघ्र ही उन्होंने इस बात पर मनन करना आरम्भ कर दिया कि बच्चे के और उनके अपने प्रारब्ध के बीच कितनी विचित्र समानता है।

"हां," एक दिन बच्चे पर सरसरी नजर डालते हुए उन्होंने विचारशील मुद्रा में कहा, "यह रहा दूसरा विकृत व्यक्ति—यह शिशु। अगर दोनों को मिला दिया जाये, जैसे-तैसे इन्सान बन ही जायेगा।"

और उस समय के बाद से उनकी निगाहें बच्चे पर ही केन्द्रित रहीं।

४

बच्चा अन्धा पैदा हुआ था। उसके दुर्भाग्य के लिए किसे दोष दिया जाये? किसी को भी नहीं। स्पष्ट था कि उसके प्रति किसी का कोई "बुरा इरादा" न था। परन्तु दुर्भाग्य की जड़ तो जीवन की किन्हीं रहस्यपूर्ण, जटिल प्रक्रियाओं की गहराई में कहीं छिपी थी। मां जब कभी अपने अंधे बच्चे पर नजर डालती, तो उसका हृदय तीव्र वेदना से भर उठता। यह वेदना निश्चय ही मातृ-हृदय की वेदना थी, जो पुत्र की विकृति और उसके अंधकारमय भविष्य की कल्पना से व्यथित था। किंतु इसके साथ ही युवा नारी की आत्मा इस बोध से भी पीड़ित थी कि शिशु के दुर्भाग्य का कारण उसके जीवन-दाताओं की संभावित दोषपूर्ण क्षमताओं में निहित था... शायद यही एक वजह थी कि इस छोटे, सुन्दर, किन्तु अंधी आंखों वाले बच्चे की छोटी-सी छोटी इच्छा की पूर्ति के लिए घर का घर तैयार रहता था।

यदि भाग्य के विचित्र फेर और आस्ट्रियाई तलवारों ने मामा मक्सिम को गांव में अपनी बहन के साथ रहने के लिए बाध्य न कर दिया होता, तो कौन जाने उस बच्चे की क्या दशा हुई होती, जो अपने दुर्भाग्य के साथ-साथ सारे संसार की ओर कटुता लिये जन्मा था। और कौन जाने अपने वातावरण से प्रभावित होकर बच्चे में अहम् का कितना अधिक विकास हो गया होता।

घर में अन्धे बच्चे की मौजूदगी ने इस पंगु सिपाही के क्रियात्मक विचारों को उत्तरोत्तर तथा अप्रत्यक्ष रूप से एक नयी दिशा दी। वह पहले की ही तरह घंटों बैठा-बैठा पाइप से धुआं उड़ाया करते। किंतु उनकी आंखों में अथाह पीड़ा के स्थान पर अब मननशील प्रेक्षण का भाव दिखाई देने लगा। वह जितना ही सोचते-विचारते पाइप से उतना ही अधिक धुआं निकालते और उनकी घनी भौंहों पर उतने ही अधिक बल पड़ जाते। आखिर उन्होंने एक दिन हस्तक्षेप करने की ठान ही ली।

"यह बच्चा," धुआं उड़ाते हुए वह बोले, "मुझसे भी अधिक दुःखी रहेगा, कहीं अधिक! अगर वह पैदा ही न हुआ होता, तो अधिक अच्छा होता।"

मां ने अपना सिर झुकाया और उनकी कढ़ाई पर आंसू टपक पड़ा।

"मुझे इसकी याद दिलाना तुम्हारी निर्दयता है, मक्सिम," उसने धीरे से जवाब दिया, "इतनी बड़ी निर्दयता और खासकर जब तुम जानते हो कि हम कुछ नहीं कर सकते..."

"बात सच्ची कह रहा हूं, बहन," मक्सिम ने उत्तर दिया, "मेरे एक हाथ नहीं है, एक पैर नहीं है, लेकिन मैं देख सकता हूं। बच्चा देख नहीं सकता; समय आने पर उसके न हाथ होंगे, न पैर और न उसमें आत्मबल होगा..."

"क्यों?"

"आन्ना, इसे समझने की कोशिश करो," अधिक नम्रतापूर्वक वह बोले, "अकारण मैं इतनी सख्त बात नहीं कहूंगा। बच्चे का तंत्रिका-तंत्र सूक्ष्म और उत्कृष्ट है। अभी तो वह अपनी अन्य क्षमताओं का इतना अधिक विकास कर सकता है कि कम से कम अंशतः उसके अंधेपन की कमी पूरी हो सकती है। परन्तु विकास के लिए अपेक्षित है अभ्यास, निरन्तर अभ्यास और अभ्यास के लिए अपेक्षित है आवश्यकता, केवल

आवश्यकता। घर में सब बच्चे की इतनी अधिक देखरेख में लगे हैं कि उसे प्रयत्न करने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। यह प्रवृत्ति उसके विकास के मार्ग में बाधक है।"

मां मूर्ख न थी। उसने अपनी उस भावना पर क़ाबू पाने की शक्ति संचय की, जिसके वशीभूत होकर वह बच्चे का अल्प चीत्कार सुनकर उसकी सहायता के लिए सर के बल दौड़ी चली जाती थी। इस बातचीत के कुछ महीने बाद बच्चे ने घर भर में आसानी और तेज़ी से रेंग-रेंग कर चलना सीख लिया। वह अपने चारों तरफ़ की प्रत्येक आवाज़ पर पूरा-पूरा ध्यान देता और हाथों में पड़ जानेवाली प्रत्येक वस्तु को बड़ी उत्सुकता और दिलचस्पी के साथ टटोलता। उसकी उंगलियों की गति में असाधारण स्फूर्ति थी।

५

शीघ्र ही वह मां को पहचानने लगा—उसकी पदचाप, उसके वस्त्रों की सरसराहट तथा अन्य अनेक दूसरों के लिए अबोध्य चिह्नों से उसे मां के आने-जाने का पता चल जाता। कमरे मे चाहे जितने भी लोग हों और वे वहां चाहे जिस तरह से चल-फिर रहे हों, वह सीधे मां के पास पहुंच जाता। जब कभी मां उसे अकस्मात् गोदी में उठा लेती, तो उसे तुरन्त मालूम हो जाता कि उसे उठानेवाली केवल वही है और कोई नहीं। और अगर कोई दूसरा उसे उठाता, तो वह अपनी उंगलियां तेज़ी से उसके चेहरे पर फेरने लगता और अपने परिवार के सदस्यों—अपनी आया, मामा मक्सिम और पिता—को तुरन्त पहचान लेता। यदि कोई अपरिचित व्यक्ति उसे गोदी में लेता, तो उसकी नन्ही-नन्ही उंगलियों की चाल धीमी पड़ जाती। धीरे-धीरे, किन्तु बड़ी सूक्ष्मता के साथ वह उस अपरिचित मुख पर हाथ फेरता और उसके चेहरे पर तनावपूर्ण एकाग्रता का भाव छा जाता और फिर ऐसा लगता कि उसकी उंगलियों के सिरे उसके लिए "देखने" का काम कर रहे हैं।

स्वभाव से वह बड़ा फुर्तीला और खुशदिल बच्चा था। किन्तु महीने गुजरते गये और उसके स्वभाव पर अन्धेपन की अधिकाधिक छाप पड़ती गयी। उसकी गतिविधियों की स्फूर्ति धीरे-धीरे कम पड़ती गयी। अब वह

किसी शान्त स्थान पर निकल जाता, वहां चेहरे पर एक जड़ भाव लिये घंटों निश्चल बैठा रहता, और ऐसा लगता कि वह कुछ सुनने की कोशिश कर रहा है। जब कमरे में कोई शोरगुल न होता और उसका ध्यान बात-चीत और चलने-फिरने की बदलती हुई आवाजों पर केन्द्रित न होता, उस समय वह विचारशील मुद्रा में दिखाई पड़ता और उसके सुन्दर चेहरे पर, जो उसकी आयु की तुलना में कहीं अधिक गम्भीर हो चुका था, व्याकुलता और विस्मय के भाव झलकने लगते।

मामा मक्सिम ठीक कहते थे। बच्चे का उत्कृष्ट एवं प्रखर तंत्रिका-तंत्र अपना प्रभाव दिखा रहा था। उसकी स्पर्श एवं श्रवण-ग्राह्यता इतनी प्रखर हो गयी थी कि इससे बालक की अनुभूतियों में यथासंभव पूर्णता आ रही थी। उसकी स्पर्शानुभूति आश्चर्यजनक थी। कभी-कभी तो ऐसा लगता कि उसे रंगों की भी कुछ-कुछ पहचान होने लगी है, क्योंकि जब उसके हाथ में चमकीले रंग की कोई कतरन पड़ जाती, तो वह अपनी पतली-पतली उंगलियां उसपर अधिक देर तक टिकाये रखता और उसके चेहरे पर विस्मयपूर्ण एकाग्रता दिखाई पड़ती। समय के साथ-साथ यह स्पष्ट होने लगा कि बालक की ग्रहणशक्ति का विकास मुख्यतः श्रवणानुभूति की ओर हो रहा है।

शीघ्र ही वह सारे घर को उसकी आवाजों से, पहचानने लगा। परिवार के प्रत्येक सदस्य की पदचाप, अपने पंगु मामा की कुर्सी की चर्राहट, मां की कढ़ाई के समय डोरे की नीरस और नपी-तुली सरसराहट और घड़ी की सधी हुई टिकटिक — इन सभी आवाजों में वह भेद कर लेता था। कभी-कभी दीवार के साथ-साथ रेंगते समय वह कुछ ऐसी आवाजें सुनने के लिए रुक जाता, जो दूसरों के लिए अबोध्य होतीं, और अपना हाथ उस मक्खी की ओर बढ़ा देता, जो दीवार के कागज़ पर रेंगती होती। जब मक्खी डरकर उड़ जाती, तो उसके मुख पर कष्टदायक उलझन का भाव छा जाता। वह मक्खी के ग़ायब हो जाने के रहस्य को न समझ पाता। मगर कुछ और बड़े हो जाने पर ऐसे क्षणों में उसके चेहरे पर अर्थपूर्ण एकाग्रता छायी रहती। अब वह मक्खी के उड़ने की दिशा में अपना सिर घुमा देता, क्योंकि उसकी श्रवणानुभूति इतनी प्रखर हो गयी थी कि वह उसके परों की हल्की भनभनाहट तक पहचान लेता था।

चारों ओर का चमकता-दमकता, चहल-पहल और ध्वनियों से भरा संसार अंधे बालक के नन्हे से मस्तिष्क में केवल ध्वनियों के रूप में प्रवेश करता था और इन्हीं ध्वनि-रूपों में वह संसार की कल्पना करता। उसके चेहरे पर ध्वनियों के प्रति विशेष ध्यान की छाप होती: उठी हुई नाजुक गर्दन पर थोड़ा आगे को निकली हुई ठोड़ी। भौंहों में विशेष चंचलता आ जाती और सुंदर, किंतु जड़ आंखें उसके चेहरे को कठोर और साथ ही मर्मस्पर्शी बना देतीं।

६

बच्चे का तीसरा जाड़ा समाप्त होने को आ रहा था। बर्फ़ पिघलने और वसन्तकालीन नालों में कलकल-छलछल सुनाई पड़ने लगी थी। बच्चा जाड़े भर बीमार-सा रहा और घर की चहारदीवारी के भीतर बन्द रहा। उसे बाहर की हवा ही न लग सकी। परन्तु अब उसका स्वास्थ्य सुधरने लगा था।

दोहरे शीशों वाली खिड़कियों से एक फ़्रेम हटा दिया गया। और वसन्त का हर्षोल्लास दूनी प्रफुल्लता के साथ कमरे में घुस आया। प्रकाश में डूबी खिड़कियों में से मुस्कराता वसंती सूरज झांक रहा था, बीच-वृक्षों की टहनियां, जो अभी तक नंगी ही थीं, झूम रही थीं। दूर खेतों की काली जमीन दिखाई देने लगी थी और कहीं-कहीं पिघलती बर्फ़ के सफ़ेद ढेर दिखाई दे रहे थे। कई जगहों पर तो नयी घास की हरियाली भी झांकने लगी थी। सारी प्रकृति में, हर वस्तु पर, हर प्राणी पर उन्मुक्तता, स्वच्छंदता छा गयी थी। वसंत ने चारों ओर नव स्फूर्ति, नव जीवन का संचार कर दिया था।

अंधे बच्चे के लिए वसन्त का आगमन कमरे में भर जानेवाली द्रुत ध्वनियों के रूप में हुआ। वह पत्थरों पर छलकते तथा मुलायम गीली मिट्टी से होकर अपना मार्ग प्रशस्त करते हुए उन अनेकानेक वसन्ती सोतों की कलकल सुनता, जो एक दूसरे से होड़ लगाये आगे बढ़ रहे थे। उन बीच-वृक्षों को भी आवाजें सुनता, जो खिड़कियों से सटे हुए आपस में कानाफूसी कर रहे थे। उनकी शाखाएं एक दूसरी से टकरातीं और शीशों से टकराकर हल्की झंकार करतीं। वह प्रातःकालीन पाले के कारण जमी और छत

से लटकती हुई बर्फ़ की क़लमों से, जो धूप पाकर इस समय पिघल रही थीं, तेजी से झरती हुई असंख्य बूंदों की पटर-पटर सुनता। ये सारी ध्वनियां एक झंकार की द्रुत तरंगों में बंधी कमरे में प्रवेश करतीं। कभी-कभी इस झंकारों और शोर-गुल के बीच उसे आसमान में उड़ते हुए सारसों का चहचहाना भी सुनाई देता, जो फिर धीरे-धीरे हवा में विलीन हो जाता।

प्रकृति की इस वसन्तकालीन सजीवता ने बच्चे के चेहरे पर व्याकुलता एवं परेशानी की मुद्राएं अंकित कर दी थीं। वह बड़े प्रयत्न से भौंहें सिकोड़ता, गर्दन खींचता, प्रकृति की ध्वनियों को ध्यान से सुनता और फिर अनेक प्रकार की ध्वनियों के परस्पर मिल जाने के कारण उत्पन्न अव्यवस्थित ध्वनिसमूह से भयभीत होकर सहसा अपने हाथ बढ़ाकर मां को ढूंढ़ता, उसकी ओर झपटता और उसकी छाती से चिपट जाता।

"क्या होता है इसे?" मां अपने आप से और दूसरों से पूछती।

मामा मक्सिम देर तक और बड़ी गम्भीरता से बच्चे के चेहरे को देखकर उस विचित्र भय का कारण मालूम करने की कोशिश करते, परन्तु उन्हें कोई सफलता न मिलती।

"वह ... वह समझ नहीं पा रहा है," बच्चे के चेहरे पर वर्दनाक उलझन और प्रश्न का भाव देखकर मां अनुमान लगाती।

सचमुच बच्चा बेचैन था और भयभीत भी। वह नयी-नयी ध्वनियां सुनता। उसे आश्चर्य होता कि जिन पुरानी ध्वनियों को सुनने का वह इतना अभ्यस्त हो चुका था, वे अब क्यों नहीं सुनाई पड़तीं। आखिर वे चली कहां गयी हैं।

७

वसन्त के प्रारम्भ की अव्यवस्था शान्त हो चुकी थी। दिन बीतने के साथ ही साथ धूप तेज हुई और चारों ओर प्रकृति में अधिकाधिक निखार आया। जीवन में मानो एक नयी उमंग भर आयी थी और उसकी गति तीव्र और तीव्रतर होती जा रही थी। चरागाहों में हरीतिमा मुस्करा उठी और भोज की कलियों की सुगंधि ने सारे वातावरण को सुरभित कर दिया।

बच्चे को पास ही बहती एक सरिता के तट पर ले जाने का निश्चय किया गया।

मां ने बच्चे का हाथ पकड़ा। मामा मक्सिम बैसाखी लिये उसके साथ-साथ चले और तीनों नदी किनारे के टीले की ओर बढ़े। यहां अच्छी-खासी घास उगी थी और धूप और हवा के कारण जमीन पूरी-पूरी सूख चुकी थी। टीले से दूर विस्तार का मनोरम दृश्य दिखाई पड़ता था।

मां और मामा मक्सिम की आंखों पर तेज धूप का प्रहार हुआ। सूर्य की किरणों के कारण उनके मुंह गर्म हो उठते, परन्तु वसन्त की भीनी बयार अदृष्य रूप से उनका चुम्बन करके उन्हें शीतलता प्रदान करती। वायु में ऐसी मादकता थी, जो उन्हें आनन्द से शिथिल कर रही थी।

मां को अपने हाथ में नन्हे-से हाथ के जोर से भिंचने का आभास हुआ। परन्तु वसन्त के माधुर्य ने उसे बच्चे की बेचैनी के प्रति अधिक जागरूक न रहने दिया था। वसन्ती बयार का आनन्द लेती हुई वह बढ़ती गयी। यदि उसने एक क्षण के लिए भी नीचे देखा होता, तो उसे बच्चे की विचित्र मुद्रा का आभास मिल गया होता। मूक विस्मय के साथ वह अपनी खुली आंखें सूर्य की ओर घुमा रहा था। उसके होंठ खुल गये थे; वह जल्दी-जल्दी, किन्तु कुछ रुक-रुक कर सांस ले रहा था और उसकी दशा पानी के बाहर तड़पनेवाली मछली जैसी थी। कभी-कभी उसके छोटे-से चेहरे पर, उसकी निरीह व्याकुलता के बीच व्यथित उल्लास की रेखाएं झलक जातीं और एक क्षण के लिए उसका मुखमंडल उद्दीप्त हो उठता। किन्तु दूसरे ही क्षण उसपर मूक विस्मय, भय तथा व्यग्रता के लक्षण प्रकट होने लगते। केवल उसकी आंखें जड़, अस्थिर और भावहीन बनी हुई थीं।

वे टीले पर चढ़े और वहां बैठ गये। जब मां ने बच्चे को आराम से बिठाने के लिए उठाया, तो उसने फिर से झटके के साथ उसकी पोशाक को पकड़ लिया। मानो उसे अपने नीचे पृथ्वी नहीं जान पड़ती थी और वह डर रहा था कि कहीं गिर पड़ेगा। लेकिन इस बार भी अपने चारों ओर वसन्त की सुषमा का पान करते रहने के कारण मां ने बच्चे की इस बेचैनी पर कोई ध्यान न दिया।

दोपहर हो चुकी थी और सूर्य नीले आसमान में धीमे-धीमे बढ़ रहा था। जिस टीले पर वे बैठे थे, वहां से दूर तक फैली नदी दिखाई दे रही थी। नदी अपना शीतकाल का हिम-आवरण बहा चुकी थी, किंतु अब भी पिघलते हुए बह रहे सफ़ेद हिम-खंड

कहीं-कहीं दिखाई दे जाते थे। चरागाहों में भी वसन्ती पानी की झीलें बनी हुई थीं। सफ़ेद बादल इनमें नीले आसमान के साथ प्रतिबिंबित हो रहे थे और उनकी गहराइयों में धीरे-धीरे तैरते हुए छिप जाते थे। ऐसा लगता था कि वे भी सफ़ेद हिम-खंडों की तरह जल में पिघल रहे हैं। कभी-कभी हवा का कोई झोंका पानी में तरंगें पैदा करता और वह सूर्य के प्रकाश में झिलमिलाने लगता। नदी के उस पार काले नम खेतों से कुहासा उठ रहा था और लहराती, डोलती बदली-सा दूर, बहुत दूर धुंधली-सी दिखाई पड़ रही जंगल की नीली पट्टी और छप्परों पर छाता जा रहा था। पृथ्वी मानो उसास ले रही थी और उसके आंचल से आकाश की ओर पूजा-धूप के बादलों सा कुछ उठ रहा था।

समस्त प्रकृति उपासना के लिए सजाये गये एक बड़े मन्दिर की भांति लग रही थी। किन्तु अंधे बच्चे के लिए केवल अंधकार था, सर्वत्र अंधकार ही अंधकार। वह अंधकार, जिसमें गति थी, धड़कन थी, ध्वनि थी, जिसने उसके पास पहुंचकर उसकी आत्मा में नयी-नयी इतनी असंख्य अनुभूतियां जगा दी थीं कि उसका हृदय तेजी से धकधक करने लगा और उसकी व्यग्रता बढ़ गयी, क्योंकि वह इनमें से अनेक अनुभूतियों से अभी तक अनभिज्ञ था।

घर से बाहर क़दम रखते ही जब दिन की गर्मी ने उसके चेहरे पर अपना प्रभाव डाला तथा उसकी कोमल त्वचा ने उष्णता का अनुभव किया, उसने अन्तःप्रेरणावश अपनी अंधी आंखें सूर्य की ओर घुमा दीं, मानो वह समझ रहा हो कि सूर्य ही वह केंद्र है, जिसकी ओर सारी सृष्टि आकर्षित हो रही है। हां, चारों ओर की स्पष्ट दूरियों का उसे कोई एहसास न था—निस्सीम नीलाकाश और क्षितिज की परिधि—ये सब उसकी अनुभूति के बाहर की चीजें थीं। वह केवल एक ही बात अनुभव कर रहा था—कोई भौतिक, इन्द्रिय-गम्य, मृदु और प्रिय वस्तु उसके मुख का स्पर्श कर रही है और उसे उष्णता प्रदान कर रही है। और फिर कोई शीतल और हल्की, किन्तु आतप की उष्णता से कुछ भारी वस्तु उस उष्णता को बहा ले जाती है तथा मुखमंडल पर ताजगी पैदा करनेवाली शीतलता बिखेर देती है। घर में तो बच्चे ने कमरों के अंदर निर्बाध और स्वतंत्रतापूर्वक विचरना सीख लिया था। वहां उसे अपने चारों ओर शून्य की अनुभूति थी। किंतु यहां उसे नाना प्रकार की वि-

चित्र अनुभूतियों की तरंगों ने घेर लिया था; एक के बाद एक वे उसे प्यार से दुलारतीं, फिर गुदगुदातीं और फिर उन्मादित करतीं। शीघ्र ही धूप के उष्ण स्पर्श के स्थान पर शीतल वायु उसके गालों उसकी कनपटी और उसके समस्त शरीर का स्पर्श करती और उसके सिर, गुद्दी और गर्दन का चक्कर लगाती हुई उसके कानों में गूंजने लगती और उसे ऐसा लगता कि वह किसी ऐसे शून्य स्थान में पहुंच गया है, जिसे उसकी आंखें नहीं देख पा रही हैं। वायु उसकी चेतना पर आघात करती और वह विस्मृति तथा शिथिलता का शिकार हो जाता। इन्हीं क्षणों में बालक का हाथ मां के हाथ को ज़ोर से भींच देता था और उसका दिल थम जाता और लगता बस अब धड़कनें एकदम रुकीं कि रुकीं।

जब बच्चे को घास पर बिठाया गया, तो वह मानो कुछ शांत हो गया। यद्यपि उसका रोम-रोम विचित्र-सी अनुभूतियों से स्पंदित हो रहा था, फिर भी अब वह कुछ पृथक ध्वनियां स्पष्टतः सुनने लगा था। उसे प्रतीत हो रहा था कि अंधेरी, दुलारती तरंगें उसके शरीर में प्रवेश कर रही हैं। इन तरंगों के उठने के साथ-साथ उसकी धमनियों में प्रवाहित होनेवाले रक्त में भी लयानुरूप आरोह-अवरोह हो रहा था। अब इन तरंगों के साथ-साथ ध्वनियों का भी प्रवेश होने लगा था—लावा का चहचहाना, नयी पत्तियों से लदे हुए भोज की कोमल मर्मर, नदी में एक हल्की-सी छपाक। निकट ही कहीं उड़ती हुई अबाबील के परों की फड़फड़ाहट, पतंगों की भनभनाहट और समय-समय पर नदी के उस पार खेतों में बैलों को हांकते हुए हलवाहे की लम्बी और करुण आवाज़ उसके कानों में पड़ रही थी।

परन्तु बच्चा इन समस्त ध्वनियों को एकसाथ, समन्वित रूप से ग्रहण करने में असमर्थ था। वह न तो समुचित रूप से उनमें सामंजस्य ही स्थापित कर पा रहा था और न उन्हें स्थान भेद के साथ पहचान पा रहा था। सभी ध्वनियां अलग-अलग उसके छोटे-से मस्तिष्क में प्रवेश कर रही थीं—कुछ कोमल और अस्पष्ट थीं, कुछ तेज़ और साफ़ और कुछ ऐसी, जिनसे कानों के परदे तक फटने लगते। कभी-कभी वे सभी उसके कानों में पड़तीं—एक के बाद एक बड़े विचित्र ढंग से, बेसुरी-सी, बिना किसी सामंजस्य के। फिर भी खेतों से आती हुई वायु उसके कानों में कुछ कह जाती। वायु-तरंगें द्रुतगति से उसके कानों में प्रवेश करतीं, उनका

कोलाहल अन्य समस्त ध्वनियों को दबा देता और उसे ऐसा लगता कि वे इस दुनिया का नहीं, किसी दूसरी दुनिया का संदेश दे रही हैं–बीते हुए दिनो की स्मृतियों की तरह। और जब ये ध्वनियां हल्की पड़ने लगतीं, तो बच्चे को शिथिलता घेर लेती। उसका चेहरा इन तरंगों के आरोह-अवरोह के साथ ही खिलता, मुरझाता। उसकी आंखें मुंदतीं, खुलतीं और फिर मुंदतीं। उसकी भौंहें बेचैनी में सिकुड़तीं। उसकी प्रत्येक मुख-मुद्रा से पता चलता कि वह कुछ पूछना चाहता है और उसके मस्तिष्क तथा उसकी कल्पना को विशेष प्रयास करना पड़ रहा है। वह बच्चा था, कमज़ोर था और नयी-नयी अनुभूतियों से दबा जा रहा था। फलतः उसकी चेतना पर ज़ोर पड़ने लगा। परन्तु उसमें संघर्ष जारी रहा और उसने चारों ओर से प्रवेश करती हुई अनुभूतियों और भावनाओं को अपने में समेटने की कोशिश की, ताकि उनमें संतुलन स्थापित कर सके, उन्हें एकरूपता का आधार दे सके, उन्हें समझ सके, उनपर विजय पा सके। परन्तु बच्चे के अंधकारमय मस्तिष्क के लिए यह कार्य दुष्कर था, क्योंकि उसे दृष्टि-ज्ञान का अभाव था।

और झंकारमय विविध ध्वनियां अभी भी मंडरा रही थीं और एक के बाद एक गिर रही थीं। ध्वनि लहरें बच्चे पर छा गयी थीं और वे प्रचंड होती जा रही थीं... वे चारों ओर छाये कोलाहलपूर्ण अंधकार से आ रही थीं और फिर उसी अंधकार में लौट जातीं और फिर नयी लहरें, नयी ध्वनियां ... वे और भी तेज, और अधिक व्यथा के साथ उसे और ऊंचा उठा रही थीं, थपथपा रही थीं, झुला रही थीं ... एक बार फिर इस धुंधली पड़ती अस्त-व्यस्तता के ऊपर हलवाहे की लंबी करुण आवाज़ गूंज गई और फिर सब एकदम शांत हो गया।

एक हल्की-सी आह के साथ बच्चा घास पर गिर पड़ा। मां ने मुड़कर देखा और भयग्रस्त चीख उठी। वह घास में पड़ा था। उसका चेहरा सफ़ेद पड़ गया था। उसे मूर्च्छा आ गयी थी।

८

इस घटना से मामा मक्सिम व्यथित हो उठे। इधर कुछ समय से वह शरीरविज्ञान, मनोविज्ञान और बाल-शिक्षण विज्ञान की अनेकानेक पुस्तकें मंगवाने लगे थे और बच्चों के जीवन, उनकी वृद्धि और उनके

विकास के रहस्यों को जानने के लिए पूरे मनोयोग के साथ उनके अध्ययन में लग गये थे।

इस अध्ययन में उनका मन लगने लगा और वह व्यस्त रहने लगे। परिणाम यह हुआ कि उनके ये विचार उनके चौकोर सिर से निकल गये कि "मैं जीवन संघर्ष के लिए बेकार हूं", "दुनिया के लिए बोझ बना हुआ हूं", "धूल फांकनेवाला पददलित कीड़ा हूं"। इनके स्थान पर उनके मस्तिष्क में मननशील एकाग्रता छा गयी और कभी-कभी तो उनका बूढ़ा दिल भी गुलाबी सपने देखने लगता। वह समझते थे कि यद्यपि प्रकृति ने उनके छोटे भांजे को दृष्टि से वंचित कर दिया है, फिर भी वह अन्य प्रकार से उसपर मेहरबान है। जब बच्चे पर बाहरी दुनिया की उसके लिए सुगम कोई छाप पड़ती, तो वह इस प्रकार व्यवहार करता मानो उसने प्रकृति से इन संकेतों को पूरा-पूरा समझ लिया है। अब मामा मक्सिम ने संकल्प कर लिया था कि वह बच्चे की प्राकृतिक क्षमताओं का विकास करने का प्रयत्न करेंगे, भाग्य के घोर अन्याय का जवाब देने के लिए अपनी समस्त बौद्धिक क्षमताओं और प्रभावों का उपयोग करेंगे, अपने स्थान पर जीवन के उद्देश्यों के लिए लड़नेवाले एक नये सेनानी को खड़ा करेंगे और अपने से जितना भी हो सकेगा उसकी सहायता करेंगे।

"कौन कह सकता है?" गरीबाल्डी के पुराने साथी ने विचार किया, "अन्ततः संघर्ष के साधन भाले और तलवारें ही तो नहीं। हो सकता है कि किसी दिन यह बच्चा भी, जिसका भाग्य ने इस बुरी तरह उपहास किया है, किसी कला में पारंगत होकर अपने जैसे अभागों और अन्याय पीड़ितों की सहायता के लिए आगे बढ़े। और यदि यह बात सच हुई, तो मुझ बूढ़े पंगु सिपाही का जीवन व्यर्थ न जायेगा ..."

उन्नीसवीं शताब्दी की पांचवीं-छठी दशाब्दियों के विद्वान मस्तिष्क भी प्रकृति के "रहस्यमयी प्रारब्ध" के प्रति अन्धविश्वासों की भावना में बह रहे थे। अतएव जैसे-जैसे बच्चे का विकास होता गया और उसने अपनी आश्चर्यजनक क्षमताओं का परिचय देना आरम्भ किया, वैसे ही मामा मक्सिम उसके अन्धेपन को "प्रारब्ध" की स्पष्ट निशानी समझने लगे। "अभागा आहतों की रक्षा में," मामा मक्सिम ने अभी से अपने भानजे की संघर्ष-पताका पर यह नारा लिख दिया था।

उस वसन्त में पहली बार घर से बाहर निकलने के बाद कुछ दिनों तक बच्चा बिस्तर पर ही उन्मादग्रस्त पड़ा रहा। सारे समय, चाहे वह जड़वत् चुप पड़ा होता या हिलता-डुलता या बड़बड़ाता अथवा कुछ सुनतो-सी मुद्रा में होता, व्याकुलता की विचित्र अभिव्यक्ति उसके मुखमंडल पर बनी ही रहती।

"सचमुच," युवा मां कहती, "लगता है यह कुछ समझने की कोशिश कर रहा है, परन्तु समझ नहीं पा रहा है।"

मामा मक्सिम विचारग्रस्त सिर हिला देते। उन्होंने समझ लिया था कि बच्चे की इस विचित्र बेचैनी और सहसा उसके मूर्च्छित हो जाने का कारण है नये-नये अनुभवों की बहुलता, जिन्होंने उसकी चेतना पर जरूरत से ज्यादा बोझ डाला था। अब जब बच्चा कुछ-कुछ स्वस्थ होने लगा, तो यह निश्चित किया गया कि उसे इन नये अनुभवों का परिचय धीरे-धीरे और थोड़ा-थोड़ा करके, यों कहें कि अलग-अलग हिस्से करके कराया जाये। पहले उसके कमरे की खिड़कियां बन्द रहती थीं। किन्तु बाद में, जब वह कुछ और तन्दुरुस्त हुआ, तो उन्हें किसी-किसी समय थोड़ी-थोड़ी देर के लिए खोला जाने लगा। फिर जब वह पैरों चलने लगा, तो मां उसे घर के भीतर इधर-उधर टहलाने लगी—कभी बाहर दालान में ले जाती और कभी बाग़-बग़ीचे में। और जब बच्चे के चेहरे पर व्याकुलता के लक्षण अंकित होते, तो उसे विस्मित करनेवाली ध्वनियों के पैदा होने का कारण उसे समझाती।

"वह है चरवाहे की सिंगी, जिसे चरवाहा जंगल के पार बजा रहा है," वह कहा करती, "और वह रहा रोबिन पक्षी, जिसका स्वर तुम गौरैयों की चहचहाहट के बीच सुन रहे हो। और यह—यह है सारस, जो पहिये पर खड़ा चिचिया रहा है।* यह अभी उसी दिन तो यहां लौटा है। ओफ़ कितनी दूर से, मालूम है! और अब वह उसी जगह अपना घोंसला बना रहा है, जहां पिछले साल बनाया था।"

---

*उक्राइना तथा पोलैंड मे लोग ऊंचे-ऊंचे खंभों पर गाड़ी के पुराने पहिये रख देते हैं, जिनपर सारस अपने घोंसले बनाते हैं।—ले०

श्रौर बच्चा उसकी श्रोर अपना चेहरा घुमा देता, जो कृतज्ञता से चमक रहा होता, उसका हाथ पकड़कर सिर हिला देता श्रौर मननशील, एकाग्र भाव के साथ सुनता रहता।

१०

अब बालक उन सब बातों के बारे में पूछताछ करने लगा था, जिनकी श्रोर उसका ध्यान आकृष्ट होता था श्रौर उसकी मां, बल्कि अधिकतर मामा मक्सिम उसे उन प्राणियों या वस्तुश्रों के बारे में बताते, जिनकी आवाजें उसे सुनाई पड़तीं। मां का वर्णन अधिक स्पष्ट श्रौर रोचक होता श्रौर उसका प्रभाव बच्चे की कल्पना-शक्ति पर कहीं अधिक पड़ता। परन्तु कभी-कभी वे वर्णन उसके छोटे-से मस्तिष्क के लिए बहुत बड़े बोझ साबित होते। स्वयं मां को भी कम कष्ट न होता श्रौर उसकी श्रांखों से निराशा, वेदना श्रौर दुःख के भाव प्रकट होने लगते। परन्तु यथासम्भव वह अपने पुत्र को वस्तुश्रों की आकृति तथा उनके रंग से अवगत कराने की चेष्टा करती। बच्चा बैठ जाता, मां की बातें बड़े ध्यान से सुनता, उसकी भौंहें तन जातीं, माथे पर बल पड़ जाते श्रौर उसका बाल-सुलभ मस्तिष्क कोई ऐसा कार्य करने में जुट पड़ता, जिसे पूरा करना प्रायः उसकी शक्ति से परे होता। श्रौर उसकी अंधेरी कल्पना मां द्वारा समझायी गयी बातों की सहायता से नयी-नयी धारणाश्रों का निर्माण करने का निष्फल प्रयत्न करती। ऐसे अवसरों पर मामा मक्सिम की भौंहें सदा चढ़ी रहतीं श्रौर जब मां की श्रांखों में आंसू आने लगते श्रौर बच्चे का चेहरा एकाग्र प्रयास में पीला पड़ जाता, तो वह उनकी बातों में हस्तक्षेप करते। बहन को एक तरफ़ हटाकर वह अपनी कहानियां शुरू कर देते, जिनमें वह दूरियों श्रौर ध्वनियों की सहायता से ही वर्णन करते। श्रौर बच्चा शान्त हो जाता।

"तो क्या यह बड़ा होता है? कितना बड़ा?" वह उस सारस के बारे में पूछ रहा था, जो खड़ा-खड़ा पहिये से अपनी चोंच लड़ाये जा रहा था।

श्रौर यह पूछते हुए उसने अपने हाथ फैला दिये थे। इस तरह के प्रश्न पूछते समय वह हमेशा ऐसे किया करता था श्रौर मामा मक्सिम उसे

बताते थे कब रुकना चाहिए। अब उसने अपने हाथ बिल्कुल फैला दिये, लेकिन मामा ने कहा:

"नहीं, यह इससे बड़ा है, बहुत बड़ा। अगर हम उसे अपने घर ले चलें और फ़र्श पर खड़ा कर दें, तो उसका सिर कुर्सियों को पिछाड़ी से भी ऊंचा रहेगा।"

"बहुत बड़ा है..." कुछ सोचते हुए बच्चे ने कहा। "लेकिन रोबिन—यह तो बस इतना-सा ही होता है।" और उसने अपनी जुड़ी हुई हथेलियों को थोड़ा-सा अलग कर दिया।

"हां, रोबिन ऐसा ही होता है। लेकिन बड़े पक्षी इतना अच्छा नहीं गा पाते, जितना अच्छा ये छोटे पक्षी गाते हैं। रोबिन सदा इस बात का प्रयत्न करता है कि सभी उसके गानों की सराहना करें। सारस एक गम्भीर पक्षी है। वह अपने घोंसले में एक टांग पर खड़ा हो जाता है, अपने चारों ओर एक सरसरी निगाह डालता है—वैसे ही जैसे कोई सख़्त मालिक अपने नौकरों को घूरता है—और जितने ज़ोर से उसका मन होता है चिचियाता है। उसे इसकी रत्ती भर परवाह नहीं कि उसकी आवाज़ कितनी भोंडी है और लोग उसे सुन सकते हैं।"

बच्चा इन वर्णनों को सुनकर हंस पड़ता और अपनी माता की कहानियां समझने के प्रयास में पैदा हुई व्यग्रता एवं व्याकुलता भूल जाता। लेकिन फिर भी मां की ही कहानियां उसे अपनी ओर अधिक आकृष्ट करती थीं और इसी लिए वह अपनी जिज्ञासा की शान्ति के निमित्त सदा मां की ओर उन्मुख होता, न कि मामा की ओर।

दूसरा अध्याय

१

बच्चे का ज्ञान बढ़ने लगा। उसकी अति प्रखर श्रवणशक्ति उसके समक्ष प्रकृति की अधिकाधिक निधियां खोलती गयी। किन्तु उसके चारों ओर हमेशा की तरह एक गहन, अभेद्य अन्धकार व्याप्त था। यह अंधकार उसके मस्तिष्क पर एक घोर घटा की भांति छा गया था।

यद्यपि यह अंधकार उसपर जन्म लेते ही छा गया था और यद्यपि प्रत्यक्षतः बालक को इसका आदी हो जाना चाहिए था, परंतु बाल-मानस किसी अन्तःप्रेरणावश निरंतर इस कालिमा से मुक्त होने को प्रयत्नरत रहता था। अज्ञात प्रकाश की ओर बाल-मन के ये अचेतन आवेग, जो एक क्षण के लिए भी नहीं रुकते थे, उसके मुख पर अस्पष्ट व्यथित प्रयास के भाव नित नयी गहराई से अंकित कर रहे थे।

फिर भी उसे स्वच्छन्द रूप से हंसने-खेलने के अवसर मिल जाया करते थे। ऐसे अवसरों पर उसका मुखमंडल खिल उठता, विशेष रूप से उस समय जब बाह्य संसार की कोई शक्तिशाली इन्द्रिय-गम्य छाप उसे अदृष्ट संसार के बारे में कोई नया ज्ञान देती। अब मनोरम छटाओं से परिपूर्ण प्रकृति अन्धे बच्चे के लिए केवल रहस्य की वस्तु ही नहीं रह गयी थी।

एक दिन बालक को नदी किनारे एक ऊंचे टीले पर ले जाया गया। टीले के ऊपर बिल्कुल किनारे पर खड़े होकर वह बड़े ध्यान से पैरों के नीचे कहीं दूर बहती नदी की हल्की-हल्की छप-छप सुनता रहा। उसके चेहरे पर एक नया अद्भुत भाव था। उसके पैरों तले से फिसलकर नीचे लुढ़कते कंकड़ों की आवाज सुनकर वह सहम जाता और मां का पल्ला कसकर पकड़ लेता। तब से वह गहराई की कल्पना ऊंचे टीले के नीचे बहती नदी की हल्की कलकल अथवा नीचे लुढ़कते कंकड़ों की सहमी-सी सरसराहट के रूप में करता।

दूरी का अनुभव उसे किसी गाने की धीरे-धीरे विलीन होती हुई ध्वनि से होता। जब वसन्तकालीन बादलों की गरज अपनी गूंज से आकाश को भरने लगती और फिर अन्त में धमाके के साथ बादलों के पीछे विलीन हो जाती, तो अन्धा बच्चा सहमा-सा उसे सुनता और श्रद्धावनत खड़ा रह जाता। उसका हृदय उमंगित हो उठता और कल्पना में निस्सीम गगन के प्रसार की अनुभूति जन्म लेती।

ध्वनि ही उसके लिए वह माध्यम थी, जिसके द्वारा वह बाहरी दुनिया को कुछ-कुछ समझ सकता था। अन्य इन्द्रियों के माध्यम से उसपर जो छापें पड़तीं, वे उसकी ध्वनि-छापों की ही पूरक होतीं। इन्हीं छापों के कारण उसकी कल्पना के समक्ष उसके विचार मूर्तिमान होते।

कभी-कभी गर्म दोपहरी में जब चारों ओर सब कुछ मौन हो जाता, जब लोगों की भाग-दौड़ ठंडी पड़ जाती और प्रकृति में वह असाधारण

निस्तब्धता छा जाती, जिसमें केवल जीवन-शक्ति की निरंतर, नीरव का ही आभास होता है, अंधे बालक के चेहरे पर एक अनोखी आभा जाती। ऐसा लगता मानो बाह्य नीरवता के प्रभाव से उसके अन्तस् की गहराइयों में से कुछ ध्वनियां उठ रही हैं, जो केवल उसी को सुबोध हैं और वह तनावभरी एकाग्रता में उन्हें सुन रहा है। ऐसे क्षणों में उसे देखकर यह विचार आता कि उसके मस्तिष्क में जन्म ले रहा कोई धुंधला भाव उसके हृदय में गीत की अस्पष्ट लय-सा ध्वनित हो रहा है।

२

वह पांचवें साल में था—दुबला-पतला, कृशकाय। परन्तु घर के भीतर कमरों में आज़ादी के साथ न केवल चल-फिर लेता था, अपितु भाग-दौड़ भी सकता था। अगर कोई अपरिचित व्यक्ति यह देखता कि वह कितने विश्वास के साथ चलता-फिरता है—जब कभी आवश्यकता होती है मुड़ जाता है और जिस वस्तु की भी आवश्यकता होती है, उसे सहज ही ढूंढ़ लेता है, तो वह सोच भी नहीं सकता था कि यह बालक अंधा है वह इतना भर सोच सकता था कि यह विचित्र एकाग्र-चित्त बालक है जिसकी चिंतामग्न आंखें कहीं दूर लगी रहती हैं। लेकिन बाहर घूमना फिरना आसान न था। वहां वह छड़ी के सहारे चलता और प्रत्येक क़दम रखने के पूर्व ज़मीन को अच्छी तरह टोह लेता। जब उसके पास छड़ी न होती, तो हाथों और पैरों के बल रेंगता और रास्ते में जो भी चीज़ पड़ जाती, उसे जल्दी-जल्दी अपनी उंगलियों से टटोलता।

३

ग्रीष्मकालीन नीरव शाम थी। मामा मक्सिम बाग़ में बैठे हुए थे। बच्चे के पिता हमेशा की तरह दूर के किसी खेत में गये थे। हर चीज़ शान्त थी। गांव के घरों में लोग सोने की तैयारी कर रहे थे। नौकरों की कोठरियों की ध्वनियां शान्त हो चुकी थीं। बच्चा आधा घंटा पहले ही सोने चला गया था।

वह अभी अर्द्ध-निद्रा में ही था। पिछले कुछ दिनों से इस नीरव शाम के विचार मात्र ने उसके मस्तिष्क में विचित्र स्मृतियां भर

दी थीं। हां, वह काले पड़ते हुए आसमान अथवा ताराच्छादित गगन की पृष्ठभूमि में हिलते-डुलते वृक्षों की फुनगियों, खलिहानों तथा अस्तबल की टेढ़ी-मेढ़ी ग्रोलतियों के नीचे की परछाइयों, पृथ्वी पर पड़नेवाली नीली कालिमा अथवा स्वर्णिम ज्योत्स्ना और सितारों के झिलमिलाते प्रकाश को अवश्य न देख पाता, फिर भी हर रात वह मन्त्रमुग्ध-सा होकर सोने जाता और जब प्रातःकाल उठता, तो अपनी अनुभूतियां व्यक्त करने में असमर्थ रहता।

यह मन्त्रमुग्धता उस समय आती, जब निद्रा उसकी चेतना को अभिभूत करने लगती, जब खिड़की के पास लगे हुए बीच-वृक्षों की मर्मर एकदम धीमी हो जाती और वह दूर से आती हुई गांव के कुत्तों की भों-भों, नदी के उस पार से बुलबुल की चहक, चरागाह में चर रहे घोड़े के बच्चे के गले में बंधी हुई घंटियों की एकरस टुनटुन में भेद न कर पाता और जब सारी ध्वनियां एकरूप और फिर विलीन होने लगतीं। उसे ऐसा लगता कि ये सब ध्वनियां एक कोमल स्वरलहरी में बंधी खिड़की में से उड़ती चली आ रही हैं और उसके हृदय को अस्पष्ट, किन्तु अति सुखद कल्पनाओं से भरती हुई उसके बिस्तर पर मंडरा रही हैं। जब सुबह होती, तो वह प्रसन्नचित्त उठता और बड़ी उत्सुकता से मां से पूछने लगता :

"कल रात क्या था? क्या हुआ था मां?"

मां नहीं जानती थी कि बात क्या है और सोचती कि बच्चा शायद स्वप्नों से व्यथित है। रोज़ रात को वह खुद बच्चे को बिस्तर में लिटाती, यत्न से क्रॉस का चिह्न बनाती और जब उसे नींद आने लगती, तभी वहां से जाती। उसका ध्यान असाधारण प्रतीत होनेवाली किसी बात पर कभी नहीं गया। फिर भी बच्चा प्रातःकाल कहता कि पिछली रात उसे कितना सुखद अनुभव हुआ था।

"वह कितना अच्छा था, कितना मधुर! वह क्या था, मां?"

इस रात मां ने निश्चय किया कि वह बच्चे के कमरे में अधिक देर तक रहेगी और हर बात पर निगाह रखेगी। शायद उसे इस पहेली का कोई हल मिल जाये। वह पलंग के पास कुर्सी पर बैठी थी और अपने पेत्रूस* की हल्की-हल्की सांसें सुनती बुनाई कर रही थी। लगता था कि

*प्योत्र नामवाले को प्यार में पेत्रूस, पेत्या, पेत्रिक या पेत्रो बुलाते हैं। – अनु०

बच्चा गहरी नींद में सो गया है। पर तभी एकाएक अंधेरे में उसकी धीमी सी आवाज़ सुनाई दी :

"मां, तुम यहीं हो?"

"हां, हां, मेरे बच्चे..."

"चली जाओ। वह तुमसे डरता है और अभी तक वह नहीं आया। मैं तो सो ही गया था, पर वह आता ही नहीं..."

बच्चे की यह नींदभरी फुसफुसाहट सुनकर आश्चर्यचकित मां को विचित्र-सी अनुभूति हुई... वह अपनी कल्पनाओं के बारे में इतने विश्वास के साथ बातें कर रहा था मानो किसी सच्ची एवं वास्तविक बात के बारे मे कह रहा हो। वह उठी, उसे चूमने के लिए पलंग पर झुकी और फिर चुपके से कमरे के बाहर चली गयी। उसने बाग़ की ओर से चुपके-चुपके खुली खिड़की के पास जाने का निश्चय किया।

वह बाग़ से होकर आ ही रही थी कि उसके समक्ष रहस्य का उद्घाटन हो गया। अस्तबल की ओर से एक देहाती बांसुरी से निकलती हुई कोमल एवं मधुर धुन उसके कानों में पड़ी। यह एक सीधी-सादी सुरीली तान थी, जो रात्रि की कोमल ध्वनियों से एकाकार होकर वातावरण में मादकता बिखेर रही थी। वह समझ गयी, सरल धुन की ये तरंगें ही निद्रा की इस सुंदर वेला में बच्चे के मानस में सुखद स्मृतियों का सृजन करती थीं।

वह स्वयं भी रुक गयी और उक्राइनी गीत की मनोहर धुन को सुनती क्षण भर को खड़ी रही और फिर बिल्कुल शांत हृदय से बाग़ की अंधेरी वीथिका में मामा मक्सिम के पास चली गयी।

"इयोखिम कितना अच्छा बजाता है," उसने सोचा, "आश्चर्य है कि देखने में इतने रूखे इस 'चाकर' में इतनी कोमल अनुभूतियां हैं।"

४

हां, इयोखिम सचमुच बहुत खूब बजाता था। जटिल बेला भी उसके लिए हंसी का खेल था। एक समय वह भी था जब रविवारों को सराय में कज़्ज़ाक नृत्य की धुन अथवा पोलिश क्राकोव्याक बजानेवाला उससे अच्छा कोई दूसरा व्यक्ति था ही नहीं। जब वह वहां एक कोने में अपनी बेंच पर बैठकर साफ़ ठुड्डी के नीचे अपना बेला साधता और भेड़ की खाल-

वाले लम्बे टोप को डब पर खिसकाकर बाजे के कसे हुए तारों पर तिरछा गज लगाता, तो सराय में विरला ही कोई अपनी जगह बैठा रह सकता। बाजे पर इयोखिम की संगत करनेवाला बूढ़ा काना यहूदी भी एकदम मस्त हो उठता। उसके कंधों में हरकत होने लगती, उसका खल्वाट सिर और उसकी काली टोपी इधर-उधर हिलने-डुलने लगती, उसकी सम्पूर्ण कृश काया उस मोहक धुन की लय और गति के साथ झूमने लगती और बेले की द्रुत कोमल गत का साथ देने के लिए उसका बेढब "बाजा" (कोंट्राबास) मन्द्र स्वर निकालने के प्रयत्न में फटता-सा लगता। फिर उन लोगों की तो बात ही क्या, जिनके पैर नृत्य-संगीत का प्रथम आभास पाकर ही थिरक उठते हैं?

परन्तु जब से इयोखिम का दिल पड़ोसी जागीर की नौकरानी मार्या पर आ गया था, उसे अपने बेले से कुछ चिढ़ हो आयी थी। हां, यह सच है कि बेले ने मार्या के हृदय पर विजय प्राप्त करने में उसकी कोई सहायता न की थी और मार्या ने उक्राइनी संगीतकार के मुच्छड़ सूरत की जगह साहब के जर्मन सेवक का चिकना-चुपड़ा चेहरा अधिक पसन्द किया था। और तब से फिर सराय में अथवा युवकों के सायंकालीन समारोहों पर उसके बेले की आवाज नहीं सुनाई पड़ी। उसने बेले को अस्तबल में एक खूंटी पर टांग दिया और यह देखकर भी न देखता कि हवा की नमी और उपेक्षा से उसके प्यारे बाजे के तार एक के बाद एक टूटते जा रहे थे। टूटते तारों में से आखिरी झंकार इतनी ऊंची और इतनी दर्दनाक निकलती कि घोड़े भी सहानुभूति से हिनहिना उठते और आश्चर्यचकित होकर मालिक की ओर देखने लगते—इतनी बेरहमी क्यों?

बेले की जगह इयोखिम ने गांव से होकर गुजरनेवाले एक कार्पेथियन पर्वतवासी से लकड़ी की बांसुरी ले ली। जाहिर है, उसका विचार था कि बांसुरी की मीठी कोमल तरंगें उसके दुर्भाग्य का अच्छा साथ दे सकेंगी और उसके टूटे दिल के दर्द को कह पायेंगी। किन्तु पहाड़ी बांसुरी उसकी आशाओं पर पूरी न उतरी। उसने एक के बाद एक दसियों बांसुरियां लीं और उन्हें अधिक से अधिक सुरीला बनाने के यथासम्भव प्रयत्न किये—छीला, काटा, पानी में भिगोया, धूप में सुखाया और हवा में टांगा। मगर किसी से भी कोई लाभ न हुआ। ये पहाड़ी बांसुरियां उसके उक्राइनी

हृदय की उदासी व्यक्त करने में असमर्थ थीं। भाव कुछ होते धुन कु
निकलती, उंगलियां कहीं पड़तीं सुर कुछ निकलते। इयोखिम की मानसि
स्थिति के अनुरूप सुर पैदा करने में ये बांसुरियां सर्वथा असफल रहीं
अंत में वह सभी घुमक्कड़ पहाड़ियों पर नाराज हो गया। उसे अब पक्
विश्वास हो गया था कि कोई भी पहाड़ी अच्छी बांसुरी नहीं बना सक
है। और उसने स्वयं अपने हाथों से बांसुरी बनाने का फ़ैसला किया। लगात
कई-कई दिनों तक भौंहों में बल डाले इयोखिम खेतों और दलदलों
ख़ाक छानता रहा। बेंद की प्रत्येक झाड़ी के पास वह कुछ देर तक रुक
और उसकी शाखाओं की छानबीन करता। इधर-उधर से वह दो ए
शाखाएं काट लेता, परन्तु सन्तोष उसे किसी से भी न होता। उसव
भौंहों में पहले की ही तरह बल पड़े हुए थे और वह आगे और दूर
तक तलाश करता गया। अन्ततः वह एक स्थान पर पहुंचा, जहां शा
सरिता मंद-मंद बह रही थी। कुमुदिनियां अपना समस्त श्वेत सौन्दर्य लि
हुए जल के साथ अठखेलियां कर रही थीं। बेंद की घ
झाड़ियां बयार को यहां तक पहुंचने नहीं दे रही थीं।
गहरे, शांत जल पर विचारमग्न झुकी खड़ी थीं। इयोखिम झाड़ियों में
रास्ता बनाता हुआ नदी तट तक पहुंचा और अपने चारों ओर देखत
हुआ कुछ देर वहीं खड़ा रहा। और सहसा वह आश्वस्त हो गया कि
जिस चीज़ की उसे तलाश है, वह उसे यहीं मिलेगी। उसके माथे प
पड़ी सिलवटें ग़ायब हो गयीं। उसने पेटी से बंधे बंद चाक़ू क
निकाला, मंद-मंद मरमराती बेंद की झाड़ियों पर बड़े ध्यान से एक नज़र
डाली और दृढ़ निश्चय के साथ क़दम उठाता हुआ ढलान के ऊपर झूल
रही एक सीधी, पतली टहनी के पास चला गया। जाने क्यों उसने ठक
से उसपर उंगली मारी और बड़े संतोष के साथ देखा कैसे वह हवा
में झूलने लगी, उसकी पत्तियों की सरसराहट सुनी और सिर हिला
दिया।

"यह रहा वह," इयोखिम के मुंह से ये शब्द निकले। और उसने
पहले काटी हुई सारी शाखाएं नदी में फेंक दीं। वह प्रसन्न था, बहुत प्रसन्न।

अब जो बांसुरी बनी, वह अद्भुत थी। उसने सर्वप्रथम बेंद की शाख
सुखायी, फिर जलते हुए लाल-लाल तार से उसके अन्तस् को भेदा,
जलाया, उसमें छः गोल सुराख़ किये, सातवां वक्र किया, एक सिरे को

लकड़ी लगाकर इस प्रकार बन्द किया कि एक महीन-सा रन्ध्र रह गया। फिर बांसुरी घर के बाहर लटका दी और वह पूरे एक सप्ताह तक धूप में सूखती और सरसराती वायु का स्पर्श पाकर ठंडी होती रही। फिर उसे उतारा, चाक़ू से छीलछाल कर मांजा, शीशे से चिकना किया और एक ऊनी चियड़े की सहायता से चमकीला बनाया। उसने ऊपरी हिस्से को गोल और निचले को नक़्क़ाशीदार बनाकर बांसुरी को एक सुन्दर स्वरूप दिया। उसने शीघ्रता से एकाध गत बजाकर देखी और भाव-विभोर होकर सिर हिला दिया और खखार दिया। फिर बांसुरी अपने पलंग के पास एक कोने में टिका दी। वह दिन की दौड़-धूप में अपनी बांसुरी का पहला अनुभव नहीं करना चाहता था। पर हां, उसी दिन सायंकाल अस्तबल में से कोमल, स्वप्निल, कंपित, झंकारमय स्वर-लहरी बह निकली। इयोख़िम अपनी बांसुरी से पूर्णतः संतुष्ट था। बांसुरी से जो धुन निकलती, वह ऐसी लगती मानो स्वयं उसकी अनुभूतियों का ही साकार रूप हो। उसका संगीत उसके अपने करुण हृदय का गान होता और उसकी सुरीली तान, उसकी मधुर धुन और हवा में फैलती हुई उसकी स्वर-लहरियां रात्रि के वातावरण में जान डाल देतीं।

५

अब इयोख़िम को बस अपनी बांसुरी से प्यार था। वह उसके साथ अपना मधु-मास मना रहा था। दिन भर वह हमेशा की तरह अपना काम करता—घोड़ों को पानी पिलाने ले जाता, नहलाता-धुलाता, तैयार करता, उनपर ज़ीन और साज कसता और फिर उन्हें पानी पोपेल्स्काया या मामा मक्सिम की सवारी के लिए बाहर निकालता। और जब कभी पड़ोस के उस गांव की ओर देखता, जहां निर्दय मार्या रहती थी, तो उसका दिल भारी हो उठता। परन्तु जब शाम आती, तो वह सारी दुनिया को भूल जाता और यहां तक कि उसके मस्तिष्क में काली भौंहों वाली उस लड़की की छवि पर भी कुहासा-सा छाता लगता। उसके हृदय में उस लड़की का मूर्त रूप, जो उसके लिए वेदनामय था, धुंधला पड़ जाता। उसके विचारों में एक अस्पष्ट-सा रूप उभर आता, जो उसकी अनोखी बांसुरी की धुनों में खोयी-खोयी उदासी भर देता।

उस दिन संध्या समय ऐसे ही संगीत के रस में डूबा बांसुरी की लहराती धुनों में भावोद्‌गार करता इयोखिम अस्तबल में लेटा हुआ था। वह भूल गया था सौन्दर्य की उस प्रतिमा को, जिसका हृदय कठोर था, और भूल गया था स्वयं अपने अस्तित्व को और अपने आपको। सहसा वह उछला और बिस्तर पर बैठ गया। संगीत का माधुर्य अपनी चरम सीमा पर पहुंचा ही था कि एक छोटे-से हाथ ने हल्की-हल्की उंगलियों से उसके चेहरे को छुआ, फिर उसके हाथों पर से फिसलता हुआ जल्दी-जल्दी बांसुरी को टटोलने लगा। साथ ही उसने पास ही में किसी की तेजी से आती-जाती सांसों की आवाज़ सुनी।

"भस्म हो जा, नष्ट हो जा!" उसके मुंह से टोटके के ये शब्द निकले और साथ ही यह जानने के लिए कि उसका वास्ता भूत-प्रेतों से तो नहीं उसने पूछ लिया: "भगवान का या शैतान का?"

किन्तु तभी अस्तबल के खुले हुए द्वार से भीतर खिसक आयी चांदनी ने उसे उसकी ग़लती का अहसास कराया। उसके पलंग के पास उत्सुकता के साथ अपने दोनों हाथ फैलाये ज़मींदार परिवार का अन्धा बच्चा खड़ा था।

इधर लगभग एक घंटे के पश्चात् जब मां कमरे में यह देखने आयी कि पेत्रूस सो रहा है या नहीं, तो उसने पलंग ख़ाली पाया। एक क्षण के लिए वह घबड़ा-सी गयी, परन्तु फिर शीघ्र ही उसके मातृ-हृदय ने उसे बता दिया कि खोये बच्चे को कहां ढूंढ़ना चाहिए। इयोखिम ज़रा सांस लेने के लिए रुका और अचानक यह देखकर एकदम सकपका गया कि उसकी मालकिन अस्तबल की दहलीज़ पर खड़ी है। लगता था, वह यहां कुछेक मिनटों से खड़ी-खड़ी उसे बांसुरी बजाता सुन रही थी और अपने बेटे को देख रही थी, जो इयोखिम के भेड़ की खाल के कोट में लिपटा खाट पर बैठा था और अभी भी मंत्र-मुग्ध-सा बीच ही में रुक गये गीत को सुन रहा था।

६

उस दिन के बाद से पेत्रूस रोज सायंकाल अस्तबल आने लगा। उसके दिमाग़ में यह बात आयी ही नहीं कि वह इयोखिम से दिन में बांसुरी बजाने के लिए कहे। लगता था कि उसकी कल्पना में दिन की चहल-पहल में

इन कोमल धुनों का अस्तित्व असंभव था। किन्तु पृथ्वी पर संध्या उतरते ही पेत्रूस विह्वल और अधीर हो उठता। चाय और रात्रि का भोजन केवल इसी लिए महत्व के रह गये थे कि वे उसे अभिलषित घड़ी की निकटता का संकेत देते थे। और यद्यपि मां को ये संगीत-बैठकें न भाती थीं, फिर भी वह अपने लाल को बंसुरिये के पास भागने और वहां अस्तबल में सोने से पहले दो-एक घंटे बिताने से मना न कर सकती थी। बच्चे के लिए ये ही कुछ घंटे सबसे अधिक प्रसन्नता और उल्लास के थे। मां का दिल यह देख कर जलता कि शाम के समय बच्चे पर जो छापें अंकित होती हैं, वे अगले दिन तक बराबर बनी रहती हैं; कि उसका लाड़-प्यार भी अब बच्चे के लिए पहले की तरह एकमात्र सुख का स्रोत नहीं रह गया है और वह उसकी गोद में बैठा उसकी छाती से लगकर खोया-खोया-सा इयोखिम के कल के गीत को याद करता रहता है।

तब मां को स्वयं अपने संगीत-ज्ञान की भी याद हो आयी। आखिर थोड़े वर्ष पहले ही तो वह बोर्डिंग स्कूल की पढ़ाई पूरी करने के लिए कीयेव में पानी रदेत्स्काया की संस्था में दाखिल हुई थी। वहां अन्य "ललित कलाओं" के साथ ही साथ उसे पियानो बजाना भी सिखाया गया था। यह ठीक है कि यह स्मृति बड़ी सुखद न थी, क्योंकि इसके साथ ही साथ उसकी कल्पना के समक्ष उसकी जर्मन संगीत-अध्यापिका क्लाप्स की भी स्मृतियां मूर्त्तिमान हो उठती थीं। यह अध्यापिका ढलती उम्र की अत्यधिक कृशकाय, अत्यधिक नीरस और अत्यधिक चिड़चिड़ी थी। यह कटु स्वभाववाली कुमारी अपनी छात्राओं की उंगलियां मोड़ने और उन्हें लोचदार बनाने में बड़ी पटु थी। हां, इसके साथ-साथ अपनी छात्राओं में संगीत-प्रेम की हत्या भी वह बड़ी सफलता के साथ करती थी। कुमारी क्लाप्स के शिक्षण के तौर-तरीक़ों की तो बात ही क्या उसके दर्शन मात्र से ही संगीत-प्रेम का भाव हिरन हो जाता था। यही कारण था कि स्कूल छोड़ने के पश्चात् युवती आन्ना मिखाइलोव्ना यात्सेन्को को पियानो बजाने में जरा भी रुचि न रही। विवाह हो जाने के बाद भी उसके इस गुण में कोई परिवर्तन न हुआ। किन्तु अब इस सीधे-सादे उक्राइनी किसान की बांसुरी की धुन सुनकर बढ़ती हुई ईर्ष्या के साथ ही साथ उसके हृदय में स्वर-माधुर्य की भी एक नयी अनुभूति जन्म ले रही थी और वह अपनी जर्मन अध्यापिका को याद भूलती जा रही थी। इस प्रक्रिया

का फल यह हुआ कि एक दिन पानी पोपेल्स्काया ने अपने पति से एक पियानो खरीदने की इच्छा प्रकट की।

"प्यारी, जैसा तुम चाहो," आदर्श पति ने जवाब दिया, "मैं तो समझता था कि तुम्हें संगीत में कोई खास दिलचस्पी नहीं।"

पियानो के लिए आदेश तो उसी दिन दे दिया गया, परन्तु उसे खरीदने तथा शहर से घर तक लाने में कम से कम दो-तीन हफ़्ते तो लगने ही थे।

इस बीच प्रति दिन सायंकाल बांसुरी की धुन सुनाई देती और बच्चा अब मां से पूछे बिना ही अस्तबल की तरफ़ दौड़ा चला जाता।

अस्तबल की अपनी विशेष गंध, सूखी घास की सुगंध और चमड़े की जीन की तीखी बू—ये सब घुल-मिल जातीं। घोड़े अपनी नांद में पड़ी घास में मुंह डाल देते और तब घास की भी सरसराहट कानों में पड़ती। जब एक दो क्षणों के लिए बांसुरी की आवाज रुक जाती, तो बाग में से बीच-वृक्षों की मर्मर स्पष्ट सुनाई पड़ती। पेत्रिक मंत्र-मुग्ध संगीत-रस का पान करता हुआ वहां निश्चल बैठा रहता।

वह कभी संगीत के प्रवाह में बाधा न डालता। किन्तु जब कभी धुन रुक जाती और खामोशी में दो-तीन मिनट बीत जाते, तो बालक का मूक मोह भंग हो जाता और उसपर विचित्र-सी अधीरता छा जाती। वह बांसुरी लेने के लिए अपने हाथ फैला देता और कांपती हुई उंगलियों से उसे अपने होंठों पर रख लेता। लेकिन उद्वेगवश उसकी सांस इतनी क्षीण निकलती कि पहले पहल तो वह केवल हलकी और थरथराती ध्वनियां ही पैदा कर पाता। बाद में धीरे-धीरे उसका इस सीधे-सादे वाद्य पर अधिकार होने लगा। इयोखिम उसकी उंगलियां रन्ध्रों पर रखता और यद्यपि बच्चे की छोटी-छोटी उंगलियां उनपर ठीक-ठीक न पड़तीं, फिर भी उसे शीघ्र ही सरगम की ध्वनियों का ज्ञान हो गया। यही नहीं, उसके लिए प्रत्येक सुर अपना अलग-अलग स्वरूप और अलग-अलग प्रकृति रखता था। और वह जानता था कि कौनसा सुर कौनसे रन्ध्र में रहता है और कहां से उसे निकालना चाहिए। और जब कभी इयोखिम कोई सरल-सी धुन बजाता, तो बच्चे की उंगलियां भी चलने लगतीं। अब उसे बांसुरी के सुरों, उनकी स्थिति और उनकी क्रमबद्धता का स्पष्ट ज्ञान हो चुका था।

अंततः ठीक तीन सप्ताह बाद शहर से पियानो ले आये। पेत्या आंगन में खड़ा ध्यान से सुन रहा था कैसे मजदूर उसे कमरे में ले जाने की तैयारी कर रहे हैं। जरूर, यह "आयात किया गया संगीत" काफ़ी भारी होगा, क्योंकि जब उसे उठाने लगे, तो गाड़ी चरमरा रही थी और लोग कांख रहे थे और गहरी सांस ले रहे थे। और फिर वे लोग सधे हुए भारी-भारी क़दम रखते हुए घर की तरफ़ बढ़ चले। प्रत्येक क़दम के साथ उनके सिरों के ऊपर कुछ गूंजता, भुनभुनाता और झनझनाता। जब इस विचित्र "संगीत" को बैठक में रख रहे थे, तो एक बार फिर उसमें से वह गहरी, अस्थिर और भनभनाती-सी आवाज आयी, जिसे सुनकर ऐसा लगता था जैसे वह क्रोध में आकर किसी को धमकी दे रहा हो।

इस सबसे बच्चे के दिल में डर का सा भाव उठने लगा और उसे इस नये मेहमान से, जो बेजान होते हुए भी चिड़चिड़ा था, नफ़रत-सी होने लगी। वह बाग़ में चला गया। वहां उसे उन मजदूरों की खटखट नहीं सुनाई दी, जो बाजे को बैठक में बिठा रहे थे और न उस सुर मिलानेवाले की ही टुन-टुन उसके कानों में पड़ी, जो शहर से इसीलिए बुलाया गया था कि वह बाजे की कुंजिकाओं और तारों में ताल-मेल बिठा दे। जब सब कुछ ठीक हो गया, तो मां ने बच्चे को बुला भेजा।

वियना के श्रेष्ठ कारीगर द्वारा निर्मित वाद्य से हथियारबंद होकर मां अभी से मन ही मन सीधी-सादी गंवारू बांसुरी पर विजय मना रही थी। उसे दृढ़ विश्वास था कि अब उसका पेत्या अस्तबल और बंसुरिये को भूल जायेगा और उसकी खुशियों का एकमात्र स्रोत वह होगी। आंखों में मुस्कराहट लिये मां ने मामा मक्सिम के साथ बच्चे को कमरे में प्रवेश करते देखा और प्रसन्नतापूर्वक इयोखिम की तरफ़ भी एक निगाह डाली। इयोखिम ने आकर "विदेशी संगीत" सुनने की अनुमति पहले ही प्राप्त कर ली थी। अब वह दरवाजे पर खड़ा था। उसकी आंखें फ़र्श पर लगी थीं और गेसू लटके हुए थे। जब मामा मक्सिम और बच्चा "संगीत" सुनने के लिए बैठ गये, तो सहसा मां ने पियानो की कुंजिकाओं पर जोर से अपना हाथ रखा।

वह एक संगीत-रचना बजा रही थी, जिसका उसने पानी रदेत्स्काया के बोर्डिंग स्कूल में कुमारी क्लाप्स के निर्देशन में अच्छा-खासा अभ्यास किया था। यह एक अत्यधिक सरस, किंतु काफ़ी जटिल रचना थी और इसके लिए वादक की उंगलियों में लचक बहुत आवश्यक थी। स्कूल की अन्तिम परीक्षा के समय उसने इस मुश्किल रचना को बजाया था और लोगों ने उसकी तथा उसकी शिक्षिका की बड़ी सराहना की थी। यद्यपि विश्वास के साथ तो कोई कुछ न कह सकता था, फिर भी बहुतों का अनुमान था कि पानी यात्सेन्को ने शान्त प्रकृतिवाले पान पोपेल्स्की को उन्हीं पन्द्रह मिनटों में वशीभूत किया था, जिनमें उन्होंने वह जटिल संगीत-रचना बजायी थी। आज यह युवा नारी एक दूसरी विजय की आशा में जान-बूझ कर यह रचना बजा रही थी: वह गंवारू बांसुरी से मोहित अपने पुत्र के नन्हे-से दिल को अपनी ओर आकर्षित करना चाहती थी।

किंतु इस बार उसकी आशाओं पर पानी फिर गया। उक्राइनी बेंत की तुलना में पियानो न टिक सका। इसमें सन्देह नहीं कि पियानो की अपनी विशेषताएं थीं—क़ीमती लकड़ी, उत्तम तार, वियना के श्रेष्ठतम कारीगर की अद्भुत कारीगरी, विविध स्वरों की व्यवस्था। लेकिन उक्राइनी बांसुरी भी अकेली न थी—वह अपने घर में, अपनी माता—उक्राइनी प्रकृति से घिरी थी।

जब तक इयोख़िम ने उसे चाकू से काटकर लाल जलते हुए तारों से उसके अन्तस् को भेदा न था, तब तक वह उस छोटी-सी नदी के ऊपर लटकी लहरों से खेला करती थी, जिसे बच्चा जानता था और प्यार करता था। जब तक उक्राइनी वादक की तेज़ निगाहें नदी के ऊंचे-ऊंचे किनारे पर उगे हुए बेंत की झाड़ी पर न पड़ी थीं, तब तक बांसुरी को उसी उक्राइनी सूर्य ने गर्मी दी थी, जो बच्चे को भी उष्मा प्रदान करता था और उसी उक्राइनी हवा ने शीतलता दी थी। विदेशी बाजे के लिए उस साधारण-सी देहाती बांसुरी पर विजय पाना टेढ़ी खीर थी, क्योंकि यही वह बांसुरी थी, जिसकी ध्वनि ने शामों की रहस्यमयी फुसफुसाहटों, बीच-वृक्षों की मर्मर और उक्राइना के प्राकृतिक वैभव के बीच—जब निद्रा उसे अपनी गोद में लेने की तैयारी करने लगती—उसे पहले पहल मन्त्रमुग्ध किया था।

और पानी पोपेल्स्काया भी इयोखिम की प्रतिद्वन्द्विता न कर सकती थी। यह सही है कि उसकी बारीक उंगलियां इयोखिम की उंगलियों से तेज़ चलती थीं, उनमें लचक अधिक थी, पियानो पर बजायी गयी धुन अधिक जटिल और समृद्ध थी और स्वयं कुमारी क्लाप्स ने अपनी छात्रा को इस बाजे पर इतना अधिक अभ्यास कराया था कि वह उसमें पटुता प्राप्त कर चुकी थी, फिर भी बांसुरी का अपना माधुर्य था। और इयोखिम का संगीत के प्रति एक स्वाभाविक आकर्षण था। वह प्रेम भी करता था और उसे दुःख भी उठाने पड़ते थे और इन दोनों ही दशाओं में सान्त्वना पाने के लिए वह प्रकृति की ओर उन्मुख होता था। प्रकृति ने ही उसे उसकी सीधी-सादी धुनें सिखाई थीं—वन-वृक्षों की मर्मर, स्तेपी में उगी हुई घास की मंद-मंद सरसराहट और वह प्राचीन उदास गीत, जो वह पालने से ही सुनता आया था।

नहीं, साधारण-सी उक्राइनी बांसुरी पर विजय पाना वियना के पियानो के लिए आसान न था। मुश्किल से एक मिनट ही गुजरा होगा कि मामा मक्सिम ज़ोर-ज़ोर से अपनी बैसाखी ठकठकाने लगे। और जब आन्ना मिख़ाइलोव्ना ने उधर मुड़कर देखा, तो उसे पेत्रिक के पीले पड़े चेहरे पर जाने-पहचाने दर्दनाक भाव दिखाई दिये। वसंत की उस पहली सैर के दिन जब उसने बेटे को घास पर लेटा पाया था, उसके चेहरे पर ऐसे ही भाव थे।

इयोख़िम ने बच्चे पर एक करुण दृष्टि डाली और "जर्मन संगीत" पर एक तिरस्कारभरी नज़र फेंककर वह वहां से चला गया। बैठक के फ़र्श पर उसके बेढब जूते खट-खट कर रहे थे।

८

अपनी विफलता से मां को रुलाई आ गयी और शर्म भी। जिस "उदार पानी" पोपेल्स्काया के संगीत पर "सर्वोत्तम समाज" अपनी करतल-ध्वनि से सारे वातावरण को गुंजा देता था, उसी की इतनी निर्मम हार! और हार भी किससे? उस दो टके के साईस इयोखिम और उसकी सड़ियल बांसुरी से। अपने अभागे संगीत को समाप्त करने पर उसने

इयोखिम की आंखों में तिरस्कार के जो भाव देखे थे, उनके विचार मात्र से ही उसका चेहरा तमतमा उठा। वह अपने अन्तरतम से उस "नागवार चाकर" से घृणा करने लगी।

फिर भी हर शाम जब उसका छोटा बच्चा दौड़कर अस्तबल जाता, तो वह अपनी खिड़की खोलकर वहीं खड़ी हो जाती। पहले पहल तो वह बांसुरी की धुन क्रोधपूर्ण तिरस्कार के साथ सुनती और इस "भोंडी चीं-चीं" के केवल उपहासास्पद पहलू चुनने की कोशिश करती, मगर धीरे-धीरे यही बांसुरी उसका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करती गयी। वह स्वयं न जान सकी कि यह हुआ कैसे। और शीघ्र ही वह समय भी आ गया, जब वह बड़ी बेसब्री से स्वप्निल स्वर-माधुर्य का पान करने के लिए खड़े-खड़े घंटों बांसुरी की धुन सुना करती। और जब उसे इसका आभास हुआ, तो उसने अपने आप से पूछा कि आखिर वह कौनसी बात है, जो बांसुरी में ऐसा जादू पैदा करती है। धीरे-धीरे ग्रीष्मकालीन सायंकाल की नीलिमा, गोधूलि की झिलमिल परछाइयों तथा संगीत और प्रकृति के अद्भुत स्वर-साम्य में उसे इस प्रश्न का उत्तर मिल गया।

अब वह स्वयं पराजित थी, विजित थी। वह मन ही मन सोचती: "हां, इस संगीत में अवश्य ही कोई विशिष्ट सत्यानुभूति है ... मोहक काव्य है, जिसे कोरे अभ्यास से नहीं सीखा जा सकता।"

और यह सत्य था। इस संगीत का रहस्य उस आश्चर्यजनक बन्धन में छिपा था, जिसने अतीत की स्मृतियों को अतीत की साक्ष्य-प्रकृति से बांध रखा था, उस प्रकृति से, जो कभी मरती नहीं और संगीत के रूप में मनुष्य तक पहुंचते-पहुंचते जिसकी वाणी अवरुद्ध नहीं होती। और बेढब जूतों और घट्ठेदार हाथों वाला यह अक्खड़ किसान इस अद्भुत स्वर-साम्य को, प्रकृति की इस वास्तविक अनुभूति को अपने हृदय में संजोये था।

और पानी पोपेल्स्काया का अमीराना घमंड इस साईस-चाकर के समक्ष नत हो गया। अब वह भूल जाती उसके घटिया कपड़ों को और उसके शरीर से आती हुई तारकोल जैसी बदबू को। बांसुरी की मधुर लयों को सुनते समय उसकी कल्पना के समक्ष इयोखिम का सदय मुखमंडल, उसकी भूरी-भूरी विनीत आंखें और उसकी झुकी हुई मूंछों से छिपा सलज्ज हास्य साकार हो उठता। कभी-कभी ऐसे भी क्षण आ जाते, जब क्रोध से उसके गाल लाल हो

उठते, क्योंकि उसे इस बात की याद आ जाती कि अपने ही बच्चे की प्रसन्नता के लिए उसने एक मामूली किसान से होड़ लगायी है और इस प्रतिद्वन्द्विता में किसान की विजय हुई है।

उसके ऊपर वृक्षों की मर्मर होती, गहरे नीले आसमान में रात्रि जगमगाती और पृथ्वी पर नीली कालिमा फैला देती। और इसके साथ-साथ दिन प्रतिदिन इयोख़िम का संगीत युवा मां के हृदय में करुण रस का उद्रेक करता। दिन प्रतिदिन वह घुटने टेकती गयी और दिन प्रतिदिन उसके सीधे-सादे, निर्विकार एवं अकृत्रिम संगीत -सौन्दर्य का रहस्य हृदयंगम करती गयी।

९

हां, इयोख़िम किसान की अनुभूतियां सजीव और गहरी हैं। और उसकी? क्या इन अनुभूतियों का कोई अंश स्वयं उसे नहीं प्राप्त था? क्यों उसका हृदय भीतर ही भीतर इतना धधक रहा था, धड़क रहा था? क्यों वह अपने आंसू न रोक पाती थी?

क्या यह उसकी सच्ची अनुभूति न थी, अपने उस अभागे, अंधे बच्चे के प्रति प्रेम का ज्वलंत भाव न था, जो उससे भागकर इयोख़िम के पास चला जाता था और जिसे वह उसकी तरह हार्दिक ख़ुशी प्रदान नहीं कर सकती थी?

उसे याद आ जाती वेदना की वह भावना, जो उसके संगीत से बच्चे के मुख पर प्रकट हुई थी और उसकी आंखों से गर्म आंसू बह निकलते। समय-समय पर उसकी छाती से क्रंदन उठता और वह बड़ी कठिनाई से अपने आपको फूट-फूट कर रोने से रोक पाती।

अभागी मां! बच्चे का अंधापन उसकी अपनी अदम्य व्यथा बन गया। यही कारण था कि उसकी विनम्रता उसकी अस्वस्थता में बदल गयी। अब बच्चे की प्रत्येक पीड़ा उसके हृदय में अनेकानेक दुःखद कल्पनाओं को जन्म देकर उसके हृदय को व्यथित करने लगी। यही कारण था कि गंवारू बंसुरिये से उसकी यह विचित्र प्रतिद्वन्द्विता, जिससे किसी दूसरी को केवल खीज ही होती, उसके लिए तीव्र पीड़ा का स्रोत बन गयी थी।

दिन बीतते गये, लेकिन मां को शान्ति न मिली। हां, प्रत्येक दिन बीतने के साथ उसे अप्रत्यक्ष रूप से कुछ लाभ अवश्य हो रहा था। धीरे धीरे वह अपने में उसी संगीत, उसी मधुरिमा का अनुभव करने लगी जो इयोखिम के वादन से प्रस्फुटित होकर उसके अन्तस् पर छा रही थी। इस नयी अनुभूति के साथ ही साथ उसमें नयी आशा का भी संचार हुआ। कभी-कभी ऐसा भी होता कि किसी दिन शाम को बड़े आत्मविश्वास के साथ वह पियानो पर बैठती और यह निश्चय करती कि वह पियानो की गत से बांसुरी की ध्वनि दबा देगी। परन्तु हर बार भय तथा लज्जा की अनुभूति उसे इन प्रयत्नों से रोक देती। उसकी कल्पना के समक्ष अपने बच्चे का दुःखी चेहरा और इयोखिम की तिरस्कारपूर्ण दृष्टि साकार हो उठती, शर्म से उसके गाल अंधेरे में लाल हो उठते और हाथ किसी भयभीत आकांक्षा को लिये हुए मूक पियानो पर लहरा भर जाता ...

फिर भी जैसे-जैसे दिन बीतते गये उसमे अपनी आन्तरिक शक्ति की अनुभूति बढ़ती गयी। जब कभी बच्चा घूमने चला जाता अथवा बाग के किसी सुदूर कोने मे अकेला खेलता होता, तो वह पियानो पर अभ्यास करना आरम्भ कर देती। अपने प्रथम प्रयासों से उसे कोई सन्तोष न हुआ। उसके हाथ उसके हृदय की अनुभूतियों के अनुकूल न चलते और पियानो से जो ध्वनियां निकलतीं, वे उसकी मानसिक स्थिति के अनुरूप न होतीं। किंतु धीरे-धीरे उसके मन के भाव अधिक गहराई और सहजता के साथ ध्वनियो में व्यक्त होने लगे। किसान के सबक बेकार नहीं गये। मां के प्रेम और उसकी भावुक अनुभूति ने अभ्यास द्वारा इन पाठों में पटुता प्राप्त करने में उसकी बड़ी सहायता की। यह वह अनुभूति थी, जिसकी पृष्ठभूमि में मां यह समझ लेती थी कि उसके पुत्र को कौनसी वस्तु सबसे अधिक प्रिय है। अब उसकी उंगलियों से जटिल और उलझी हुई गतें न निकलतीं, अपितु सीधी-सादी मधुर उक्राइनी स्वर-लहरियां बह-बह कर बन्द कमरों में गूंजने लगतीं, जिनसे मां के हृदय में मृदुता बिखर जाती।

अन्ततः मां को खुली प्रतिद्वन्द्विता में भाग लेने का भी साहस हुआ। और अब सायंकाल को इधर बैठक से और उधर इयोखिम के अस्तबल से निकलनेवाली सुर-ध्वनियो में विचित्र होड़ लगने लगी। एक ओर घास-

फूस से आच्छादित छत वाले अस्तबल से आती हुई बांसुरी की कोमल धुन कानों में पड़ती, तो दूसरी ओर बैठक की खुली खिड़कियों से निकलती और चांदनी में लहराते हुए बीच-वृक्षों से होती हुई पियानो की लयबद्ध ध्वनियां। फिर समां बंध जाता।

पहले पहल न तो बच्चे ने ही जागीर से आते हुए उस "जटिल" संगीत की ओर कोई ध्यान दिया और न इयोखिम ने ही, क्योंकि दोनों ही उसके सख्त विरोधी थे। जब कभी इयोखिम बांसुरी बजाते-बजाते कुछ क्षण के लिए रुक जाता, तो बच्चे की त्योरियां चढ़ जातीं और वह बड़ी बेसब्री के साथ कहता:

"ऐ, बजा ना, बजा भी!"

इसके एक दो दिन बाद ही इयोखिम बजाते-बजाते अक्सर रुकने लगा। वह बार-बार अपनी बांसुरी रख देता और बैठक से आती हुई सुर-लहरी बड़े ध्यान से सुनने लगता। धीरे-धीरे बच्चा भी उधर कान देने लगा। अब वह अपने मित्र से बांसुरी बजाने की जिद्द न करता। और वह क्षण भी आ गया, जब इयोखिम ने साश्चर्य कहा:

"सुना सुने ... देखा, क्या चीज है यह ..."

और फिर बड़े ध्यान के साथ पियानो सुनते-सुनते इयोखिम ने बच्चे को उठा लिया और बाग़ से होता हुआ उसे बैठक की खिड़की तक ले गया।

इयोखिम ने सोचा था कि "उदार पानी" स्वयं अपने मन-बहलाव के लिए बजा रही है और उनकी ओर ध्यान नहीं दे रही है। किन्तु आन्ना मिखाइलोव्ना भी बीच-बीच में सुन रही थी कि कैसे उसकी प्रतिद्वन्द्विनी बांसुरी रह-रह कर चुप हो जाती है। वह देख रही थी कि उसकी विजय हुई है और उसका हृदय खुशी से नाच रहा था।

इयोखिम के विरुद्ध आन्ना मिखाइलोव्ना का सारा द्वेष इस विजय की खुशी में समाप्त हो गया। वह बड़ी प्रसन्न थी और अनुभव कर रही थी कि इस प्रसन्नता का एकमात्र कारण है इयोखिम, क्योंकि अप्रत्यक्षतः उसी ने उसे यह सिखाया था कि बच्चे को किस प्रकार वापस प्राप्त किया जा सकता है। यदि अब वह बच्चे को नये-नये प्रभावों की दौलत दे सकेगी, तो वे दोनों ही अपने शिक्षक, कृषक बांसुरीवाले को धन्यवाद देंगे।

मां का उद्देश्य सिद्ध हो गया था। अगले दिन बच्चे ने दबे-दबे कौतूहल के साथ धीरे-धीरे उस बैठक में प्रवेश किया, जहां वह नगर से आये उस विचित्र और जैसा कि उसे लगा था गुस्सैल अतिथि—पियानो—के बारे के बाद से कभी न गया था। किंतु इस अतिथि के कल के गीतों ने बच्चे की श्रुति को जो सुख पहुंचाया था, उससे अब वाद्य के प्रति उसकी भावनाएं बदल गयी थीं। हृदय में भय के अंतिम अवशेष लिये वह उस स्थान तक गया, जहां पियानो रखा था और थोड़ी दूरी पर रुककर ध्यानपूर्वक कुछ सुनने लगा। बैठक में और कोई न था। मां दूसरे कमरे में बैठी कढ़ाई कर रही थी और सांस रोके उसकी ओर देख रही थी। वह उसकी प्रत्येक गतिविधि, उसके भावुक चेहरे की मुद्रा में होनेवाले प्रत्येक परिवर्तन को आनंदमग्न सी देख रही थी।

जहां वह खड़ा था, वहीं से उसने अपना हाथ बढ़ाया और पियानो की चिकनी-चिकनी सतह छुई और फिर भयभीत-सा तुरन्त पीछे हट गया। दो-एक बार ऐसा करने के बाद वह थोड़ा आगे बढ़ा और ध्यानपूर्वक बाजे की जांच शुरू कर दी। उसने बाजे को चारों ओर से छू-छू कर टटोला और पायों की भी आजमाइश की। अन्ततः उसकी उंगलियों ने चिकनी सुर-कुंजिकाओं का स्पर्श किया।

हवा में तार का एक हल्का-सा कम्पित सुर गूंज गया। बच्चा काफ़ी देर तक इन कम्पनों को सुनता रहा, यद्यपि मां की श्रवणेंद्रियों के लिए वे कब के विलीन हो चुके थे। और फिर एकाग्र भाव से उसने दूसरी सुर-कुंजिका दबायी। इसके बाद उसका हाथ एक ओर से लेकर दूसरी ओर तक घूमा और एक नयी स्वर-लहरी पैदा हो गयी। वह प्रत्येक सुर-कुंजिका से पैदा होनेवाली ध्वनि बड़े ध्यान से पर्याप्त समय तक सुनता और वे एक के बाद एक हवा में लहरातीं, थरथरातीं और विलीन हो जातीं। उसके चेहरे पर न केवल गहरी अभिरुचि की ही अभिव्यक्ति थी, अपितु प्रसन्नता भी झलक रही थी। प्रत्यक्षतः वह प्रत्येक पृथक सुर का रस-पान कर रहा था और जिस तरह दत्तचित्त होकर वह भावी धुनों के अवयवों—तात्विक ध्वनियों को सुन रहा था, उसमें एक होनहार कलाकार के लक्षण स्पष्टतः प्रकट हो रहे थे।

किंतु इसके साथ ही लगता था कि अंधे बालक के लिए प्रत्येक ध्वनि में कुछ और विशेष गुण भी हैं: जब उसकी उंगलियों तले से हर्ष एवं उल्लासमय उच्च सुर निकलता, तो वह अपना उत्तेजित चेहरा ऊपर उठा लेता मानो इस हल्के झंकृत स्वर को आकाश में विलीन होते सुन रहा हो। इसके विपरीत जब पियानो से कोई मंद, गहरा, कंपित सुर निकलता, तो वह अपना सिर नीचे को झुका देता; उसे लगता था कि यह भारी सुर निश्चय ही पृथ्वी पर लुढ़कता हुआ चारों ओर बिखर जायेगा और दूर किन्हीं कोनों में खो जायेगा।

११

संगीत विषयक ये समस्त प्रयोग मामा मक्सिम की निगाह में कोई बड़े महत्व के न थे। और एक विचित्र बात यह थी कि बच्चे की रुचि ने, जो इतने स्पष्ट रूप से प्रकट हो गयी थी, बूढ़े अपंग के दिल में दोहरे भाव पैदा कर दिये थे। एक ओर संगीत में उसकी उत्कट रुचि निस्संदेह यह व्यक्त करती थी कि बच्चे में संगीत-प्रतिभा है और इस तरह उसके भविष्य का आंशिक समाधान करती थी। किंतु दूसरी ओर इस चेतना के साथ बूढ़े सिपाही के दिल में निराशा का धुंधला-सा भाव भी था।

मामा मक्सिम जानते थे कि संगीत एक महान शक्ति है। संगीत से ही अन्धा वादक विशाल जनसमूह के हृदय पर विजय पा सकेगा—उसके संगीत को सुनने के लिए सैकड़ों सुन्दरियां और अच्छी पोशाकें डाटे बांके-छबीले एकत्र होंगे, वह उनके समक्ष वाल्ट्स और नाकचूर्न्स संगीतों की तानें छेड़ेगा (सच्ची बात तो यह है कि मामा मक्सिम को इन "वाल्ट्सों" और "नाकचूर्न्स" के अलावा और कुछ मालूम ही न था) और श्रोता रूमालों से आंसू पोंछते दिखाई पड़ेंगे। लेकिन बेकार है यह सब! मामा मक्सिम ने बच्चे से इसकी आशा थोड़े ही कर रखी थी। परन्तु किया क्या जाये? लड़का अन्धा है। जिस चीज को वह [illegible] निभा सके, उसे वही करने दिया जाये। और अगर उसे संगीत ही से प्रेम है, तो फिर गाना क्यों न गाये? गाना केवल कानों के परदों को झनझनाता

नहीं, अपितु गहराई तक पहुंचता है। गाने में कहानी चलती है, वह मस्तिष्क को सोचने-विचारने और दिल को साहस जुटाने के लिए विवश करता है।

"इयोखिम, सुन," एक दिन सायंकाल पेत्रूस के साथ मामा मक्सिम अस्तबल में आते हुए बोले, "क्या तू अपनी यह पपीरी नहीं बन्द सकता? चरवाहे छोकरों के लिए तो यह ठीक है, लेकिन तू तो खुदा न ख़ास्ता बड़ा हो गया है। उस बेवक़ूफ़ मार्या ने भी क्या बछड़ा बना दिया है तुझे? हुंह! तुझे शर्म आनी चाहिए। यह भी कोई बात है कि लड़की खिसकी और तू लगा पपीरी पर पें-पें करने, पिंजड़े में बन्द चिड़िया की तरह।"

रात के अंधेरे में इयोखिम पान मक्सिम के अकारण क्रोध पर खीसें निपोरकर रह गया। बाक़ी सब तो वह सह गया, मगर चरवाहे छोकरों वाली बात उसके गले-तले न उतरी। उसने विरोध करते हुए कहाः

"ऐसा न कहें, पान! ऐसी बांसुरी सारे उक्राइना में अच्छे से अच्छे चरवाहे के पास भी नहीं मिलेगी, छोकरों की तो बात ही क्या ... वे तो सब सीटियां हैं, पान, और यह ... जरा सुनें तो।"

इयोखिम थोड़ा रुका, बांसुरी मुंह से लगायी और उसपर उंगलियां दौड़ाने लगा। बांसुरी से सुरीली धुन निकल-निकल कर वायुमंडल में गूंजने लगी। मक्सिम ने थूक दिया।

"हे भगवान! जो कुछ इसके दिमाग़ में कभी था भी यह तो वह भी गंवा बैठा। तेरी पें-पें पें-पें मुझे नहीं चाहिए। सभी एक जैसी हैं—क्या तेरी यह पपीरी क्या औरतें। और साथ में तेरी मार्या भी। कोई गाना जानता हो, तो सुना—कोई अच्छा पुराना गाना।"

मक्सिम यात्सेन्को स्वयं उक्राइनी थे और किसानों और जागीर के नौकरों-चाकरों से सादगी से पेश आते थे। वह अक्सर उनपर बरस पड़ते थे, लेकिन किसी का दिल दुखानेवाली बात कभी न कहते थे। इसी लिए वे उनकी इज्जत करते थे और उनसे डरते न थे।

"गाना?" इयोखिम ने उत्तर दिया, "क्यों नहीं? कभी मैं भी औरों से बुरा नहीं गाता था। पर शायद हमारा किसानी गाना भी आपको पसंद न आये," उसने भी हल्के से पान पर चुटकी ली।

"बेकार की बातें मत कर," मामा मक्सिम ने कहा, "अच्छा गाना

भी क्या तुम्हारी पपीरी की पें-पें है? बस गानेवाला होना चाहिए। चल पेत्रूस, सुनते हैं इयोखिम का गाना। पर तू समझ पायेगा, बच्चे?"

"क्या यह दासों की बोली में होगा?" बच्चा बोला, "उसे तो मै समझ लेता हूं।"

मामा मक्सिम ने आह भरी। वह रोमांटिक प्रकृति के व्यक्ति थे। कभी वह सोचा करते थे कि काश कज्जाक गौरव के वे पुराने दिन फिर वापस आ जाते।

"बेटे, ये दासों वाले गाने नहीं हैं... वे स्वतंत्र और वीर लोगों के गान हैं। तुम्हारी माता के पूर्वज इन्हें सारे स्तेपी में गाया करते थे— द्नीपर और डन्यूब के मैदानों में और काले सागर के किनारे-किनारे ... किसी दिन तू यह सब समझ लेगा। इस समय," कुछ सोचते हुए उन्होंने कहा, "मुझे दूसरी ही बात का डर है ..."

सचमुच मक्सिम को डर था कि बच्चा एक दूसरी चीज नहीं समझ पायेगा। उन्होंने विचार किया कि वीर रस से ओत-प्रोत प्राचीन गानों में जिन स्पष्ट चित्रों की झलक मिलती है, वे केवल दृष्टि के माध्यम से ही हृदय-पट पर उतरते हैं और चूंकि बच्चा दृष्टि से वंचित है, अतएव वह लोक-कविता की भाषा न समझ सकेगा। परन्तु यहां एक बात और थी, जिसपर मक्सिम ने ध्यान न दिया था। क्या प्राचीन बयान, उक्राइनी कब्जार और बन्दूरीस्त* अधिकतर अंधे नहीं होते थे? यह भी ठीक है कि अन्धे होने के साथ-साथ ज्यादातर वे दुर्भाग्य के भी शिकार हो जाते थे और भीख मांगने के लिए बन्दूरा वाद्य की शरण लेते थे। लेकिन इन घुमक्कड़ गवैयों में सब के सब सिर्फ़ रोटी के टुकड़ों पर गाना शुरू कर देनेवाले भिखारी ही न थे। और न सब ऐसे ही थे, जिनकी आंखें बुढ़ापे में जाती रही हों। अंधापन एक अभेद्य आवरण द्वारा मनुष्य का संबंध संसार से विच्छिन्न कर देता है। यह आवरण मस्तिष्क के लिए एक दमनकारी भार है, जिसके कारण संसार को समझना बहुत कठिन हो जाता है। किन्तु बहुत-सी चीजें ऐसी होती हैं, जिन्हें मनुष्य पैतृक सम्पत्ति की भांति अपने पूर्वजों से प्राप्त करता है और बहुत-सी ऐसी, जो दृष्टि-इन्द्रिय द्वारा नहीं, अन्य इन्द्रियों के माध्यम से सीखी जाती हैं। इन्हीं की सहायता से

---

*बयान, कब्जार तथा बन्दूरीस्त घुमक्कड़ गवैये होते थे।—अनु०

मस्तिष्क अपना एक जीवित संसार निर्मित करता है, जो होता अन्धकारपूर्ण ही है, परन्तु वह अपनी एक विशेष धूमिल काव्य-कल्पना से वंचित नहीं होता।

१२

मक्सिम तथा पेत्रूस सूखी घास के एक ढेर पर बैठ गये। इयोखिम अपनी बेंच पर आधा लेट गया (उसकी मानसिक स्थिति के अनुकूल यही सर्वोत्तम पोज था) और एक क्षण सोचने के बाद उसने गाना शुरू कर दिया। संयोगवश अथवा प्रेरणावश, जो भी हो, उसने जो गाना उठाया, वह मामा मक्सिम की रुचि के अनुकूल था। यह पुराने इतिहास के पृष्ठों का एक दृश्य था:

पका अनाज पहाड़ों पर लोग काटते हैं उटकर*

जिस किसी व्यक्ति ने इस अद्भुत लोक-गीत को एक बार भी सुना है—बशर्ते कि वह ढंग से गाया गया हो—वह इसकी धुन को कभी नहीं भूल सकता: स्वरों का उतार-चढ़ाव, उनकी ऊंची उठान, शिथिल गति और ऐतिहासिक संस्मरणों की करुण झलक इस गाने में बराबर मिलती रही है। गाने में घटनाओं का जिक्र, युद्ध भूमि और मारकाट का उल्लेख और साहसी कार्यों का कोई वर्णन न था। गाने में ऐसी कोई कथा भी न थी, जिसमें कोई कज्जाक अपनी प्रियतमा से बिछुड़ा हो अथवा साहसी अभियान का या डन्यूब पर और विशाल नीले समुद्र के आर-पार की किसी यात्रा का वर्णन हो। इस गाने में एक सरसरा चित्र था, जो एक क्षण के लिए एक उक्राइनी की स्मृति में घूम गया—उसमें एक धुंधली-सी कल्पना थी, ऐतिहासिक अतीत का एक छोटा-सा स्वप्न था। आज के साधारण वातावरण के बीच उसकी कल्पना मे यह चित्र उठ खड़ा हुआ है, जिसमें धूमिलता है और ऐसा कारुण्य, जो अदृष्ट हो गये भूतकाल की स्मृतियों से ओत-प्रोत है। अदृष्ट—हां, परन्तु ऐसा अदृष्ट नहीं, जिसका नामोनिशान तक बाक़ी न हो। यह

---

*हिन्दी रूपांतरकार मदनलाल 'मधु'।—सं०

भूतकाल आज भी उन क़ब्रों और क़ब्रिस्तानों में जीवित है, जहां कज्ज़ाकों की हड्डियां गड़ी हैं, जहां रात्रि के गहन अन्धकार में विचित्र प्रकाश दिखाई पड़ता है, जहां कराहने की भारी-भारी आवाजें सुन पड़ती हैं। अब यह भूतकाल केवल किंवदंतियों अथवा इस गाने में ही रह गया है और यह गाना कभी-कभी ही सुनाई देता है:

पका अनाज पहाड़ों पर लोग काटते हैं डटकर
और उन्हीं के दामन में, हरियाली के आंगन में
बढ़ते हैं कज्ज़ाक निडर! ..
बढ़ते हैं कज्ज़ाक निडर! ..

हरे-भरे टीलों पर अनाज काटा जा रहा है और नीचे सवार कज्ज़ाकों की सेना चली जा रही है।

मक्सिम यात्सेन्को अपने चारों ओर की दुनिया को भूल गया। करुण स्वर-लहरी गाने के भीतर निहित कथा के साथ एकाकार हो गयी और उसकी कल्पना के समक्ष बीते हुए ज़माने का एक दृश्य आकर खड़ा हो गया–टीलों पर खेत, गोधूलि-बेला का हल्का प्रकाश, अनाज काटनेवालों की झुकी-झुकी मौन आकृतियां, कज्ज़ाकों की अनेक पंक्तियां, जो उपत्यका के सायंकालीन धुंधले प्रकाश में एक के बाद एक आगे बढ़ रही हैं।

आगे-आगे दोरोशेन्को
राह दिखाता चलाता है वह
अपने पीछे फ़ौजों को...

गाने की धुन देर तक गूंजती रही, फिर हल्की पड़ी और अन्ततः लुप्त हो गयी। और श्रोताओं की कल्पना के समक्ष प्राचीन इतिहास के नये-नये दृश्य साकार होते गये।

१३

गाना सुनते समय बच्चे के चेहरे पर उदासी का भाव छा गया। जब गाने में उसने पहाड़ और अनाज काटने की बात सुनी, तो उसकी कल्पना तत्क्षण उसे नदी किनारे के उसके जाने-पहचाने ऊंचे टीले पर ले

गयी। वह उसे पहचान गया, क्योंकि नीचे से लहरों के पत्थरों पर टक
को मंद-मंद छपाक आ रही है। पेत्रूस यह भी जानता है कि कटाई
है, वह हंसियों की सनसन और कटकर गिरती हुई बालियों की सर
सुन रहा है।

किन्तु जब गाने का विषय बदला, तो अन्धे बच्चे की कल्पना
उसे पर्वत की ऊंचाई से घाटी की गहराई में ले गयी...

हंसियो की ध्वनि लुप्त हो चुकी है, परन्तु बच्चा जानता है कि फ़सल
काटनेवाले अब भी वहीं हैं, उसी टीले पर। हां, वह उनकी आवा
ज़रूर नहीं सुन सकता, क्योंकि वे ऊंचाई पर हैं, वैसी ही ऊंचाई प
जैसी पर सनोवर थे, जिनकी मर्मर उसने टीले के नीचे खड़े होकर सु
थी। और यहा नीचे, जहां नदी बह रही है... वहीं से दौड़ते हुए घोड़
की टापें सुनाई पड़ रही हैं... बहुत से घोड़े, भागते हुए, अंधकार
विलीन हो रहे हैं। यह "निडर कज़्ज़ाक" हैं।

कज़्ज़ाक–हां, वह उनके बारे में भी जानता है। जब कभी बू
"ह्वेदको" जागीर पर आता है, तो सभी लोग उसे "पुराना कज़्ज़ाक"
कहकर पुकारते हैं। वह अक्सर अन्धे बच्चे को अपने घुटनों पर बिठाक
उसके बालों पर अपना कांपता हाथ फेरता था। और जब बच्चा अपनी
आदत के अनुसार उसका चेहरा टटोलता, तो उसकी भावुक उंगलियां उसे
गहरी झुर्रियों, नीचे को झुकी बड़ी-बड़ी मूंछों, पिचके हुए गाल और
गालों पर वृद्धावस्था के आंसुओं का ज्ञान देतीं। गाने में पहाड़ के नीचे
गुज़रते कज़्ज़ाकों के बारे मे सुनते समय वह इसी प्रकार के कज़्ज़ाकों की
कल्पना कर रहा था। "ह्वेदको" की भांति लम्बी मूंछों वाले, बूढ़े और
झुकी हुई कमरवाले कज़्ज़ाक घोड़ों पर बैठे हैं। उसे प्रतीत हो रहा था
कि मूक, निराकार परछाइयां अंधेरे में से निकल-निकल कर आगे बढ़ रही
हैं, रो रही हैं, वैसे ही जैसे हमेशा ह्वेदको रोया करता था। रो रही
शायद इसलिए कि इयोखिम का यह करुण संगीत पर्वतों और घाटियों
सभी स्थानों पर छा गया है। इयोखिम का यह गान उस "निश्चिन्त
कज़्ज़ाक युवक" के बारे में था, जो अपनी जवान पत्नी को तो नहीं
अपितु मार्च के समय पाइप पीने और युद्ध की विभीषिकाओं को गले लगाना
अधिक पसंद करता था।

यद्यपि बच्चा अंधा था, तो भी उसकी सूक्ष्मग्राही आत्मा गीत के काव्यमय चित्रों को ग्रहण कर सकती थी। उसपर एक दृष्टि डालते ही मामा मक्सिम यह समझ गये।

तीसरा अध्याय

१

मक्सिम की योजनानुसार अन्धे बालक को जहां तक संभव था, स्वावलंबी होने के लिए छोड़ दिया गया था। इसके परिणाम बहुत अच्छे रहे। जब वह घर के भीतर रहता, तो उसके चेहरे पर असहायता के भाव कभी न दिखाई पड़ते। वह पूर्ण विश्वास के साथ अपने कमरे में इधर-उधर घूमता, चहलक़दमी करता, कमरे को साफ़-सुथरा रखता और अपने कपड़ों तथा खेल-खिलौनों को यथास्थान उठाया-धरा करता। मामा मक्सिम ने बच्चे के शारीरिक विकास पर भी ध्यान दिया। उसके लिए ख़ास कसरतें थीं और जब वह पांच वर्ष का हुआ, तो मक्सिम ने उसे एक छोटा-सा, शांत घोड़ा भेंट किया। पहले तो मां यह कल्पना भी न कर सकी कि उसका अन्धा बच्चा घोड़े पर भी चढ़ सकता है। "यह पूरा पागलपन है," उसने अपने भाई से कहा था। किन्तु मक्सिम ने बच्चे को घुड़सवारी सिखाने में अपनी सारी ताक़त लगा दी और दो-तीन महीनों में ही लड़का आसानी से हंसता-खेलता सवारी करने लगा। बस हां, बराबर ही घोड़े पर सवार इयोख़िम उसे मोड़ों पर रास्ता बता देता।

इस तरह बालक के अन्धेपन ने उसके शरीरसंवर्द्धन के मार्ग में कोई बाधा नहीं डाली और उसके आचरण पर भी इसका प्रभाव यथासंभव कम कर दिया गया था। उम्र को देखते हुए वह अधिक लम्बा था और शरीर से स्वस्थ। उसका चेहरा गोरा-सा था, नाक-नक़्शा तीखा और भाव-व्यंजक था। काले-काले बालों के कारण उसका श्वेत मुख और भी स्पष्ट हो गया था और उसकी बड़ी-बड़ी, काली, स्थिरप्राय आंखें चेहरे को एक विशिष्ट भाव देती थीं, जो सहसा सभी का ध्यान आकर्षित कर

लेता था। भौंहों के ऊपर एक छोटी-सी झुर्री, सिर कुछ-कुछ आगे नि॰
रखने की आदत और उदासी का एक भाव, जो उसके सुंदर चेहरे
समय-समय पर दिख पड़ता था,—ये ही उसके अन्धेपन के कुछ बाह्य
थे। जिन स्थानों से वह परिचित था, वहां वह पूर्ण विश्वास और
के साथ चल-फिर लेता था। फिर भी यह आसानी से देखा जा
था कि उसकी स्वाभाविक स्फूर्ति निरुद्ध है और समय-समय पर
आवेगों में प्रकट होती है।

२

अब यह स्पष्ट हो गया था कि अन्धे बालक के जीवन में ध्वनि-प्रभा
की ही प्रधानता है। ध्वनि-रूपों में ही उसके विचार मुख्यतः साकार हो
थे और उसकी बौद्धिक प्रक्रियाएं भी इन्हीं रूपों पर केन्द्रित थे। उसे गा
याद रहते, उनकी स्वर-लहरियां उसके हृदय में गूंजा करतीं और गाने
के विषय उसके मानस पटल पर अंकित हो जाते इसलिए कि उनमें संगीत
की करुणा होती, मस्त कर देनेवाली स्वप्निल धुन होती। अब वह अपने
चारों ओर प्रकृति की ध्वनियां पहले से अधिक ध्यानपूर्वक सुनता। और
अपने इन्द्रिय-गम्य प्रभावों को उन सुर-ध्वनियों के साथ समन्वित करके,
जिन्हें वह बचपन से सुनता आया था, अपने भावों को संगीतात्मक ढंग
से व्यक्त करता। उसकी भावाभिव्यक्ति का यह ढंग इतना अनूठा होता कि
यह पता चलाना कठिन हो जाता कि उसके संगीत में कितना अंश उसका
अपना है और कितना उन लोक-गीतों का, जिन्हें वह इतनी अच्छी तरह
से जानता था। ये दोनों तत्व उसके अन्तस् में इतने घुले-मिले थे कि वह
स्वयं भी उनमें कोई अन्तर स्थापित न कर पाता। उसकी मां उसे पियानो
बजाना सिखाती और वह शीघ्र ही सारे पाठों का अभ्यास कर लेता। हां, इयोखिम
की बांसुरी से भी उसे पहले की ही तरह लगाव था। पियानो अधिक पूर्ण,
अधिक संगीत-समृद्ध था, लेकिन वह कमरे में रखा था, जबकि बांसुरी
को वह अपने साथ खेत में ले जा सकता था। उसकी धुन स्तेपी
के वातावरण से इतनी एकाकार हो जाती कि पेत्रूस स्वयं न बता पाता
कि वह कौनसी चीज है, जो उसके मस्तिष्क को नये-नये, किंतु अस्पष्ट

विचारों से भर रही है—दूरस्थ स्थानों से होकर आनेवाली वायु अथवा स्वरचित संगीत।

यह संगीत-प्रेम बच्चे के मानसिक विकास का केंद्र और उसके जीवन में रोचकता और विविधता लाने का साधन बना। मक्सिम ने इसका लाभ उठाया बच्चे को उसके देश के इतिहास से अवगत कराने के लिए और अंधे की कल्पना में ध्वनियों में गुंथे इतिहास का साक्षात्कार हुआ। गानों में तो बच्चे की रुचि थी ही, इसलिए वह उनके नायक-वीरों और उनकी गाथाओं से परिचित हो जाता और इन्हीं के माध्यम से अपनी मातृभूमि की कहानी जान लेता। इसी तरह उसमें साहित्य के प्रति भी रुचि जगी और जब वह आठ वर्ष का हुआ, तो मामा मक्सिम ने उसे नियमित रूप से शिक्षा देने की व्यवस्था की। उन्होंने अंधों को शिक्षा देने की प्रणाली का विशेष अध्ययन किया था। बच्चे को अपने पाठों में बड़ा आनंद आता। उनसे जीवन में एक नये तत्व अर्थात् निश्चितता एवं स्पष्टता का विकास हुआ, जिसने संगीत की अधिक अस्पष्ट अनुभूतियों के बीच एक संतुलन पैदा किया।

इस प्रकार बालक पूरे दिन व्यस्त रहता। यह कोई नहीं कह सकता था कि उसपर पड़नेवाली छापों की कमी थी। लगता था कि उसका जीवन, जहां तक एक बालक के लिए संभव है, भरा-पूरा है। ऐसा भी प्रतीत होता था कि उसे अपने अंधेपन की अनुभूति नहीं है।

फिर भी उसके चरित्र में एक ऐसी विचित्र-सी उदासी, जो बच्चों में नही होती, कभी-कभी झलक उठती थी। मामा मक्सिम के विचार में इसका कारण यह था कि उसे अपनी उम्र के बच्चों का साथ नहीं मिलता था और उन्होने इस अभाव की पूर्ति के लिए प्रयास किये।

गांव के लड़के, जिन्हें कोठी पर खेलने बुलाया जाता, झिझकते थे और खुलकर खेल नहीं पाते थे। यहां का वातावरण तो उनके लिए नया था ही, इसके अतिरिक्त "पानिच" (जमींदार के बेटे) के अंधेपन से भी उन्हें डर-सा लगता था। वे सहमे-सहमे से उसकी ओर देखते थे और एक झुंड-सा बनाकर चुपचाप खड़े रहते या आपस में कानाफूसी करने लगते। जब बच्चो को बाग़ या मैदान में अकेला छोड़ दिया जाता, तो वे निस्संकोच होकर खेलने लगते, किंतु साथ ही कुछ ऐसा होता कि अंधा

४*

बालक अलग रह जाता और उदास-उदास सा हमजोलियों के हंसने-खे की ख़ुशी भर आवाजें सुनता रहता।

कभी-कभी इयोख़िम इन बच्चों को अपने चारों तरफ इकट्ठा लेता और उन्हें कहानिया सुनाने लगता। हंसा-हंसा कर लोटपोट देनेवाली उसे ढेरों कहानियां याद थीं। गांव के बच्चे जन्म से ही मूर्ख प्रेतों और धूर्त जादूगरनियों की उजाड़नी लोक-कथाएं जानते थे, इस इयोख़िम की कहानियों के बीच-बीच वे अपनी कहानियां भी प्रारम्भ देते और फिर उनका समय हंसी-ख़ुशी में बीत जाता। अंधा बालक दिलचस्पी के साथ ये सारी बातें सुनता था, परंतु शायद ही कभी हंसत प्रत्यक्षतः जीवित बोलचाल का हास्य-व्यंग्य बहुत हद तक उसकी समझ बाहर था और इसमें आश्चर्य की कोई बात न थी: वह कहानी सुनाने की आंखों में शरारत भरी मुस्कान नहीं देख पाता था और न ही उस चेहरे की मुस्कराती झुर्रियां और न ही बोलते समय उसकी लम्बी-लम मूछों का उठना-गिरना देख सकता था।

३

यहां वर्णित काल के कुछ ही समय पहले पास की एक छोटी-जागीर का कारिंदा बदल गया। पहले इस जागीर पर एक झगड़ा व्यक्ति रहता था, जिसके साथ पान पोपेल्स्की जैसे शांत व्यक्ति भी मुक़दमेबाज़ी हो चुकी थी और बात सिर्फ़ इतनी थी कि पान पोपेल्स्की के कुछ मवेशी उस व्यक्ति के किसी खेत में घुस ग थे। अब वहां एक वृद्ध दम्पति (पान यास्कूल्स्की तथा उनकी पत्नी आकर बस गये थे। यद्यपि दम्पति की कुल आयु सौ से कम नहीं थी, उन्हें प्रणय-सू में बंधे अधिक समय न हुआ था, क्योंकि पान याकूब बहुत देर तक लगा पर जागीर लेने के लिए पर्याप्त धन इकट्ठा नहीं कर पाये और इसलि लंबे समय तक दूसरों की जागीरों पर प्रबंधक का काम करते रहे औ पानी आग्नेश्का इस दौरान सौभाग्यशाली घड़ी की प्रतीक्षा में काउन्टे पोतोत्स्काया के यहां चेरी के रूप में रहती रही। अंततः जब सौभाग्यशाल घड़ी आयी और वर-वधू चर्च में विवाह-संबंध में आबद्ध होने पहुंचे, त वर की मूंछों और सिर के आधे बाल बिल्कुल पक चुके थे और लज्ज की लाली लिये वधू का चेहरा चांदी की श्वेतिमा लिये लटों से घिरा था।

परंतु यह परिस्थिति उनके दाम्पत्य जीवन के सुख में बाधक सिद्ध हीं हुई और इस ढलती हुई उम्र में उनके प्रगाढ़ प्रेम का फल थी इक-ौती बेटी, जो सम्प्रति अन्धे बच्चे की ही उम्र की थी। अब इस दम्पति ो अपना बुढ़ापा काटने के लिए एक घर मिल गया था, जिसे शर्ती तौर र ही सही वे अपना कह सकते थे। और अब मानो लम्बे समय तक ठायी गयी पराश्रित जीवन की कठिनाइयों के वरदान में वे सादा, शांत, कांतमय जीवन व्यतीत कर रहे थे। पहले उन्होंने किसी दूसरी जागीर ; लिए कोशिश की थी, परंतु उसमें उन्हें कोई सफलता न मिली, इसी लए उन्हें अपना काम इस छोटी-सी जागीर से ही चलाना पड़ा। इस यी जगह पर भी उन्होंने सब कुछ अपनी रुचि के अनुसार ही ढाल लिया। ुजा के कोने में, लता से घिरे देव-चित्र के पास, बेंद की एक शाखा रखी ी और एक "वज्र वत्ती"*। यहीं पानी यास्कूल्स्काया कुछ जड़ी-बूटियां ख़ा करती थी, जिनसे वह अपने पति के तथा सहायतार्थ उसके पास ानेवाले गांव के अन्य लोगों के रोगों का उपचार किया करती थी। ारे घर में इन जड़ी-बूटियों की एक विचित्र-सी सुगंध छायी रहती थी। नके यहां आनेवाले प्रत्येक व्यक्ति के मन में इस सुगंध की स्मृति इस ोटे-से साफ़-सुथरे, ख़ामोश घर और उसमें हमारे समय के लिए असाधारण ांत जीवन बसर कर रहे दो वृद्धों की स्मृति से घुल-मिल जाती ी।

इन दो वृद्धों के साथ उनकी एक इकलौती बेटी रहती थी। नीली ांखों और सुनहरे बालों की लंबी चोटीवाली इस नन्ही-सी लड़की की ारी आकृति में ही एक विचित्र गंभीरता थी, जो सब को विस्मित करती थी। ऐसा लगता था कि माता-पिता के प्रगाढ़ प्रेम की धीरता ही बेटी के चरित्र की प्रौढ़ों सी संजीदगी, उसकी गतियों के शांत-प्रवाह और गहरी नीली आंखों की विचारशीलता में प्रतिबिंबित हो रही है। बच्ची कभी भी अपरिचितों से नहीं डरती थी। वह दूसरे बच्चों से दूर-दूर नहीं रहती थी, बल्कि उनके साथ मिलजुल कर खेलती थी। किंतु यह सब

---

*"वज्र वत्ती" मोम की वत्ती को कहते है, जो तूफ़ानो के समय जलायी जाती है या मरणासन्न व्यक्ति के हाथ मे थमायी जाती है।—ले०

इतने सच्चे अनुग्रह के साथ किया जाता था मानो स्वयं उसे इस सब ग क़तई आवश्यकता न थी। और सच बात तो यह थी कि जब कभी व अकेली होती—मैदानों में घूमती होती या फूल चुनती होती या फिर अप गुड़िया से बात करती होती—तो उसे बड़ी प्रसन्नता होती। उसके इ समस्त बालसुलभ क्रिया-कलापों में इतनी गम्भीरता होती कि वह बच्च तो कम, बल्कि एक नन्ही स्त्री सी प्रतीत होती।

४

नदी तट के पास टीले पर नन्हा पेत्रिक बिल्कुल अकेला था। सूर्य डू रहा था और वातावरण शांत था और केवल खेतों से लौट रही गायों के रंभाने की आवाज दूरी के कारण मृदु होकर यहां आ रही थी। बच्चे ने अभी-अभी बांसुरी बजानी बंद की थी और गर्मी की शाम की स्वप्निल शिथिलता का आनंद लेता हुआ घास पर चित्त लेट गया था। वह तो पड़ा-पड़ा प्रायः सो ही गया था कि सहसा उसे नीचे किसी के पैरों की आहट सुनाई दी। खिन्न-सा वह अपनी कोहनी के बल उठा और चापों की आवाज सुनने लगा। यह आवाज टीले के ठीक नीचे आते-आते एकदम रुक गयी। पगध्वनि अपरिचित थी।

"ऐ लड़के," एक बच्चे की आवाज सुनाई दी। "जानता है यहां अभी कौन बजा रहा था?"

अन्धे को अपने एकांत में बाधा डाले जाना बिल्कुल पसंद नहीं था। इसलिए उसने प्रश्न का उत्तर विशेष विनम्रता से नहीं दिया:

"मैं..."

इस घोषणा का प्रत्युत्तर थी एक हल्की आश्चर्यमय आवाज, और तत्क्षण लड़की के स्वर ने सहज प्रशंसा के भाव से कहा:

"कितना अच्छा!"

अन्धा चुप रहा।

और फिर यह सुनते हुए कि अनिमंत्रित लड़की वैसे ही खड़ी है, उसने पूछा:

"तुम जातीं क्यों नहीं?"

ग्राश्चर्यमय स्वर में पूछा।

उसकी शांत, गम्भीर ग्रावाज बच्चे के कानों को मधुर लगी। परंतु उसने पहले ही जैसी रुखाई से उत्तर दिया:

"मैं नहीं चाहता कि मेरे पास कोई ग्राये..."

लड़की हंस दी।

"वाह रे वाह... देखो तो। यह सारी जमीन क्या तेरी है, जो तू इसपर चलने से लोगों को मना कर सकता है?"

"मां ने सबसे कह रखा है कि यहां मेरे पास कोई न ग्राया करे।"

"मां?" लड़की ने कुछ सोचते हुए पूछा, "लेकिन मेरी मां ने तो मुझे यहां नदी तक ग्राने दिया है..."

बच्चा थोड़ा बिगड़ा हुग्रा था, क्योंकि हर कोई उसकी हर इच्छा को पूरी करता था ग्रौर वह इस तरह के एतराज सुनने का ग्रादी न था। ग्रब उसके चेहरे पर क्रोध की एक लहर दौड़ गयी। वह घास पर बैठ गया ग्रौर उत्तेजित स्वर में जल्दी-जल्दी बोलने लगा:

"चली जाग्रो! चली जाग्रो! चली जाग्रो!"

बाद में क्या हुग्रा होता, यह कहना मुश्किल था, किंतु इसी क्षण इयोखिम की ग्रावाज सुनाई दी, जो बच्चे को चाय पीने के लिए बुला रहा था। बच्चा तेज-तेज भागता हुग्रा टीले से उतरकर चला गया।

"ग्रोह, कैसा गंदा लड़का है!" उसे ग्रपने पीछे गुस्से में कही गयी बात सुनाई दी।

५

दूसरे दिन फिर इसी टीले पर उसे इस छोटी-सी मुठभेड़ की याद ग्रा गयी, परंतु ग्रब उसे किसी प्रकार का रोष न था। उल्टे उसका दिल हुग्रा कि वह लड़की फिर ग्रा जाये। यह छोटी लड़की कितनी गम्भीर ग्रौर मधुर ग्रावाज में बोलती थी। इसके पहले उसने किसी भी बच्चे की ऐसी मीठी ग्रावाज न सुनी थी। जिन बच्चों को वह जानता था, वे या तो चिल्लाया करते थे, या जोर-जोर से हंसा करते थे, या लड़ाई-झगड़ा

करते थे, या खिन्न से रो देते थे, उनमें एक भी ऐसा न था, जिसने
उसके साथ इस तरह से मीठी बातचीत की हो। उसे दुःख हो रहा था
कि उसने लड़की के साथ इतनी रुखाई का व्यवहार किया और अब वह
शायद कभी नहीं आयेगी।

और सचमुच वह पूरे तीन दिन तक न आयी, लेकिन चौथे दिन
पेत्रूस ने टीले के नीचे नदी के किनारे से आती उसके पैरों की चाप सुनी।
उसकी चाल धीमी थी और नदी किनारे के छोटे-छोटे पत्थर उसके पैरों
तले चट्ट-चट्ट बोल रहे थे। और वह धीमे-धीमे कोई पोलिश गीत गुनगुना
रही थी।

"सुनो!" जब वह उसकी सीध में आ गयी, तो उसने पुकारा। "क्या
तुम हो?"

बच्ची ने कोई उत्तर न दिया। पत्थर बराबर चटचटाते रहे। उसकी
गुनगुनाती आवाज की बनावटी लापरवाही से बच्चा जान गया कि वह
उस दिन की बात अभी नहीं भूली है।

तो भी कुछेक क़दम चलकर वह रुक गयी। कुछेक क्षण चुप्पी
गुज़र गये। बच्ची खड़ी-खड़ी उन फूलों को सरियाती रही, जिन्हें वह
से तोड़कर लायी थी। पेत्रूस उत्तर की प्रतीक्षा कर रहा था। उसके सहसा
रुक जाने तथा चुप हो जाने से पेत्रूस को ऐसा लगा मानो वह जान-बूझ
कर उसका तिरस्कार कर रही हो।

फूलों को सरियाना खत्म करके लड़की ने बड़े रोब से उससे पूछा,
"देखता नहीं, यह मैं हूं?"

यह सीधा-सादा प्रश्न सुनकर अन्धे बच्चे के हृदय को ठेस लगी।
कुछ नहीं बोला, किंतु घास में छिपे हुए उसके हाथों में सहसा ऐंठन जैसी
कोई गति हुई।

"इतना अच्छा बांसुरी बजाना तुझे किसने सिखाया?" बच्ची ने
प्रश्न किया। वह जहां खड़ी थी, वहीं बिना हिले-डुले बराबर फूल
सरियाती रही।

"इयोखिम ने," पेत्रूस ने उत्तर दिया।

"बहुत अच्छा! लेकिन तू इतना गुस्सा क्यों करता है?"

"मुझे अब तुमपर गुस्सा नहीं है," बच्चे ने धीमे से कहा।

"तो ठीक है, मुझे भी गुस्सा नहीं... चल खेलते हैं।"

"मुझे तुम्हारे साथ खेलना नहीं आता," सिर लटकाये हुए उसने जवाब दिया।

"खेलना नहीं आता? .. क्यों?"

"यों ही।"

"पर क्यों?"

"यों ही," सिर और भी नीचा करते हुए उसने बहुत ही धीमे से उत्तर दिया।

बच्चे को इससे पहले कभी किसी से अपने अन्धे होने की बात नहीं करनी पड़ी थी। अब लड़की के इस सीधे से प्रश्न से, जिसे वह भोले हठ के साथ पूछ रही थी, उसके दिल में फिर से एक टीस उठी।

लड़की टीले पर चढ़ आयी और उसी के पास घास पर बैठ गयी।

"बड़ा अजीब है तू," वह कुछ ऐसे बोली जैसे कि उसे लड़के पर तरस आ रहा हो। "मुझे जानता नहीं शायद इसलिए। कोई बात नहीं, मुझे जान जायेगा, फिर बिल्कुल नहीं डरेगा। मैं तो किसी से भी नहीं डरती।"

बच्ची यह सब अपनी निश्चिंत मधुर आवाज में कह रही थी। और लड़के ने सुना, कैसे उसने फूलों का गुच्छा अपनी गोद में डाला।

"ये फूल कहां से लिये?" उसने पूछा।

"वहां से," लड़की ने सिर से पीछे की ओर इशारा किया।

"चरागाह से?"

"नहीं – वहां।"

"अच्छा, झाड़ में से। कौनसे फूल हैं ये?"

"तुझे फूलों का भी नहीं पता? .. कितना अजीब है तू... सचमुच, बहुत अजीब..."

पेत्रूस ने एक फूल उठाया। जल्दी-जल्दी, हल्के-हल्के उसकी उंगलियां फूल की पंखुड़ियों पर घूम गयीं।

"यह है पीतपुष्प," उसने कहा, "और यह है बैंजनी फूल।"

फिर उसने इसी ढंग से लड़की को भी जानना चाहा: बायें हाथ से उसका कंधा पकड़कर दायें से वह उसके बाल, फिर उसकी पलकें टटोलने लगा और फिर कहीं-कहीं रुककर अपरिचित रूपरेखाओं का अध्ययन सा करता हुआ उसके चेहरे पर उंगलियां चलाने लगा।

यह सब इतनी जल्दी और इतने एकाएक हो गया कि आश्चर्यचकित

लड़की एक शब्द भी नहीं कह पायी। बस चुपचाप बैठी उसे घूरती रही। उसकी बड़ी-बड़ी आंखों में भय का सा भाव था। अब कहीं उसने देखा कि उसके नये परिचित के चेहरे में कुछ असाधारणता है। उसके श्वेत, कोमल जड़वत् चेहरे पर तनावमय एकाग्रता का भाव था, जिसका उसकी स्थिर आंखों के साथ कोई मेल नहीं बैठ रहा था। उसकी आंखें कहीं किसी दूसरी चीज पर लगी थीं, जो कुछ वह कर रहा था, उसपर नहीं। और उनमें अस्त होते हुए सूर्य की चमक भी बड़े विचित्र ढंग से प्रतिबिम्बित हो रही थी। एक क्षण के लिए लड़की को यह सब एक भयानक स्वप्न मालूम हुआ।

झटके से उसने अपना कन्धा छुड़ाया, उछलकर खड़ी हो गयी और रो पड़ी।

"क्यों मुझे डराता है, गंदा कहीं का?" रोते-रोते वह गुस्से से बोली। "मैंने तेरा क्या बिगाड़ा है?.. क्या?"

वह परेशान-सा, सिर झुकाये उसी जगह बैठा था और एक विचित्र अनुभूति—खीज और अपमान की मिश्रित भावना—ने उसके हृदय को पीड़ा से भर दिया। जीवन में पहली बार उसे अपंग का अपमान सहना पड़ा था; पहली बार उसे यह ज्ञान हुआ था कि उसकी शारीरिक विकृति दूसरों में न केवल सहानुभूति, अपितु भय का भी संचार कर सकती है। वह उसे पीड़ित करनेवाली इस कटु अनुभूति और उसके कारण को पूरी तरह समझ नहीं पा रहा था। यद्यपि यह अनुभूति अस्पष्ट थी, इससे उसकी वेदना किसी भी प्रकार कम न हुई।

गहन आंतरिक पीड़ा से उसका गला रुंध गया। वह घास पर गिरकर सिसकियां भरने लगा। सिसकियां बढ़ती ही जा रही थीं, वे उसके छोटे-से शरीर को बुरी तरह झकझोर रही थीं। उसकी जन्मजात अभिमान की भावना उसे खुलकर रोने से रोकती थी, इससे उसकी सिसकियां और भी जोर-जोर से निकल रही थीं।

छोटी लड़की दौड़कर टीले के नीचे जा चुकी थी, परंतु जब दबी-दबी सिसकियों की आवाज उसके कानों में पड़ी, तो कौतूहलवश उसने मुड़कर पीछे देखा। घास पर पट पड़े हुए उस बच्चे को फूट-फूट कर रोते देख उसे दया आ गयी। वह फिर ऊपर आयी और रोते हुए बच्चे पर झुकती हुई धीरे से बोली:

"सुन, रो क्यों रहा है? तू शायद सोच रहा है कि मैं तेरी शिकायत करूंगी? अच्छा, रो नहीं, मै किसी से नहीं कहूंगी।"

इन सहानुभूति के मधुर शब्दों से उसकी रुलाई और भी बढ़ गयी और वह और भी जोर-जोर से रोने लगा। तब बच्ची उसी के पास बैठ गयी; क्षण भर यों बैठे रहने के बाद उसने धीरे से उसके बालों को छुआ, उसके सिर पर हाथ फेरा और फिर अपने पिटे हुए बच्चे को दुलारने और पुचकारने वाली मां की तरह उसने लड़के का सिर ऊपर उठाया और रूमाल से उसके आंसू पोंछने लगी।

"बस, बस," वह एक प्रौढ़ा की भांति बुदबुदायी, "अब चुप भी हो जा। मैं तो कब की गुस्सा छोड़ चुकी। तुझे अफ़सोस हो रहा है न कि मुझे डराया क्यों..."

"मैं तुझे डराना नहीं चाहता था," सिसकियां रोकने के लिए गहरी सांस लेते हुए उसने कहा।

"ठीक है, ठीक है। मै बिल्कुल गुस्से में नहीं। अब तो तू कभी ऐसा नहीं करेगा, ना।" उसने उसे जमीन से उठा लिया था और अपने पास बिठाने की कोशिश कर रही थी।

उसने बच्ची की बात मान ली। अब वह डूबते हुए सूर्य की ओर मुंह करके बैठा था। और जब लड़की ने फिर एक बार उसके लाल-लाल किरणों से प्रकाशित चेहरे पर निगाह डाली, तो फिर उसे लगा कि उसके चेहरे में जरूर कोई विचित्रता है। बच्चे की आंखों में अभी भी आंसू थे, किंतु ये आंखें पहले की ही तरह निश्चल थीं। उसके चेहरे पर अभी भी रह-रह कर ऐंठन के दौरे-से आ जाते थे, किंतु इसके साथ ही उसपर किसी गहरे, भारी विशाद के भाव की गहरी छाप थी। ऐसा विशाद, जो बच्चों के चेहरे पर कभी नहीं देखा जाता।

"नहीं, तू सचमुच बहुत अजीब है," चिंतामय सहानुभूति के साथ वह बोली।

"मैं अजीब नहीं," दर्दभरी मुद्रा में बालक ने उत्तर दिया। "नहीं, मैं अजीब नहीं... मैं... मैं अन्धा हूं!"

"अन्धा?" उसके मुख से रुक-रुक कर यह शब्द निकला और उसका गला रुंध आया मानो धीरे से कहे गये बच्चे के इस शब्द ने उसके नन्हे-से नारी हृदय पर बहुत भारी सदमा पंहुचाया हो। "अंधा?" उसने

दोहराया और उसका गला और अधिक रुंध गया। और मानो अपने पूरे अस्तित्व में उठ रहे करुणा के प्रचंड उफान से बच्चे का आसरा ढूंढ़ते हुए उसने अपनी बांहें बालक की गरदन में डाल दीं और अपना सिर उसकी ओर झुका दिया।

स्थिति की इस पीड़ादायी अनुभूति से स्तब्ध नन्ही नारी अपना सहज स्वाभाविक संजीदापन खो बैठी और रह गयी बस एक भावविह्वल बच्ची, जो अपने शोक में असहाय फूट-फूट कर रो पड़ी।

६

कुछ मिनट चुप्पी में गुजर गये।

बच्ची ने रोना बंद किया और बस कभी-कभी न चाहते हुए भी वह सिसक पड़ती। आंसुभरी आंखों से वह देख रही थी कैसे सूर्य संध्या वेला की लालिमा में चक्कर काटता हुआ क्षितिज की अन्धेरी रेखा के पीछे डूब रहा है। अग्नि-पिंड का सुनहरी वक्र एक बार फिर चमक गया, उसमें से दो तीन अग्नि-कण छिटके और दूर जंगल की अन्धेरी आकृतियां सहसा एक निरंतर नीली रेखा के रूप में उभर आयीं।

नदी की ओर से शीतल वायु बहने लगी और निकट आती हुई सायंकालीन शांति अन्धे बच्चे के चेहरे पर प्रतिबिम्बित हो उठी। वह सिर झुकाये बैठा था। प्रत्यक्षतः वह इस सहानुभूति प्रदर्शन से विस्मित था।

"मुझे बड़ा दुःख है ..." आखिर अपनी कमज़ोरी की सफ़ाई देते हुए बालिका बोली। वह अभी तक अपनी सिसकियां रोकने का प्रयास कर रही थी।

जब उसकी आवाज कुछ-कुछ उसके वश में हुई, तो उसने बातचीत को एक नयी दिशा में मोड़ने का प्रयत्न किया, ताकि वे दोनों निस्संकोच बात कर सकें।

"सूरज डूब गया," विचारमग्न-सी वह बुदबुदायी।

"मैं नहीं जानता सूर्य कैसा होता है," उसका दुःखभरा उत्तर था। "मैं ... मैं तो सिर्फ़ उसका अनुभव कर सकता हूं।"

"सूर्य को नहीं जानता?"

"हां।"

"और ... अपनी मां ... मां को भी नहीं जानता?"

"मां को जानता हूं। मै दूर से ही उसके पैरों की चाप पहचान लेता हूं।"

"हां, हां, यह सच है। मै भी बंद आंखों से अपनी मां को पहचान लेती हूं।"

बातचीत का लहजा शांत हो गया था।

"तुझे मालूम है," अन्धे ने थोड़ी सजीवता के साथ बोलना शुरू किया, "मैं सूर्य को अनुभव करता हूं और जब वह डूबता है, तो मुझे पता चल जाता है।"

"तुझे कैसे पता लगता है?"

"क्योंकि ... बात यह है कि ... मै भी नहीं जानता कैसे ..."

"आ ... आ," बालिका ने कहा। वह प्रत्यक्षतः इस उत्तर से बिल्कुल सन्तुष्ट थी। दोनों कुछ क्षण के लिए चुप हो गये।

पेत्रूस ने फिर बात शुरू की:

"मै पढ़ सकता हूं और जल्दी ही क़लम से लिखना भी सीख जाऊंगा।"

"लेकिन कैसे?.." वह कुछ और पूछना चाहती थी, परंतु यह सोचकर कि इससे उसके हृदय को कोई ठेस न पहुंचे वह रुक गयी। लेकिन वह उसकी बात समझ गया था।

"मै अपनी किताब में पढ़ता हूं," उसने समझाया, "उंगलियों से।"

"उंगलियों से? मै तो कभी भी ना पढ़ सकूं... मै तो आंखों से देखकर भी ठीक-ठीक नहीं पढ़ती। पिता जी कहते हैं कि लड़कियां पढ़ने के लिए पैदा ही नहीं होती।"

"मै फ़्रांसीसी भी पढ़ सकता हूं।"

"फ़्रांसीसी! उंगलियो से! कितना होशियार है तू!" वह सचमुच विमुग्ध थी। "पर देख कहीं तुझे सर्दी न लग जाये। नदी पर कैसी धुंध छा गयी है।"

"और तू?"

"मेरा डर नहीं, मुझे कुछ नहीं होगा।"

"तो मुझे भी डर नहीं। अगर औरत को सर्दी नहीं लग सकती, तो मर्द को कैसे लगेगी। मामा मक्सिम कहते हैं कि मर्द को कभी नहीं

डरना चाहिए—न सर्दी से, न भूख से, न आंधी से और न तूफ़ान से।"

"मामा मक्सिम? .. वही जो बैसाखी लेकर चलते हैं? मैंने उन्हें देखा है। कितने भयानक हैं वह!"

"नहीं, वह जरा भी भयानक नहीं। वह बहुत अच्छे हैं।"

"नहीं, भयानक हैं!" पूरे विश्वास के साथ उसने दोहराया, "तूने उन्हें देखा नहीं, इसी लिए नहीं जानता।"

"अगर मैं ही नहीं जानता, तो फिर कौन जानता है? वही तो मुझे पढ़ाते हैं।

"और बेंत भी जमाते है?"

"कभी नहीं मारते और डांटते तक भी नहीं ... कभी नहीं ..."

"यह तो अच्छा है। भला अन्धे बच्चे को भी मारा जा सकता है! यह तो बहुत बड़ा पाप है।"

"पर वह तो किसी को भी नहीं मारते," खोया-खोया सा पेत्रूस बोला, क्योंकि उसके तेज कानों ने इयोखिम के पैरों की आहट सुन ली थी।

सचमुच क्षण भर बाद लम-तड़ंग इयोखिम नदी और घर के बीचवाले टीले की चोटी पर दिखाई दिया। उसकी आवाज़ संध्या की स्तब्धता मे दूर-दूर तक गूंज गयी:

"पा-आ-आ-नि-इ-इ-च!"

"तुझे कोई पुकार रहा है," बालिका उठते हुए बोली।

"हां, लेकिन अभी घर जाने की इच्छा नहीं है।"

"जा, जा! कल मैं तुझे मिलने आऊंगी। अब लोग तेरा इंतजार कर रहे हे। और मेरा भी।"

७

बालिका ने सचमुच अपना वचन निभाया और वह भी इतनी जल्दी कि पेत्रूस को इसकी आशा न थी। अगले दिन हमेशा की तरह मक्सिम के साथ अपना पाठ पढ़ते हुए उसने सहसा सिर उठाया एक क्षण तक कुछ सुनता रहा और फिर उत्तेजित-सा होकर बोला:

"एक मिनट के लिए बाहर जाने दो। वह लड़की आ रही है।"

"कौन लड़की?" मक्सिम हैरान हो गये और लड़के के पीछे-पीछे बाहर तक आ गये।

सचमुच पेत्रूस की कल की परिचिता ठीक इस क्षण फाटक में से अंदर आ रही थी और आंगन में से गुजरती हुई आन्ना मिखाइलोव्ना को देखकर निर्भय सीधी उनकी ओर चल दी।

"क्या बात है, मेरी बच्ची?" आन्ना मिखाइलोव्ना ने उससे पूछा। वह समझ रही थी कि किसी ने बालिका को उसके पास किसी काम से भेजा है।

नन्ही स्त्री ने बड़े गर्व से उसकी ओर हाथ बढ़ाया और पूछा:

"यह अन्धा बालक आपका ही बेटा है, ना?"

"हां बेटी, मेरा ही है," आन्ना मिखाइलोव्ना ने जवाब दिया। वह बालिका की निर्भय मुद्रा और नीली आंखों की चमक देखकर बड़ी प्रभावित हो उठी थी।

"बात यह है कि ... मेरी मां ने मुझे उससे मिलने आने की इजाजत दे दी है। क्या मैं उससे मिल सकती हूं?"

लेकिन ठीक इसी समय पेत्रूस दौड़ता हुआ उसके पास आ गया और मामा मक्सिम-दालान में आ खड़े हुए।

"मां! यही वह लड़की है, जिसके बारे में मैंने तुमसे कहा था," बच्ची से हाथ मिलाते हुए उसने कहा, "पर इस समय तो मैं पढ़ रहा हूं।"

"कोई बात नहीं, इस बार मामा मक्सिम तुझे छुट्टी दे देंगे," आन्ना मिखाइलोव्ना ने कहा, "मैं उन्हें कह दूंगी।"

इस बीच यह नन्ही-सी नारी, जो लगता था किसी से नहीं झिझकती थी मानो अपने ही घर में हो, सामने से बैसाखी पर आते मामा मक्सिम की ओर चल दी। उनकी ओर अपना हाथ बढ़ाकर वह कुछ कृपालु प्रशंसा के भाव से बोली:

"आप बहुत अच्छा करते हैं कि इस अंधे बालक को बेंत नहीं लगाते। उसने मुझे बताया था।"

"जी, सच?" मक्सिम ने अपने चौड़े हाथ में बच्ची का नन्हा-सा हाथ लेते हुए हास्यप्रद अहम के भाव से पूछा। "तुम जैसी सुन्दरी से

मेरे शागिर्द ने मेरी जो तारीफ की है, उसके लिए मैं उसका आभ
[illegible]।"

और मक्सिम क़हक़हे लगाने और उस हाथ को थपथपाने लगे, [illegible]
वह अपने हाथ में लिये थे। बालिका खड़ी-खड़ी उनकी ओर देखती र[illegible]
और शीघ्र ही उसकी चंचल, निर्भय दृष्टि ने औरतों से घृणा करने[illegible]
इस विचित्र आदमी के हृदय को जीत लिया।

"देखा, आन्ना," बहन की ओर मुड़ते तथा होंठों पर विचित्र मुस[illegible]
बिखेरते हुए मामा मक्सिम बोले, "हमारा प्योत्र ख़ुद ही अपने दो[illegible]
बना रहा है। और आन्या, क्या ख्याल है, हालांकि उसकी आंखें [illegible]
है, फिर भी पसंद उसकी बुरी नहीं, ठीक है, ना?"

"मक्सिम! तुम्हारा इशारा किधर है?" युवा मां ने सख़्ती से पूछ[illegible]
उसके मुंह पर लाली छा रही थी।

"कुछ नहीं। मैं तो मज़ाक कर रहा था," वह जल्दी से कह ग[illegible]
उन्होंने अनुभव किया कि अपने मज़ाक़ से उन्होंने मां के मर्मस्थल [illegible]
चोट की है और मां के दूरदर्शी हृदय में जिस गुप्त विचार ने जन्म लि[illegible]
था, उसे प्रकट कर दिया है।

आन्ना मिखाइलोव्ना का चेहरा और भी लाल हो गया। वह ज[illegible]
से बालिका की ओर झुकीं और उसे छाती से लगा लिया। बच्ची प्यार के [illegible]
आकस्मिक तूफ़ान को अपनी सदा की तरह स्पष्ट दृष्टि से देखती रह[illegible]
हां, उसमें थोड़ा आश्चर्य अवश्य था।

८

यह दो जागीरों के बीच स्थायी मैत्री का आरंभ था। अब बालि[illegible]
एवेलीना रोज़ अपना कुछ न कुछ समय पेत्रूस के घर बिताने लगी [illegible]
आख़िर मामा मक्सिम की शिष्या बन गयी। बालिका के पिता प[illegible]
यास्कूल्स्की को पहले पहल यह विचार कुछ अच्छा न लगा; पहले [illegible]
इसलिए कि वह समझते थे कि अगर औरत इतना जानती है कि धोबी [illegible]
दिये गये कपड़ों की सूची कैसे बनायी जाये या घर का हिसाब-किताब कै[illegible]
रखा जाये, तो बहुत है। दूसरे, वह एक पक्के कैथोलिक थे और उनक[illegible]

विचार था कि जब हमारे "पिता पोप" ने आस्ट्रियाइयों के विरुद्ध लड़ाई में जाने के खिलाफ़ साफ़-साफ़ मनाही की थी, तो पान मक्सिम को लड़ाई में नहीं जाना चाहिए था। उनका एक अखंड विश्वास यह भी था कि भगवान हैं जरूर और स्वर्ग ही में रहते हैं, और वोल्टेयर और उसके समस्त अनुयायी मरने के बाद नर्क की ज्वाला में जलते हैं और बहुत-से लोगों का कहना था कि यही दशा पान मक्सिम की भी होगी। तथापि जब पान मक्सिम से उनकी जान-पहचान अधिक गहरी हुई, तो उन्हें यह मानना पड़ा कि यह धर्मद्रोही और झगड़ालू बहुत अच्छे स्वभाव का और बुद्धिमान व्यक्ति है। इसलिए वह राजी हो गये।

फिर भी दिल के किसी कोने में वह कुछ बेचैनी अनुभव कर रहे थे। इसलिए जब वह पहली बार अपनी बच्ची को पढ़ाने के लिए पान मक्सिम के पास लाये, तो उन्होंने बच्ची को इस अवसर पर एक उपदेश देना आवश्यक समझा, जो वास्तव में मक्सिम के लिए था।

"सुन, वेल्या..." पुत्री के कंधों पर हाथ रखते तथा उसके शिक्षक की तरफ़ कनखियों से देखते हुए उन्होंने कहा। "हमेशा यह याद रखना कि स्वर्ग में भगवान है और रोम में उसका पवित्र पोप। यह मैं, वालेन्तीन यास्कूल्स्की, तुझे कह रहा हूं और तुझे मेरी बात पर विश्वास करना चाहिए, क्योंकि मैं तेरा पिता हूं। यह है primo*।"

और कहते हुए उन्होंने पान मक्सिम की ओर अर्थपूर्ण दृष्टि डाली। पान यास्कूल्स्की अपना लैटिन का ज्ञान दिखाकर मानो यह कहना चाहते थे कि वह भी विज्ञान से अभिज्ञ नहीं और मौक़ा पड़ने पर उन्हें धोखा नहीं दिया जा सकता।

"और secundo,** " मैं पुराना इल्यास्तिव हूं और हमारे परिवार के प्रसिद्ध राज-चिह्न में "पुआल और कौए" के साथ नीले खेत में घास व्यर्थ ही नहीं बना हुआ है। यास्कूल्स्की हमेशा वीर योद्धा रहे हैं और साथ ही कई बार उन्होंने तलवारों की जगह धर्म-ग्रन्थ ग्रहण किये हैं। हम हमेशा धर्म को समझते और मानते आये हैं, इसलिए तुझे मेरी बात माननी चाहिए। और जहां तक orbis terrarum*** यानी दुनियादारी

---

*पहली बात।—सं०

**दूसरी बात।—सं०

***पृथ्वी।—सं०

की बातों का ताल्लुक़ है, उनमें पान मक्सिम का कहना मानना और इ
तरह पढ़ना।"

"डरिये नहीं, पान वालेन्तोन," मुस्कराते हुए मक्सिम ने इस क
का उत्तर दिया, "हम यहां नन्हो पानियों को गरीबाल्दी की सेना
लिए तैयार नहीं करते।"

६

साथ-साथ पढ़ना दोनों ही बच्चों के लिए लाभदायक सिद्ध हुआ। ए
ठीक है कि पेत्रूस पढ़ाई में आगे था, फिर भी दोनों में कुछ हद त
प्रतिस्पर्द्धा की भावना रहती थी। इसके अलावा वह पाठ याद करते
एवेलीना की मदद करता था और एवेलीना अक्सर ऐसे नये सफल उपा
ढूंढ़ लेती थी, जिनसे वह अन्धे बच्चे को कठिनाई से समझ में आनेवाली
बातें उसे समझा देती थी। इसके अलावा उसके साथ से बच्चे के पढ़ाई
में एक नयी मौलिकता आ गयी थी और वह उसकी विचार-क्रियाओं में
उत्साह का रंग भरता था।

वैसे यह मित्रता भाग्य का सच्चा वरदान थी। अब बालक पूर्ण एकान्त
नहीं खोजता था। अब उसे अपने विचारों के आदान-प्रदान का एक ऐसा
सूत्र मिल गया था, जो उसके बुजुर्ग प्रेम भाव के होते हुए भी उसे देने
में असमर्थ थे। अब वह अपने निकट एक ऐसी उपस्थिति का अनुभव
किया करता था, जो उसे प्रसन्न रखती थी। नदी के किनारे अथवा टीले
पर वे सदा साथ-साथ जाते। जब वह बांसुरी बजाता, तो एवेलीना भोले-
भाले उल्लास के साथ उसे सुना करती। और जब वह उसे एक ओर रख
देता, तो वह उससे बातें करने लगती। वह अपने चतुर्दिक विश्व को बाल-
सुलभ दृष्टि से देखती हुई पूरे दृश्य का जीता-जागता चित्र अन्धे बालक के
सामने प्रस्तुत करती। यह सच है कि इस दृश्य का पूरी गहराई के साथ
सटीक वर्णन करने के लिए उसके पास पर्याप्त शब्द नहीं होते थे, किंतु
सरल कहानियों में अपनी बात व्यक्त करने का अंदाज़ ऐसा था कि प्रत्येक
वर्णित घटना अथवा वस्तु अन्धे बालक के कल्पना-पटल पर अपने विशिष्ट
रूप-रंगों में साकार हो उठती थी। उदाहरणतः जब वह पृथ्वी पर घिर

ो काली, नम रात और रात के गहन अंधकार का वर्णन करती, तो
की सहमी-सहमी रूखो-सी आवाज में वह मानो इस अंधकार को ध्वनि
ता। और जब वह अपना छोटा गम्भीर मुखड़ा आसमान की तरफ़
ठाकर उसे बताती: "ओह, कैसी घटा चली है!" तो मानो सहसा
का झोंका उसे छू जाता और बच्ची की आवाज में दूर, बहुत ऊंचाई
आसमान में रेंग रहे दैत्य की डरावनी गड़गड़ाहट सुनाई देती।

चौथा अध्याय

१

कभी-कभी संसार में दुःख, चिन्ताओं और क्लेश से परिपूर्ण प्रेम-मार्ग
ा अनुसरण करने के लिए भी कुछ आत्माओं का अवतरण होता है।
नके लिए पराये दुःख की चिंता जीवन की आवश्यकता होती है। प्रकृति
भी इन अनूठी आत्माओं को वह सौम्यता और सहनशक्ति प्रदान की
, जो उनके चिरध्येयों की पूर्ति में उनका मार्ग-दर्शन करती है और
ाकांक्षाओं एवं तृष्णाओं जैसे सांसारिक गुणों को उन तक नहीं फटकने
ती। यद्यपि महान है ये आत्माएं, फिर भी वे अवसर जरूरत से ज्यादा
म्भीर, जड़ और भावविहीन प्रतीत होती हैं। उनमें आत्मसंयम और
ार्थत्याग की एक स्थायी अनुभूति होती है और फलतः वे कर्त्तव्य के
टकाकीर्ण मार्ग का अनुसरण उसी तरह शांत चित्त से करती हैं, जैसे
ह अपने निजी सौभाग्य के हर्षमय मार्ग का। वे हिमावृत पर्वत शिखरों
ी भांति एकाकी और उदासीन दिखाई पड़ती हैं और उन्हीं की भांति
ौरवमय। और संसार के समस्त दुर्गुण, समस्त व्यसन उनके चरणों पर
ोटते हैं। उनके विषय में सांसारिक व्यक्तियों द्वारा कही गयी मानापमान
ी बातें उनका स्पर्श तक नहीं कर पातीं और उन तक पहुंचने के पूर्व
स प्रकार विलीन हो जाती हैं जैसे रविकर का स्पर्श होने पर ओस के
ण...

प्रकृति जब कभी बहुत सदय हो उठती है, तब वह अपना प्रसाद
िसी एक को देकर उसे उपर्युक्त आत्माओं की कोटि में रखती है। प्योत्र

की वह नन्ही सहेली ऐसी ही पवित्र आत्माओं में से एक थी। मां यह समझती थी कि यह बाल-मैत्री उसके अन्धे बेटे के लिए भाग्य [illegible] कितना बड़ा वरदान है। बूढ़े मक्सिम भी यह समझते थे और वह सोचने लगे थे कि अब जब बच्चे के पास वह सब कुछ है, जिसका अभाव उसे खटकता था, तो उसके मानसिक विकास का मार्ग साफ़, निर्बाध और निर्द्वंद्व हो जायेगा...

किन्तु यह भूल थी और एक भयंकर भूल।

२

बालक के जीवन के प्रथम वर्षों में मक्सिम यही समझते रहे कि वही बच्चे के मानसिक विकास पर पूरा-पूरा नियंत्रण रख रहे हैं। यद्यपि इस विकास की प्रत्येक गति शिक्षक के ही प्रत्यक्ष प्रभाव का परिणाम न थी, तो भी उन्हें इस बात का विश्वास था कि यदि बालक में कोई नयी प्रगति होगी, कोई नव मानसिक उत्थान होगा, तो उसका उन्हें ज्ञान अवश्य हो जायेगा और वह उसे नियंत्रित कर पायेंगे। परन्तु जब बच्चा बालपन तथा कुमारावस्था के संधिकाल में आया, तो मक्सिम ने देखा कि उनके बाल-शिक्षण-विज्ञान के ये बड़े-बड़े स्वप्न कितने आधारहीन थे। अब शायद ही कोई सप्ताह ऐसा जाता हो, जब अन्धे बालक में कोई न कोई नयी और कभी-कभी तो सर्वथा अप्रत्याशित बात देखने में न आती हो। और जब मक्सिम बच्चे के मस्तिष्क में उपजे किसी नये विचार अथवा किसी नयी कल्पना का स्रोत ढूंढने का प्रयत्न करते, तो उन्हें कोई सफलता न मिलती। बच्चे के अन्तस् की गहराइयों में अवश्य ऐसी कोई अज्ञात शक्ति काम कर रही थी, जो स्वतंत्र आध्यात्मिक विकास के अप्रत्याशित स्वरूपों को मानसिक धरातल तक लाकर उन्हें सब पर प्रकट कर देती थी। उसके शिक्षण में बाधा डालनेवाली जीवन की इन रहस्यपूर्ण प्रक्रियाओं के आगे सिवा नतमस्तक होने के मक्सिम के पास और चारा ही क्या था। ऐसा प्रतीत होता था कि प्रकृति के पास कोई ऐसी प्रेरक शक्ति, उद्घाटन का कोई ऐसा रहस्य है कि वह अन्धे बच्चे में ऐसी नयी-नयी धारणाएं पैदा करती है, जिनका विकास उसमें स्वतः अपने अनुभव से कभी सम्भव

ी नहीं होता और मामा मक्सिम को इसमें जीवन की निरंतर गति का आभास ोता। उस चिर जीवन का, जो असंख्य प्रक्रियाओं के रूप में क्रमशः थक-पृथक प्राणियों में गतिमान है।

पहले तो यह सोचकर मक्सिम को भय लगा कि अकेले वही बच्चे की ानसिक शक्ति का विकास करनेवाले शिक्षक नहीं हैं, बल्कि कोई और ीज भी है, जो न उनकी इच्छानुसार काम ही करती है और न उनसे भावित ही होती है। वह बच्चे के भविष्य के प्रति आशंकित हो उठे। न्हें यह भी शंका होने लगी कि कहीं बच्चे में ऐसी-ऐसी आकांक्षाएं घर ा कर लें, जिनके कारण बालक को अपार कष्टों का सामना करना पड़े। और वह बालक के ज्ञान के इन नये-नये स्वरूपों के स्रोतों का पता लगाने का प्रयत्न करने लगे, ताकि ... उन्हें बालक के हित में उन्हें सदा के लिए बंद कर दें।

बच्चे की इन अप्रत्याशित बातों पर मां का भी ध्यान गया। एक दिन प्रातःकाल पेत्रिक दौड़ता हुआ उसके पास आया। वह इतना उत्तेजित ा जितना पहले कभी नहीं हुआ था।

"मां, मां!" वह चिल्लाया, "मैंने एक सपना देखा है!"

"क्या देखा, मेरे बच्चे?" मां ने पूछा। उसकी आवाज में कोई दुःखमय आशंका थी।

"मैंने सपने में देखा ... कि ... मैं तुम्हें और मामा मक्सिम को देख रहा हूं ... और मैं सब कुछ देख रहा हूं। सब कुछ कितना सुन्दर था मां, कितना सुन्दर!"

"और क्या देखा, बेटे?"

"मुझे याद नहीं।"

"मेरी याद है?"

"नहीं," बालक विचारशील मुद्रा में बोला, "नहीं, मुझे कुछ याद नहीं, कुछ भी याद नहीं ... लेकिन मैंने देखा था, सचमुच देखा था..." क्षण भर चुप रहकर उसने कहा और साथ ही उसके चेहरे पर विषाद छा गया। अन्धी आंखों में आंसू भरे थे...

ऐसा कई बार हुआ और हर बार बच्चा अधिक उदास तथा अशांत हो जाता।

एक दिन ग्रहाते से गुजरते हुए मक्सिम को बैठक से, जहां ˙˙1
पाठ होते थे, किसी विचित्र ग्रभ्यास की सुर-ध्वनियां ग्राती हुई सुनाई दं
इसमें केवल दो सुर थे। पहले कुंजी-पटल की सबसे दाहिनी कुंजी
एक के बाद एक लगातार चोटों से ऊंचा सुर झंकारता ग्रौर यकायक उ
जगह नीचे सुर की गूंज फैल जाती। इस ग्रसाधारण संगीत का
मतलब? मामा मक्सिम तुरन्त घर की ग्रोर लौट पड़े ग्रौर दरवा
खोलकर उन्होंने जो कुछ देखा, उससे स्तम्भित रह गये।

बच्चा, जिसे दसवां साल लगा हुग्रा था, ग्रपनी मां के पैरों के प
एक छोटी-सी तिपाई पर बैठा था। उसी के पास गर्दन फैलाये तथा
को बेचैनी से इधर-उधर घुमाते हुए एक सारस खड़ा था, जिसे क
इयोखिम ने पाला था ग्रौर ग्रब पेत्रूस को दे दिया था। पेत्रूस इस प
को ग्रपने ही हाथों से खिलाता-पिलाता था; ग्रौर जहां-जहां वह जा
सारस भी उसके पीछे-पीछे हो लिया करता था। इस समय वह एक हा
से उसे पकड़े था ग्रौर दूसरा हाथ उसकी गर्दन पर ग्रौर फिर धड़ प
फेर रहा था। उसके चेहरे पर एकाग्रता का भाव था। इसी समय मां
जिसका चेहरा उत्तेजना से तमतमा रहा था ग्रौर ग्रांखों में विषाद छा
हुग्रा था, एक उंगली से एक ही सुर-कुंजिका तेजी के साथ दबाये जा र
थी, जिससे पियानो में से एक निरंतर झनझनाता ऊंचा सुर निकल र
था। इसके साथ ही ग्रपने स्टूल पर थोड़ा ग्रागे को झुककर वह बड़े य
से बच्चे के चेहरे पर दृष्टि लगाये थी। जब बालक का हाथ दूधिया सफे
परों पर फिसलता हुग्रा उस स्थान पर पहुंचता, जहां डैनों के किनारे
किनारे काले पर होते हैं, तो ग्रान्ना मिखाइलोव्ना फ़ौरन हाथ दूसरी
कुंजिका पर ले जाती ग्रौर कमरे में नीचा स्वर लुढ़कता हुग्रा गूं
उठता।

दोनों ही ग्रपने-ग्रपने कार्यों में इतने व्यस्त थे कि किसी को भी माम
मक्सिम के ग्राने का उस समय तक पता न चला जब तक कि वह ग्रावे
की भावना से मुक्त न हो गये ग्रौर उन्होंने स्वयं ग्रपने प्रश्न से यह ग्रभ्यास
रोक न दिया:

"ग्रान्ना, यह सब क्या तमाशा है?"

भाई की प्रश्नसूचक दृष्टि पर नजर पड़ते ही आन्ना मिखाइलोव्ना ने अपना सिर उस छोटी-सी बालिका की भांति लटका लिया, जिसे उसकी अध्यापिका ने शरारत करते हुए देख लिया हो।

"देखो ना, बात यह है ..." वह सकपकाकर बोली, "प्योत्र कहता है कि उसे सारस के परों के रंगों में अन्तर लगता है। लेकिन वह यह नहीं समझ पाता है कि उनमें क्या अन्तर है ... सच, उसने ख़ुद ही यह बात शुरू की थी और मुझे लगता है कि यह सच है..."

"और अगर लगता ही है, तो फिर?"

"कुछ नहीं ... मैं उसे जरा समझाना चाहती थी... रंगों में जो अंतर है, वैसा ही ध्वनियों में भी ... नाराज मत हो, मक्स, सच, मुझे लगता है कि दोनों में बहुत समानता है ..."

पहले पहल तो मक्सिम को बहन की इस सूझ से इतना आश्चर्य हुआ कि वह कुछ कह ही न सके। उन्होंने उससे अपना परीक्षण जारी रखने को कहा और बच्चे के चेहरे पर तनावपूर्ण भाव को देखते हुए निराशा से सिर हिला दिया।

"सुनो, आन्ना," बच्चे के कमरे से बाहर चले जाने के बाद उन्होंने कहा, "बच्चे के दिमाग़ में ऐसे प्रश्न पैदा नहीं करने चाहिए, जिनका पूरा-पूरा उत्तर कभी भी कोई भी नहीं दे सकता।"

"लेकिन प्रश्न तो स्वयं उसी ने किया था। सच, उसी ने ..." आन्ना मिखाइलोव्ना ने उन्हें टोक दिया।

"उससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता। बच्चे के लिए इसके अलावा कोई चारा नहीं कि वह अपने अंधेपन का आदी हो जाये और हमें यह प्रयत्न करना चाहिए कि वह प्रकाश का अस्तित्व ही भूल जाये। मैं स्वयं यही प्रयत्न करता रहता हूं कि उसपर ऐसा कोई बाहरी प्रभाव न पड़े, जिससे उसे ऐसे-ऐसे प्रश्न करने की नौबत आये, जिनका समुचित उत्तर न पाकर वह व्यथित हो। और यदि हम इन बाह्य-प्रभावों को उस तक पहुंचने से रोक सकें, तो वह कभी भी इनके अभावों का अनुभव न कर सकेगा, वैसे ही जैसे हम सभी पाचों इन्द्रियों के होते हुए छठी के अभाव में व्याकुल नहीं होते।"

"अनुभव करते हैं हम यह अभाव," मंद स्वर में युवा नारी ने प्रतिवाद किया।

एक दिन अहाते से गुजरते हुए मक्सिम को बैठक से, जहां संगीत के पाठ होते थे, किसी विचित्र अभ्यास की सुर-ध्वनियां आती हुई सुनाई दीं। इसमें केवल दो सुर थे। पहले कुंजी-पटल की सबसे दाहिनी कुंजी पर एक के बाद एक लगातार चोटों से ऊंचा सुर झंकारता और यकायक उसकी जगह नीचे सुर की गूंज फैल जाती। इस असाधारण संगीत का क्या मतलब? मामा मक्सिम तुरन्त घर की ओर लौट पड़े और दरवाजा खोलकर उन्होंने जो कुछ देखा, उससे स्तम्भित रह गये।

बच्चा, जिसे दसवां साल लगा हुआ था, अपनी मां के पैरों के पास एक छोटी-सी तिपाई पर बैठा था। उसी के पास गर्दन फैलाये तथा चोंच को बेचैनी से इधर-उधर घुमाते हुए एक सारस खड़ा था, जिसे कभी इयोखिम ने पाला था और अब पेत्रूस को दे दिया था। पेत्रूस इस पक्षी को अपने ही हाथों से खिलाता-पिलाता था; और जहां-जहां वह जाता सारस भी उसके पीछे-पीछे हो लिया करता था। इस समय वह एक हाथ से उसे पकड़े था और दूसरा हाथ उसकी गर्दन पर और फिर धड़ पर फेर रहा था। उसके चेहरे पर एकाग्रता का भाव था। इसी समय मां, जिसका चेहरा उत्तेजना से तमतमा रहा था और आंखों में विषाद छाया हुआ था, एक उंगली से एक ही सुर-कुंजिका तेजी के साथ बजाये जा रही थी, जिससे पियानो में से एक निरंतर झनझनाता ऊंचा सुर निकल रहा था। इसके साथ ही अपने स्टूल पर थोड़ा आगे को झुककर वह बड़े यत्न से बच्चे के चेहरे पर दृष्टि लगाये थी। जब बालक का हाथ दूधिया सफेद परों पर फिसलता हुआ उस स्थान पर पहुंचता, जहां डैनों के किनारे-किनारे काले पर होते हैं, तो आन्ना मिखाइलोव्ना फौरन हाथ दूसरी कुंजिका पर ले जाती और कमरे में नीचा स्वर लुढ़कता हुआ गूंज उठता।

दोनों ही अपने-अपने कार्यों में इतने व्यस्त थे कि किसी को भी मामा मक्सिम के आने का उस समय तक पता न चला जब तक कि वह आश्चर्य की भावना से मुक्त न हो गये और उन्होंने स्वयं अपने प्रश्न से यह अभ्यास रोक न दिया:

"आन्ना, यह सब क्या तमाशा है?"

भाई की प्रश्नसूचक दृष्टि पर नजर पड़ते ही आन्ना मिखाइलोव्ना ने अपना सिर उस छोटी-सी बालिका की भांति लटका लिया, जिसे उसकी अध्यापिका ने शरारत करते हुए देख लिया हो।

"देखो ना, बात यह है ..." वह सकपकाकर बोली, "प्योत्र कहता है कि उसे सारस के परों के रंगों में अन्तर लगता है। लेकिन वह यह नहीं समझ पाता है कि उनमें क्या अन्तर है ... सच, उसने ख़ुद ही यह बात शुरू की थी और मुझे लगता है कि यह सच है..."

"और अगर लगता ही है, तो फिर?"

"कुछ नहीं ... मैं उसे जरा समझाना चाहती थी... रंगों में जो अंतर है, वैसा ही ध्वनियों में भी ... नाराज मत हो, मक्स, सच, मुझे लगता है कि दोनों में बहुत समानता है ..."

पहले पहल तो मक्सिम को बहन की इस सूझ से इतना आश्चर्य हुआ कि वह कुछ कह ही न सके। उन्होंने उससे अपना परीक्षण जारी रखने को कहा और बच्चे के चेहरे पर तनावपूर्ण भाव को देखते हुए निराशा से सिर हिला दिया।

"सुनो, आन्ना," बच्चे के कमरे से बाहर चले जाने के बाद उन्होंने कहा, "बच्चे के दिमाग़ में ऐसे प्रश्न पैदा नहीं करने चाहिए, जिनका पूरा-पूरा उत्तर कभी भी कोई भी नहीं दे सकता।"

"लेकिन प्रश्न तो स्वयं उसी ने किया था। सच, उसी ने ..." आन्ना मिखाइलोव्ना ने उन्हें टोक दिया।

"उससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। बच्चे के लिए इसके अलावा कोई चारा नहीं कि वह अपने अंधेपन का आदी हो जाये और हमें यह प्रयत्न करना चाहिए कि वह प्रकाश का अस्तित्व ही भूल जाये। मैं स्वयं यही प्रयत्न करता रहता हूं कि उसपर ऐसा कोई बाहरी प्रभाव न पड़े, जिससे उसे ऐसे-ऐसे प्रश्न करने की नौबत आये, जिनका समुचित उत्तर न पाकर वह व्यथित हो। और यदि हम इन बाह्य-प्रभावों को उस तक पहुंचने से रोक सकें, तो वह कभी भी इनके अभावों का अनुभव न कर सकेगा, वैसे ही जैसे हम सभी पांचों इन्द्रियों के होते हुए छठी के अभाव में व्याकुल नहीं होते।"

"अनुभव करते हैं हम यह अभाव," मंद स्वर में युवा नारी ने प्रतिवाद किया।

"आन्ना !"

"हां हां, हमें यह अभाव खटकता है," वह कहती गयी, "ह
प्रायः असंभव के वियोग में दुःखी रहते हैं ..."

फिर भी उसने भाई के परामर्श को मान लिया। परन्तु इस बा
मक्सिम ग़लती पर थे। बाह्य प्रभावों को उस तक न पहुंचने देने की अपन
उत्सुकता में वह उन महान प्रेरणाओं को बात बिल्कुल भूल गये थे, जिन
स्वयं प्रकृति ने बच्चे की आत्मा में बोया था।

४

किसी ने ठीक कहा है—"नयना देत बताय सब दिल की हेत अहेत।
शायद यह कहना अधिक ठीक होगा कि नेत्र उन खिड़कियों के समान हैं
जिनके द्वारा आत्मा बाह्य संसार के प्रभावों को ग्रहण करती है। कौन क
सकता है कि हमारी मनोवृत्ति का कितना अंश प्रकाश की अनुभूतिय
पर निर्भर है?

मानव जीवन उस अनन्त जीवन श्रृंखला की एक कड़ी है, ज
आवागमन के रूप में अनादि काल से शुरू होती है और अनन्त भविष
तक चलती चली जाती है। और अब ऐसी ही एक कड़ी में—अन्धे बाल
में—दुर्भाग्यवश ये खिड़कियां बंद रह गयी थीं: सारा जीवन अंधका
में बीतना था। किंतु क्या इसका अर्थ यह है कि उसकी आत्मा में वे स
तार सदा के लिए ही टूट गये थे, जिनके द्वारा आत्मा प्रकाश की अनुभू
तियों पर प्रतिक्रिया करती है। नहीं, प्रकाश ग्रहण की शक्ति इस
अंधकारमय जीवन में भी बनी रहनी थी और उसके पश्चात भावी पीढ़ियं
को प्राप्त होनी थी। अन्धे बालक की आत्मा सामान्य मानव आत्मा थी
और उसमें वे सारी क्षमताएं थीं, जो किसी भी साधारण मनुष्य में हो
सकती हैं। और चूंकि प्रत्येक क्षमता में सफलता की कामना होती है,
इसलिए इस अंधकारमय आत्मा में भी प्रकाश की ज्योति देख पाने की
एक अदम्य आकांक्षा थी।

उस अन्धे बालक के अन्तस् की गहराइयों में कहीं कोई ऐसी शक्ति
अवश्य थी, जो उसे उत्तराधिकार में मिली थी और अब "क्षमता" के

रूप में अछूती सोयी पड़ी थी। वह प्रकाश की प्रथम किरण के साथ ही जाग उठ सकती थी। लेकिन खिड़कियां बंद हैं: बालक का भाग्य निर्णीत है: वह कभी भी यह प्रकाश-किरण नहीं देख पायेगा, उसका सारा जीवन अंधकार में बीतेगा! ..

और इस अन्धकार में बालक की धुंधली कल्पनाएं मंडराती रहती थीं।

यदि बच्चे को ग़रीबी के बीच जिन्दगी बसर करनी पड़ती, यदि वह दुःख-दर्द की चक्कियों में पिसता, तो शायद उसके विचार इन बाह्य कष्टों के स्रोत ढूंढ़ने में ही लगे रहते। किन्तु उसके परिवारवालों ने इस बात का ध्यान रखा था कि उसे किसी तरह से कष्ट और चिंता की अनुभूति नहीं हो। उन्होने उसके लिए शांत वातावरण की व्यवस्था की थी। और अब उसकी आत्मा में व्याप्त इस मौन के बीच उसकी आन्तरिक कामना अधिक सजीव हो उठी थी। अपने चारों ओर के अन्धकार और ख़ामोशी के बीच वह निरन्तर एक ऐसी अस्पष्ट आवश्यकता का अनुभव करने लगा, जो पूर्ति के लिए व्याकुल थी। यह उन आन्तरिक शक्तियों को एक स्वरूप देने की उत्कट अभिलाषा थी, जो उसके हृदय की गहराइयों में सुप्तावस्था में पड़ी थीं।

इन सबके कारण बालक में ऐसी-ऐसी विचित्र एवं अस्पष्ट आशाओं और प्रेरणाओं का जन्म हुआ जैसी कि प्रायः हम सबों को अपने बचपन में हुआ करती हैं, जब हम अपनी कल्पनाओं के साथ-साथ स्वयं भी कल्पना लोक में उड़ जाने के सुंदर सपने देखा करते हैं।

अंततः यही सब बाल मस्तिष्क के उन निष्फल प्रयासों का कारण था, जिनकी प्रतिच्छाया उसके मुखमंडल पर वेदनामय प्रश्न के रूप में पड़ती थी। उसमें दृष्टि द्वारा मानस पर पड़नेवाले प्रभावों की जन्मजात "क्षमताएं" तो थीं, किंतु इस जीवन में वे अछूती पड़ी हुई थीं। ये क्षमताएं बच्चे के बालसुलभ मस्तिष्क में निराकार अस्पष्ट अंधेरे आभासों के रूप में उठतीं और उसमें पीड़ादायक और अव्यक्त प्रयासों को जन्म देती थीं।

यह प्रकृति थी, जो इस वैयक्तिक "अपवाद" के विरुद्ध मूक प्रतिवाद करने के लिए व्याकुल हो उठी थी और उस सार्वभौमिक सिद्धान्त का पुनः प्रतिपादन करने के लिए उत्सुक थी, जिसका यहां उल्लंघन किया जा चुका था।

मक्सिम इस बात का प्रयत्न अवश्य करते थे कि बच्चे पर कोई बाह्य प्रभाव न पड़े। परन्तु वह बालक के अन्तस् की अपूर्त आवश्यकताओं के दबाव को निर्मूल करने में असमर्थ थे। अपनी सजगता से वह अधिक से अधिक इतना कर पाये कि इस प्रकार की आवश्यकताओं का अनुभव और फलतः अन्धे बच्चे के अन्तस् की पीड़ा समय से पहले न हो। शेष सब बालक के भाग्य की बात थी और उसे उसका कटिन फल सहना ही था।

भाग्य की काली घटाएं उमड़ती चली आ रही थीं। प्रत्येक वर्ष के साथ बालक की स्वाभाविक स्फूर्ति उतरते हुए ज्वार की भांति कम होती जा रही थी और साथ ही उसकी आत्मा में अस्पष्ट-सी, किंतु निरंतर छायी रहनेवाली उदासी का भाव निरंतर बढ़ता जा रहा था। इसका प्रभाव उसके स्वभाव पर भी पड़ रहा था। बचपन में बाह्य संसार की प्रत्येक छाप के साथ उसके अधरों पर जो मुस्कराहट, उल्लास की जो छटा बिखर जाती थी, अब वह धीरे-धीरे कम होती जा रही थी। अब वह जीवन की मुस्कराहट, उल्लास और हास्य की रंचमात्र अनुभूति ही कर पाता था। परन्तु दक्षिणी रूस की प्रकृति में और उसके लोक-गीतों में सुनाई देनेवाली उदासी, म्लानि और करुणा की प्रत्येक धूमिल, अस्पष्ट ध्वनि उसके हृदय में प्रतिध्वनित होती थी। "खुले खेत में क़ब्र हवा से बातें करे" जब वह यह गीत सुनता, तो हर बार उसकी आंखों में आंसू आ जाते और वह सुनने के लिए स्वयं खेतों में निकल जाता। उसमें एकाकी रहने की कामना बढ़ती जा रही थी। जब पढ़ाई से ख़ाली समय में वह अपनी एकाकी सैर पर निकल जाता, तो घर-वाले उस ओर न जाने का प्रयत्न करते, ताकि उसके एकांत में बाधा न पड़े। वह स्तेपी में किसी पुरानी क़ब्र पर अथवा नदी तट के टीले पर या फिर उस चिरपरिचित चट्टान पर जा बैठता और बस पत्तियों की सरसराहट और घास की फुसफुसाहट या स्तेपी की हल्की-हल्की सांसें सुनता रहता। यह सब उसके अन्तस् की गहराइयों में छिपे हुए भावों से एकाकार हो जाता। जहां तक उसके लिए संभव था, यहां उसे प्रकृति का पूर्ण बोध हो जाता था। यहां प्रकृति उसके सामने ऐसी-ऐसी समस्याएं रखकर

उसे क्लेश नहीं पहुंचाती थी, जिनका समाधान न हो सकता हो। यहां वायु थी, जो सीधे उसके हृदय में प्रवेश करके उसकी अनुभूतियों को अनुप्राणित कर रही थी, यहां घास थी, जो सहानुभूति के शब्दों में उसे सान्त्वना दिया करती थी। और जब यह किशोर आत्मा अपने चारों ओर के शान्त वातावरण के साथ तद्रूप प्रकृति के हृदय की उष्णता पाकर शान्त हो जाती, तो उसे ऐसा प्रतीत होता कि उसके सीने में कोई ऐसी चीज उठ रही है, जो उसके सारे शरीर में व्याप्त हो रही है। ऐसे क्षणों में वह ठंडी, नम घास में अपना मुंह छिपा लेता और उसके ख़ुशी के आंसू बहते रहते, बहते रहते। अथवा कभी-कभी वह अपनी बांसुरी उठाता और फिर उससे ऐसी-ऐसी करुण धुनें निकालता, जो उसकी आन्तरिक अनुभूतियों और स्तेपी के शान्त वातावरण के अनुरूप होतीं। और तब वह सारी दुनिया को भूल जाता।

ऐसे समय यदि उसे किसी मनुष्य की बोली सुनाई पड़ जाती, तो उसकी मानसिक स्थिति डगमगा जाती और उसके सारे शरीर में झनझनाहट होने लगती। और यह स्वाभाविक भी था। ऐसे क्षणों में सौहार्द का प्रसाद तो उन्हीं लोगों से मिल सकता है, जो हृदय के सबसे निकट हों, उसे सबसे अधिक प्रिय लगें। और बालक की ऐसी एक ही सहेली थी, जो उसी की अवस्था की थी—पासवाली जागीर की सुनहरे बालों वाली छोटी-सी लड़की...

उनकी मित्रता बराबर दृढ़ होती जा रही थी और उसमें पूर्ण पारस्परिकता थी। अगर एवेलीना अपने मित्र को अपनी शांति, अपने जीवन का मौन उल्लास प्रदान करती थी और उसे अपने चारों ओर के जीवन की नूतनताओं की अनुभूति कराने में उसकी सहायता करती थी, तो अन्धा बालक उसे अपनी ओर से देता था... अपना दुःख, अपना दर्द। ऐसा लगता था कि जब बालिका को उसके दुःख और शोक का सर्वप्रथम ज्ञान हुआ था, तो उसके नन्हे नारी हृदय पर गहरा आघात हुआ था। परन्तु इस आघात के कारण को अलग कर देना तो उसकी मृत्यु ही थी। स्तेपी में टीले पर जब वह पहली बार अन्धे बालक से मिली थी, तो उसके नन्हे नारी हृदय को सहानुभूति की पीड़ा का तीव्र अनुभव हुआ था और अब उसका साथ उसके लिए नितांत आवश्यक हो गया

था। उसकी जुदाई में मानो उसका घाव खुल जाता, पीड़ा जाग उठती और एवेलीना अपने मित्र की देखरेख करके अपनी व्यथा शान्त करने के लिए उसके पास दौड़ी चली आती।

६

शरद् ऋतु की एक सुहावनी संध्या को दोनों परिवार घर के सामने घास के मैदान पर बैठे जगमगाते, गहरी नीलिमा लिये तारान्छादित आकाश का आनंद ले रहे थे। अन्धा बच्चा हमेशा की तरह अपनी मां के पास बैठा था। एवेलीना उसी की बगल में थी।

एक क्षण के लिए बातों का सिलसिला टूट गया। संध्या में नीरवता थी। कभी-कभी केवल पत्तियां सिहर उठतीं और कुछ फुसफुसाकर तत्क्षण मौन हो जातीं।

नीरवता के इस क्षण में घनी नीलिमा की गहराइयों में से कहीं से एक चमकता हुआ तारा टूटा और आकाश में प्रकाश की रेखा बनाकर तेजी से विलीन हो गया। उसके पीछे की प्रकाश रेखा भी धीरे-धीरे अगोचर हो गयी। सब की आंखें ऊपर उठ गयीं। मां पेत्रिक का हाथ पकड़े बैठी थी। उसे बेटे के सिहरने और चौंक उठने का आभास हुआ।

"यह... यह क्या था?" उसने मां की ओर अपना व्याकुल चेहरा घुमाया।

"बेटे, यह तारा टूटा था।"

"हां, तारा," कुछ सोचते हुए उसने कहा। "मुझे पता था।"

"तुझे कैसे पता था, मेरे बच्चे?" मां की आवाज़ में व्यथित आशंका की भावना व्यक्त हो रही थी।

"हां, हां, वह सच कहता है," एवेलीना बोली। "वह बहुत-सी बातें जानता है ... 'ऐसे ही' ..."

बाह्य संसार की यह अनुभूति, जो दिन प्रति दिन बढ़ती ही जा रही थी, कौमार्य और युवावस्था के बीच के नाजुक समय की सूचक थी। परन्तु अभी तक पेत्रिक का विकास बहुत कुछ शांतिपूर्वक हो रहा था। कभी-कभी तो लगता था कि वह अपने अंधेपन का आदी हो गया था और एक

विचित्र-सा संतुलित विषाद, जो उसके जीवन की सहज पृष्ठ-भूमि बन गया था, जिसमें आशा की कोई किरण न दिखती थी, किन्तु साथ ही जिसमें तीव्र उद्वेग न था, अब कुछ कम हो गया था। किन्तु यह केवल क्षणिक प्रशांति का काल था। विश्राम के ये क्षण प्रकृति मानो जान-बूझ कर देती है: इन क्षणों में युवा आत्मा सुदृढ़ होकर नये-नये तूफ़ानों का सामना करने को तैयार होती है। इन प्रशांति के क्षणों में नये-नये प्रश्न उठते हैं। एक झटका और शांत आत्मा में ऐसी उथल-पुथल मच जायेगी, जैसे यकायक उठ आये तूफ़ान से समुद्र में होती है।

पांचवां अध्याय

१

ऐसे ही कुछ साल और बीत गये।

शांत जागीर में कोई परिवर्तन न हुआ। बीच-वृक्ष बाग़ में वैसे ही मर्मर करते रहे। हां, उनकी पत्तियां अब पहले से ज्यादा घनी, ज्यादा गहरे रंग की हो गयी थीं। सफ़ेद मकान पहले की ही तरह आकर्षक दिखाई पड़ते थे, केवल उनकी दीवारों में थोड़ा-सा परिवर्तन हो गया था और समय के आघात उनपर साफ़-साफ़ झलक पड़ रहे थे। इयोख़िम पहले की भांति ही ब्रह्मचारियों जैसा जीवन व्यतीत करता हुआ घोड़ों की रखवाली में लगा था। बांसुरी की आवाज़ अब भी अस्तबल से संध्या की उन्हीं घड़ियों में आती सुनाई पड़ती, लेकिन अब फ़र्क़ यह था कि इयोख़िम स्वयं अन्धे पानिच की बांसुरी या पियानो-वादन (उसके लिए सब बराबर था) सुनना अधिक पसंद करता था।

मक्सिम के बालों में और अधिक सफ़ेदी आ गयी थी। पोपेल्स्की दम्पति के और कोई बच्चा न हुआ था और अन्धा बालक इकलौता रह गया था। अब वही एक बिन्दु था, जिसपर इन जागीरदारों का सारा जीवन केन्द्रित था। उसी के लिए इस दम्पति ने अपने को एक छोटे-से दायरे में सीमित कर लिया था। और वे अपने शांत जीवन से संतुष्ट थे। पड़ोसी जागीर

का भी उतना ही शांत जीवन उनके साथ मिल गया था। इस प्रकार बालक, जो अब जवान हो चुका था, गरम मकानों में रखे हुए पौधे की तरह बड़ा हुआ। उसे बराबर उन कठोर प्रभावों से बचाया जाता रहा, जो उसपर बाह्य क्षेत्रों से आकर पड़ सकते थे।

पहले की ही तरह वह अन्धकारमय संसार के केंद्र में खड़ा था। ऊपर अन्धकार, नीचे अन्धकार, चारों ओर अन्धकार—निस्सीम, अनन्त, अमेद्य। उसकी भावुक प्रकृति प्रत्येक नये प्रभाव के प्रत्युत्तर में वीणा के तने हुए तारों की तरह झंकृत हो उठने को तत्पर रहती थी। अंधे की मनोस्थिति मे प्रतीक्षा का यह प्रखर भाव स्पष्टतः प्रकट होता था; उसे लगता था कि किसी भी क्षण यह अन्धकार अपने अदृश्य हाथ बढ़ाकर उसे छुयेगा और उसकी आत्मा में प्रबोधन की विह्वल प्रतीक्षा में सो रही अनुभूतियों को जगा देगा।

किन्तु घर का चिरपरिचित अन्धकार उसके लिए सदय होने के साथ ही साथ घटनाशून्य भी बना हुआ था। हां, यदाकदा वह उसके कानों में पुराने बाग़ के वृक्षों की मधुर मर्मर जरूर पैदा कर देता और यह मर्मर उसके मस्तिष्क को थोड़ी शांति देती, थोड़ा सन्तोष। दूरस्थ दुनिया के बारे में जो कुछ उसने जाना-समझा था, उसका माध्यम था उसके गाने, उसकी पुस्तकें और इतिहास। यहीं बाग़ की इस करुण मर्मर और घर की मौन शान्ति के बीच उसे सुनी-सुनायी बातों द्वारा दूरस्थ जीवन की झंझाओं और हलचल का भी ज्ञान हुआ था। किंतु यह सब उसके लिए किसी मायाई परदे से ढका हुआ सा और गीत अथवा लोक-कथा के समान था।

लगता था इस तरह सब ठीक था। मां देख रही थी कि उसके बेटे की आत्मा मानो चहारदीवारी में बंद मायाई अर्द्धनिद्रा में खोयी हुई थी। यह अवस्था कृत्रिम थी, किंतु उसमें शांति थी, निश्चिंतता थी। और वह इस संतुलन को भंग नहीं करना चाहती थी, वह डरती थी कि बेटे की शांति भंग न हो जाये।

एवेलीना भी बड़ी हो गयी थी। वह इस मायाई निस्तब्धता को अपनी स्पष्ट आंखों से देखती थी, जिनमें कभी-कभी भविष्य की चिंताभरी उलझन झलक जाती थी, परंतु अधीरता का नामोनिशान भी उनमें नहीं था। इन वर्षों में पान पोपोल्स्की ने अपनी जागीर को एक आदर्श जागीर बना

दिया था। परन्तु जहां तक बेटे के भविष्य का संबंध था, इस भले आदमी को इससे कुछ वास्ता न था। वह इस बात का आदी थे कि सब कुछ अपने आप हो जाता है। केवल मामा मक्सिम अपने स्वभाववश इस निस्तब्धता को मुश्किल से सह रहे थे और वह भी इसलिए कि वह इसे अस्थायी और अपनी योजना का एक भाग मानते थे। उनका तर्क था कि युवक-आत्मा को संतुलित होने तथा शक्ति संचय करने का अवसर मिलना चाहिए, ताकि वह जीवन की विभीषिकाओं का सामना कर सके, उनसे मोर्चा ले सके।

इस बीच घर की चहारदीवारी के बाहर, शांति और निस्तब्धता के इस मायाई चक्र के बाहर जीवन की हलचल थी, लहरें थीं, उफान थे। आखिर वह समय आया, जब बूढ़े शिक्षक ने निश्चय किया कि इस मायाई चक्र को तोड़ दिया जाये और घर के दरवाजे खोल दिये जायें, ताकि बाहर की ताजी हवा भीतर आ सके।

२

प्रथम अवसर के लिए मामा मक्सिम ने अपने एक वृद्ध मित्र को बुलाने का निश्चय किया। उनका यह मित्र लगभग सत्तर वेर्स्ता* दूर रहता था। स्तावृचेन्को नामक अपने इस मित्र से मक्सिम समय-समय पर मिला करते थे। लेकिन अब, जब मक्सिम को यह मालूम हुआ कि उनके मित्र के यहां कुछ युवक भी आये हुए हैं, तो उन्होंने उन सबको अपने यहां आने और आतिथ्य स्वीकार करने के लिए लिखा। निमंत्रण खुशी-खुशी स्वीकार कर लिया गया—बूढ़े ने इसलिए स्वीकार किया कि मक्सिम से उसकी पुरानी दोस्ती थी और उन युवा व्यक्तियों ने इसलिए कि मक्सिम यात्सेन्को के नाम में अब भी जादू था और पुरानी परम्पराएं अब भी उनके नाम से जुड़ी हुई थीं। इन युवकों में से दो तो स्तावृचेन्को के पुत्र थे—एक कीयेव विश्वविद्यालय का विद्यार्थी था, जो (जैसी कि उस समय लोगों में धुन थी) भाषा विज्ञान एवं साहित्य का अध्ययन कर रहा था;

---

*वेर्स्ता = १.०६ किलोमीटर।—सं०

दूसरा सेंट-पीटर्सबर्ग के संगीतविद्यालय में पढ़ रहा था। तीसरा एक युवा कैडेट था, जो एक पड़ोसी जमींदार का पुत्र था।

स्तावूचेन्को एक हृष्टपुष्ट बूढ़ा आदमी था—बाल सफ़ेद, कज़ाक जैसी नीचे झुकी हुई लम्बी-लम्बी मूंछें, लम्बी-चौड़ी कज़्ज़ाकी सलवार पेटी में लटकता हुआ तम्बाकू का बटुआ और पाइप। बस यही उसका हुलिया था। वह सिवा उक्राइनी के दूसरी भाषा नहीं बोलता था। जब वह सफ़ेद उक्राइनी लबादा तथा कढ़ी हुई उक्राइनी क़मीज़ें पहने अपने दोनों बेटों के बीच खड़ा हो जाता, तो गोगोल का तारास बूल्बा ही लगता। किन्तु उसमें बूल्बा के रोमानी जीवन का कोई भी अंश न था। स्तावूचेन्को एक ज़मींदार था और दुनिया देखे था। सामन्तशाही के युग में भी जब भू-दासत्व की प्रथा थी, सारी ज़िन्दगी उसने अपना काम पूरी होशियारी के साथ किया था। और अब इस प्रथा के ख़त्म कर दिये जाने पर लोगों के बीच जो नये-नये संबंध पैदा हो गये थे, उनमें भी उसने अपनी पटरी बिठा ली थी। वह किसानों को उसी प्रकार जानता-समझता था जैसा एक जागीरदार जानता है—गांव के हर किसान के बारे में, उस-की हर गाय और उसकी जेब के एक-एक पैसे के बारे में।

हां, अगरचे बूढ़ा अपने बच्चों से बूल्बा जैसी मुक्केबाजी पर नहीं उतरता था, लेकिन इसमें कोई शक नहीं कि कोई भी जगह हो, कैसा भी मौक़ा हो, उनमें झपट ज़रूर हो जाती और झपट भी होती, तो बड़ी तगड़ी होती। कहीं भी वे रहे और उनके साथ कैसे ही व्यक्ति क्यों न हों, बस बेबात की बात में तू-तू मैं-मैं शुरू हो जाती और फिर ख़त्म ही होने में न आती। ज़्यादातर बात बूढ़े की तरफ़ से शुरू होती; वह अपने "आदर्श पानियों" पर चुटकियां लेता, वे ताव खाते, ख़ुद बूढ़ा भी जोश में आ जाता और फिर एक कल्पनातीत होहल्ला मचने लगता, जिसमें दोनों पक्ष एक दूसरे को ख़ूब खरी-खोटी सुनाते।

यह "पिता और पुत्रों" के बीच सर्वज्ञात अंतर की ही प्रतिच्छाया थी; हां, यहां पीढ़ियों के अंतर की अभिव्यक्ति में वैसी उग्रता न थी, जैसी कि उस समय पिता और पुत्रों के संबंधों में पायी जाती थी। चूंकि उन दिनों के युवक बचपन से ही स्कूलों में पढ़ने भेज दिये जाते थे, इसलिए वे देहातों में सिर्फ़ छठे-छमाही, कभी-कभी छुट्टियों में ही आते थे। यही वजह थी कि उन्हे साधारण जनता का वैसा ठोस व्यावहारिक

ज्ञान न था जैसा कि साल ब साल अपनी जागीरों पर रहनेवाले उनके बाप-दादाओं को हुआ करता था। जब हमारे समाज में "जनता को प्यार करो" आन्दोलन छेड़ा गया, उस समय स्ताव्रूचेन्को के बेटे माध्यमिक स्कूल के आखिरी वर्षों में पढ़ रहे थे। वे अपने क्षेत्र की जनता के अध्ययन में लग गये, लेकिन उनका अध्ययन किताबों के पन्नों से शुरू हुआ। कुछ समय बाद वे बढ़कर अध्ययन के दूसरे चरण में पहुंच गये—यानी अब उन्होंने लोक-कला में व्यक्त होनेवाली "जन-भावना" का प्रत्यक्ष निरीक्षण आरम्भ किया। दक्षिण-पश्चिमी प्रदेश के धनी वर्ग के युवकों में उस समय एक विचित्र रिवाज चल पड़ा था। वह था "लोगों के बीच आने-जाने का"; और जब कभी इसकी नौबत आती, तो सफ़ेद उक्राइनी लबादा और कढ़ी हुई क़मीज़ डाटे वे गांवों में इधर-उधर घूमा करते। वे गांव के लोगों की आर्थिक दशा की ओर विशेष ध्यान नहीं देते थे। बस गांव-गांव जाकर लोक गीतों के शब्द और संगीत लिखते, जनश्रुतियों का अध्ययन करते और यह तुलना करते कि ऐतिहासिक तथ्य जनता के स्मृति-पटल पर किस रूप में सुरक्षित हैं। किसानों के जीवन को वे रोमांटिक राष्ट्रीयता के काव्यमय दर्पण में देखते थे। बड़े-बूढ़े भी ऐसा करने के ख़िलाफ़ न थे, फिर भी वे कभी भी एकमत नहीं हो पाते थे।

जब बहस के दौरान विद्यार्थी स्ताव्रूचेन्को तमतमाता चेहरा लिये और आंखों में चिनगारियां भरे भाषण देने लगता, तो बूढ़ा स्ताव्रूचेन्को चेहरे पर शरारतभरी मुस्कान लिये मक्सिम की बग़ल में कोहनी चुभाता और कहता: "सुन इसको, सुन! क्या शानदार बातें करता है, साला!.. देखो तो, एकदम पूरा विद्वान है। पर, ओ विद्वान, ज़रा बता ना हमें भी कैसे मेरे किसान नेचीपोर ने तेरा उल्लू खींचकर रख दिया था?"

बूढ़ा अपनी मूंछें मरोड़ता और क़हक़हे लगाता हुआ ज़ोर-ज़ोर से अपने बेटों तथा नेचीपोर की कहानी कह डालता। उसके वर्णन में उक्राइनी हास्य एवं चुटकियों की कोई कमी न रहती। जवान शर्म से लाल हो जाते, पर जवाब देने में वे भी कसर न छोड़ते। वे कहते: "यह भी कोई बात हुई कि हम तुम्हारे फ़लां-फ़लां गांव के नेचीपोर या फ़ेदको को जानें ही। हमें इन सबसे क्या मतलब, हम तो सारी जनता का अध्ययन कर रहे हैं, एक ऊंचे ध्येय को सामने रखकर जीवन का अध्ययन कर रहे हैं। यही एक तरीक़ा है, जिससे ठीक-ठीक निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं और

"यह सब कुछ बहुत अच्छा है—मेरा मतलब है आप लोगों ने अपने पिता से जो कुछ कहा। सिर्फ़ ..."

"सिर्फ़ क्या?"

एवेलीना ने तुरन्त कोई उत्तर नहीं दिया। उसने कढ़ाई घुटनों पर रख दी, उसपर हाथ फेरा और सिर थोड़ा झुकाकर उसे ध्यान से देखने लगी। यह कहना मुश्किल था कि वह क्या सोच रही थी—शायद यह कि अगर उसने कढ़ाई में दूसरा नमूना डाला होता, तो ज्यादा अच्छा होता, या शायद अपने उत्तर पर मनन कर रही थी।

इस बीच युवक मंडली उसका उत्तर सुनने को बेचैन थी। विद्यार्थी ने कोहनी पर थोड़ा उठकर लड़की की ओर अपना कौतूहलभरा चेहरा घुमा दिया। उसका बड़ा भाई शान्त, प्रश्नसूचक नेत्रों से उसे देखता हुआ बैठा रहा। अन्धे ने अपनी सहज मुद्रा बदली, वह तन गया और फिर उसने सबकी ओर से चेहरा मोड़कर गरदन खींच ली।

"सिर्फ़ यह कि," एवेलीना ने धीरे से कहा, वह अभी तक कढ़ाई पर हाथ फेरे जा रही थी, "हर कोई जिन्दगी के एक ही रास्ते पर नहीं चलेगा। हम सब अपना-अपना भाग्य साथ लाये हैं।"

"हे भगवान," विद्यार्थी तपाक से बोल उठा, "कितनी गम्भीर विद्वत्ता है! वाह! तुम्हारी उम्र क्या है, पान्ना एवेलीना, ज़रा बताओ तो!"

"सत्रह," उसने सहज भाव से उत्तर दिया, लेकिन फिर तुरन्त ही उत्सुकता से कहने लगी, "और तुम सोचे रहे थे ज्यादा है, है ना?"

युवक मंडली हंस पड़ी।

"यदि मुझसे तुम्हारी आयु के बारे में पूछा जाये," विद्यार्थी बोला, "तो मैं यह निश्चय न कर पाऊंगा कि तेरह और तेईस के बीच क्या कहूं। सच कभी-कभी तो तुम बिल्कुल बच्ची जैसी लगती हो, और बातें कभी-कभी बड़ी अक़्लमंद बूढ़ा-सी करती हो।"

"गम्भीर मामलों में गम्भीरता के साथ ही बात करनी चाहिए, गवीलो पेत्रोविच," युवती ने बुद्धिमानी दिखाते हुए उत्तर दिया और फिर कढ़ाई करने लगी।

क्षण भर को सब मौन हो गये। एवेलीना की सुई पूरी गति से अपना काम कर रही थी। और युवक इस नन्ही-सी शान्त एवं धीर युवती की ओर उत्सुक दृष्टि से देख रहे थे।

6*

प्योत्र के साथ पहली मुलाक़ात के बाद से एवेलीना निश्चय ही काफ़ी बड़ी हो गयी थी, लेकिन छोटे स्तावूचेन्को का कहना ग़लत न था। पू नन्ही, दुबली-पतली सृष्टि प्रथम दृष्टि में बालिका ही लगती थी, किंतु उसकी मंथर और नपी-तुली चाल उसमें एक नारी की गंभीरता का आभास देती थीं। उसके चेहरे से भी ऐसा ही प्रभाव पड़ता था। लगता है मुखड़े केवल स्लावों में देखने को मिलते हैं: आकृति – आकर्षक प्र कोमल-मृदुल; आंखें – नीली, शान्त और अचंचल; सफ़ेद गालों पर ब कम ही लाली आती है, किंतु यह वह सफ़ेदी नहीं, जिसपर किसी क्षण तीव्र कामना की लाली दौड़ सकती है; यह हिम की शीतल श्वेतिमा है। उसके लम्बे-लम्बे, सुनहरे बालों का रंग संगमरमरी कनपटियों प थोड़ा गहरा था। भारी चोटी में गुथे हुए वे पीछे को लटक रहे थे। ज वह चलती थी, तो लगता था कि यह भारी चोटी उसके सिर को पीछे की ओर खींच सी रही है।

प्योत्र भी बड़ा हो गया था, उसमें प्रौढ़ता आ गयी थी। इस समय वह युवक मंडली से थोड़ा हटकर बैठा था और यदि कोई उसे देखता, तो वह उसके ख़ूबसूरत चेहरे पर निगाह डालते ही प्रभावित हो उठता, क्योंकि उसका चेहरा भावाभिव्यक्ति की दृष्टि से दूसरों से भिन्न था; और आत्मा के प्रत्येक संवेदन के साथ उसमें रह-रह कर परिवर्तन हो रहे थे। उसके मस्तक पर कभी-कभी हल्की झुर्रियां दिखाई पड़ जातीं। उसके काले घुंघराले बाल उभरे मस्तक पर लहराते गिर रहे थे। गालों पर कभी-कभी गहरी लाली दौड़ जाती और फिर तुरंत ही उनपर दूधिया सफ़ेदी छा जाती। निचला होंठ, जो कोनों में थोड़ा नीचे को मुड़ा हुआ था, रह-रह कर फड़क उठता था, भौंहें तन जाती थीं और चंचल हो जाती थीं और बड़ी-बड़ी सुंदर आंखें, जो स्थिर जड़वत् एक ही दिशा में देखती रहती थीं, उसके चेहरे को उदासी का एक असाधारण भाव प्रदान करती थीं।

"तो," विद्यार्थी ने कुछ देर बाद कहना शुरू किया, "पान्ना एवेलीना का विचार है कि हम जिन बातों के बारे में कह-सुन रहे थे, वे औरत के

दिमाग़ के बाहर की चीजें है, और उसकी दुनिया बस चूल्हा फूंकना या बच्चों को देखरेख करना ही है।"

युवक के स्वर में आत्मसंतोष की झलक थी (उन दिनों ये बातें एकदम नयी थीं) और व्यंग की उक्ति। एक क्षण के लिए शांति छायी रही। एवेलीना के चेहरे पर उत्तेजना की लाली दौड़ गयी।

"आप अपने निष्कर्षों पर आने में जल्दबाजी कर रहे हैं," उसने जवाब दिया। "मैंने आप सब की बातें अच्छी तरह समझी हैं, जिससे यह सिद्ध होता है कि इन बातों को कोई भी औरत समझ सकती है। मैंने जो भाग्य की बात कही थी, उसका आशय मेरे अपने यानी मेरे निजी जीवन से था।"

वह चुप हो गयी और अपने काम में इतने मनोयोग से जुट गयी कि युवक आगे प्रश्नोत्तर करने का साहस न जुटा पाया।

"अजीब बात है," वह बुदबुदाया। "जैसे कि तुमने अभी से सोच रखा है कि तुम्हारे सारे जीवन में आखिरी क्षण तक क्या होगा।"

"लेकिन इसमें विचित्र कौनसी बात है, गवीलो पेत्रोविच?" एवेलीना ने धीमे से प्रतिवाद किया। "मुझे विश्वास है कि ख़ुद इल्या इवानोविच ने भी (यह कैडेट का नाम था) अपने जीवन की पूरी-पूरी योजना बना ली है। और यह तो अभी मुझसे छोटा ही है! है ना?"

"तुम बिल्कुल ठीक कहती हो," अपने नाम को बातचीत में आता देखकर कैडेट प्रसन्नतापूर्वक बोला। मैंने अभी कुछ समय पहले न० न० की आत्मकथा पढ़ी है। उसका सारा जीवन योजनानुसार ही चलता था। उसने बीस साल में ब्याह किया और पैंतीस में कमांडर बन गया।"

विद्यार्थी उसे चिढ़ाते हुए हंस दिया। एवेलीना के गाल फिर लाल हो गये।

"देखा ना," एक क्षण रुकने के बाद एवेलीना ने तीखी और साथ ही रुखी आवाज़ में कहा। "जीवन में सबकी अपनी-अपनी राह है।"

इस बात पर आगे किसी ने भी बहस करने का प्रयत्न नहीं किया। युवक मंडली पर गंभीर चुप्पी छा गयी। सबने यह अनुभव किया कि उनकी बातचीत ने किसी के अन्तस् के कोमल तारों को झनझना दिया है; और एवेलीना के सीधे-सादे शब्दों में उसके अन्तस् के उद्गारों पर परदा डालने की कोशिश की गयी थी ...

और इस मौन में केवल अंधेरे में डूब रहे पुराने बाग़ की असंतुष्ट सरसराहट सुनाई दे रही थी।

५

यह सारी बातचीत, तर्क-वितर्क, जवानी की आशाएं और दिलचस्पियां, सम्मतियां और विश्वास एक तूफ़ान की भांति अन्धे युवक पर छा गये। पहले तो वह सारी बातें हर्षमय उत्सुकता से सुनता रहा, किन्तु शीघ्र ही उसके ध्यान से यह बात छिपी न रही कि यह जीवन लहर उसके पास से बहती जा रही है और उसे अन्धे से कोई वास्ता नहीं है। युवक से कोई भी प्रश्न नहीं किये जाते थे, उसकी कोई भी राय नहीं मांगी जाती थी। और शीघ्र ही उसने पाया कि वह अलग से अकेला खड़ा है, उदास, एकाकी, और यह उदासी और भी गहरी हो गयी थी, क्योंकि घर में चारों ओर कोलाहल था।

किन्तु वह अब भी बड़ी दिलचस्पी के साथ सारी बातें सुनता था, क्योंकि वे उसके लिए बिल्कुल नयी, बिल्कुल विचित्र थीं। और उसकी खिंची हुई भौंहों तथा श्वेत मुख से एकाग्रता और तन्मयता के भाव प्रकट होते थे। मगर यह तन्मयता सुखकर न थी। उसके मस्तिष्क में उठनेवाले विचार उसके दिल पर बोझ बन रहे थे, उसे कचोट रहे थे।

मां बेटे को अपनी शोकातुर नजरों से देखती रहती थी। एवेलीना की आंखों में सहानुभूति थी और आशंका भी। केवल मक्सिम को ही मानो इस बात का कोई ध्यान न था कि उसके शिष्य पर क्या बीत रही है। मुक्त हृदय से उन्होंने अपने मित्रों से बार-बार आने का अनुरोध किया और उनसे वादा किया कि वह उनके लिए मानवजाति-शास्त्र विषयक ढेर-सी रुचिकर सामग्री इकट्ठी करके रखेंगे।

लौटने का वादा करके वे लोग चले गये। युवकों ने जाते समय बड़े जोर-शोर से प्योत्र से हाथ मिलाया, जिससे उनकी मैत्री का परिचय मिलता था। उसने भी उसी भाव से हाथ मिलाकर जवाब दिया और जब वे गाड़ियों पर बैठकर चले गये, तो वह बड़ी देर तक पहियों की गड़गड़ाहट सुनता रहा और फिर शीघ्रता के साथ मुड़ा और बाग़ में जाकर अदृश्य हो गया।

है। उन लोगों के चले जाने के बाद घर में फिर पहले की ही तरह मौन व्याप्त हो गया। किन्तु प्योत्र को लग रहा था कि यह मौन पहले जैसा नहीं है। इसमें कोई विचित्रता, कोई असाधारणता जरूर है। इस नीरवता में उसे ऐसा लगता कि यहीं, ठीक यहीं, कोई ऐसी बात हो गयी है, जिसका कोई विशेष महत्व है। उन शान्त पथों पर, जहां केवल बीच और बकाइन वृक्षों की मर्मर सुनाई पड़ रही थी, वह हाल ही की हुई बातों की प्रतिध्वनियां सुन रहा था। खुली हुई खिड़की में से बैठक में होनेवाला वाद-विवाद और अपनी मां की आवाज उसे सुनाई दे रही थी, जिसमें दर्द भी था और प्रार्थना भी। फिर एवेलीना की आवाज आयी, जिसमें रोष था। प्रत्यक्षतः दोनों ही आवाजें मक्सिम के विरोध में थीं। मक्सिम आरोपों का जोश में, किंतु दृढ़ता से उत्तर दे रहे थे। प्योत्र को पास आते देखकर सब एकदम चुप हो गये।

अभी तक अन्धे की दुनिया जिस चहारदीवारी में बंद थी, उसे मक्सिम ने सोच-समझकर स्वयं अपने हाथों से ढाना शुरू कर दिया था। पहली कलकलाती अशांत लहर दरार में टूट पड़ी थी और इस पहले धक्के से युवक का मानसिक संतुलन डगमगा गया था।

अब प्योत्र अपने मायाई चक्र में बन्द रहते-रहते ऊब उठा। घर का मौन शान्त वातावरण उसे काटने को दौड़ने लगा, पुराने बाग़ की मर्मर और सरसर में उसके लिए कोई आकर्षण न रह गया और उसकी युवा आत्मा फड़फड़ा उठी। उसे अन्धकार से आती हुई नयी-नयी आवाजें सुनाई दीं, जो उसे पुकार रही थीं, फुसला रही थीं। यह अन्धकार नयी-नयी अनुभूतियों के प्रति सजग था। और ये अनुभूतियां स्पष्ट न थीं, किन्तु उसके मानस में प्रवेश कर उसे झकझोर रही थीं, उसे अपूर्त तृष्णाओं से भरे दे रही थीं।

अन्धकार उसे इशारे कर रहा था, बुला रहा था, उसके हृदय में ऊंघ रही अभिलाषाओं को जगा रहा था। और इस प्रथम आवाहन से ही उसके चेहरे पर श्वेतिमा छा गयी और हृदय में कसक उठने लगी।

मां और एवेलीना ने उसकी इस उद्विग्नता को देखा था। हम आंखों वाले दूसरों के अन्तस् की उथल-पुथल को उनके मुख पर प्रतिबिम्बित होते देखते हैं, अतः अपनी भावनाओं को छिपाना सीख लेते हैं। मगर अन्धे इस मामले में असहाय हैं। प्योत्र का श्वेत चेहरा मेज पर पड़ी डायरी की

तरह ग्रासानी से पढ़ा जा सकता था और इस मुखाध्ययन से पता चलता था कि उसके हृदय में कोई तूफान उठ रहा है। मां ग्रौर एवेलीना ने देखा कि यह सब मक्सिम की नजरों में भी पड़ा है, किंतु उसके लिए यह किसी योजना का अंश है। वे दोनों इसे कठोरता मानती थीं। अगर मां का वश चलता, तो अपने जीवन की बलि देकर भी वह बच्चे की रक्षा करती। मक्सिम का कहना था कि प्योत्र एक गर्म पौधे-घर में रह रहा था। मगर इससे क्या, उसका बेटा यहां ग्राराम से तो है ... जैसा वह हमेशा से रहता ग्राया है वैसा ही रहता रहे—शान्त, संयमित, संतुलित। एवेलीना अपने विचार स्पष्ट नहीं कर रही थी। लेकिन मक्सिम के प्रति उसकी धारणा बदल गयी थी। अब वह उनके बहुत-से प्रस्तावों पर ग्रौर कभी-कभी तो बिल्कुल मामूली-सी बातों पर तीव्र विरोध प्रकट करने लगी, जैसा पहले कभी नहीं होता था।

मक्सिम भौंहों तले से अपनी जिज्ञासु ग्रांखों से उसकी ग्रोर देखते ग्रौर कभी-कभी उनकी दृष्टि युवती की क्रोधपूर्ण तमतमाती नजरों से टकरा जाती। वह अपना सिर हिलाने लगते, फिर कुछ बड़बड़ाते ग्रौर पाइप के धुएं से अपने ग्रापको सारे का सारा ढंक लेते, जो इस बात की निशानी होती कि उनके दिमाग़ में उथल-पुथल मची हुई है। मगर वह अपनी बात पर ग्रड़े रहे। कभी-कभी वह बिना किसी को संबोधित किये ग्रौरतों के नासमझ प्यार ग्रौर तिरिया-मति, जो दुनिया जानती है, बाल से भी छोटी है, के बारे में उपेक्षापूर्ण फ़िक़रे छोड़ते रहते थे; ग्रक़्ल तो है नहीं, इसलिए वे क्षणिक दुःख या क्षणिक सुख से ग्रागे नहीं देख पाती हैं। वह प्योत्र के लिए शान्ति ही नहीं, अपितु जीवन की यथासंभव उच्च से उच्च पूर्णता भी चाहते थे। लोगों का कहना है कि हर शिक्षक यही चाहता है कि मेरा शिष्य ग्रागे चलकर मेरे जैसा ही बने। मक्सिम भी अपने भांजे के लिए सिर्फ़ वही चाहते थे, जिसका उन्होंने स्वयं अनुभव किया था ग्रौर जिसे बहुत शीघ्र ही खो दिया था—संघर्षपूर्ण जीवन, विचारों का मानसिक द्वन्द्व, जिसमें उत्तेजना हो, उद्दीपन हो। मगर यह सब किस रूप में? वह स्वयं भी नहीं जानते थे। किंतु वह हर संभव प्रयत्न कर रहे थे कि प्योत्र को बाह्य संसार की उन सब सजीव अनुभूतियों का, जो उसके लिए बोध-गम्य हैं, ज्ञान हो जाये, भले ही उसे कितनी भी मानसिक उथल-पुथल ग्रौर पीड़ा क्यों न सहनी पड़े। वह

जानते थे कि उनकी बहन और एवेलीना जो कुछ चाहती है, वह उनके अपने विचारों से बिल्कुल भिन्न है...

"मां की ममता अन्धी है!" वह कभी-कभी बड़बड़ा उठते और बैसाखी को फ़र्श पर तेजी से खटखटाते हुए कमरे में इधर-उधर घूमने लगते ... परन्तु क्रोध के क्षण कम ही आ पाते। साधारणतया वह अपनी बहन के तर्कों का मृदुता से और कृपामय खेद के साथ उत्तर देते। और जब कभी एवेलीना वहां न होती, तो वह उनके तर्कों के आगे झुके भी जाते। लेकिन एवेलीना की मौजूदगी में तो ये तर्क-वितर्क और भी अधिक प्रबल हो जाते, और ऐसे मौकों पर बूढ़े को चुप्पी साधनी पड़ती। ऐसा लगता कि मक्सिम और युवती में कोई द्वन्द्व आरंभ हो रहा है और वे दोनों अभी केवल प्रतिद्वन्द्वी का अध्ययन कर रहे हैं और बड़े यत्न से अपनी चाल छुपाये हैं।

६

जब दो सप्ताह बाद मेहमान फिर आये, तो एवेलीना ने उनका खुलकर स्वागत न किया। लेकिन उनके यौवन के आकर्षण से वह अप्रभावित हुए बिना न रह सकी। सारे-सारे दिन युवक गांव में घूमते रहते, जंगलों में शिकार करते या खेतों में जाकर अनाज कटाई के समय गाये जानेवाले गीत लिखा करते। और शाम को पूरी की पूरी मंडली मकान के पास बाग में इकट्ठी होती।

एक दिन सायंकाल इसके पहले कि एवेलीना को यह मालूम हो सके कि क्या हो रहा है बातचीत का प्रसंग कुछ नाजुक विषयों पर केन्द्रित हो गया। यह बातचीत कैसे आरम्भ हुई, किसने इसे आरम्भ किया, यह न तो वह स्वयं कह सकती थी न कोई दूसरा ही। इस सब का पता किसी को भी नहीं चला, वैसे ही जैसे किसी को भी यह पता न चला कि कब सूरज डूबा, कब गोधूलि की बेला आयी और कब झाड़ियों में बुलबुल ने अपना संध्या गीत आरंभ किया।

विद्यार्थी बड़े जोश के साथ बोल रहा था। उसकी बातों में यौवन का वह उत्साह था, जो बेधड़क, बेखबर अज्ञात भविष्य की ओर बढ़ता है। चमत्कारपूर्ण भविष्य में उसकी आस्था में कैसा विचित्र-सा सम्मोहन था...

एवेलीना के गाल लाल हो उठे। वह समझ गयी कि शायद ऐसा जान-बूझ कर नहीं किया गया, किंतु अब यह चुनौती सीधे उसी को ओर लक्षित थी।

वह अपनी कढ़ाई पर नीची झुकी सुन रही थी। उसकी आंखों में चमक थी और गाल आग की तरह जल रहे थे। हृदय तेजी से धड़क रहा था... फिर उसकी आंखों की चमक बुझ गयी, होंठ दब गये और दिल की धड़कन और भी तेज हो गयी। उसके सफ़ेद चेहरे पर भय की झलक आ गयी।

भय! एवेलीना को ऐसा लगा कि उसकी आंखों के सामने की अंधेरी दीवार में दरार पड़ गयी है और अब इसी दरार में से उसे उस नयी दुनिया के सुखद एवं मनोहर दृश्य दिखाई पड़ रहे हैं, जिसमें सौंदर्य है, जीवन है, कोलाहल है।

हां, यह दुनिया न जाने कब से उसे अपनी ओर बुला रही थी। पहले वह यह नहीं समझती थी, किंतु फिर भी कई बार वह पुराने बाग़ में किसी पेड़ के नीचे बैठी घंटों विचित्र-विचित्र कल्पनाएं किया करती थी—उसकी कल्पना के समक्ष दूरस्थ स्थानों के मनोरम दृश्य होते थे और उनमें अन्धे का कोई स्थान न था ...

अब यह संसार उसके निकट आ गया था; यह उसका आह्वान ही नहीं कर रहा, उसपर कोई अधिकार भी जता रहा है।

एवेलीना ने प्योत्र की ओर एक सरसरी निगाह डाली और उसके हृदय में एक टीस-सी उठी। वह शान्त, विचारशील मुद्रा में बुत बना बैठा था। उसकी आकृति भारी हो आयी लगती थी और वह एक विषादमय दाग़ के रूप में उसकी स्मृति में अंकित हो गयी। "वह ... सब ... समझता है," उसके मस्तिष्क में बिजली की तरह यह विचार कौंध गया और उसके शरीर में कंपकंपी दौड़ गयी। हृदय ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगा और उसने स्वयं अनुभव किया कैसे उसका चेहरा सहसा फक हो गया है। क्षण भर को उसे लगा कि वह दूर उस मनोरम संसार में है और वह यहां अकेला बैठा है सिर झुकाये या नहीं ... वह वहां नदी तट पर टीले पर है यह अन्धा बालक, जिसपर फूट-फूट कर वह रोयी थी उस शाम ...

और उसे डर लगने लगा। उसे लगा कोई उसका पुराना घाव खोल रहा है।

अब उसे याद आया मक्सिम का उसे देर तक देखते रहना। तो उन खामोश नज़रों का यह मतलब था! वह उसकी मनोस्थिति स्वयं उससे अच्छी तरह जानते थे, वह भांप गये थे कि उसके हृदय में अभी भी संघर्ष हो सकता है, कि वह अभी भी चुन सकती है और कि उसमें अभी पूर्ण आत्मविश्वास नहीं है ... पर नहीं, वह ग़लत हैं! वह अपना पहला क़दम जानती है और आगे वह देख लेगी कि जीवन से और क्या पाया जा सकता है ...

उसने एक गहरी सांस ली, एक आह भरी और अपने चारों ओर एक उड़ती-सी नज़र डाली। वह नहीं कह सकती थी कि वे कितनी देर इस प्रकार मौन बैठे रहे, विद्यार्थी ने कुछ और भी कहा या नहीं और कब उसने बोलना बन्द किया ... उसने उधर देखा, जहां मिनट भर पहले प्योत्र बैठा था ...

वह वहां नहीं था।

७

तब धीरे से अपनी कढ़ाई समेटकर वह भी उठ खड़ी हुई।

"क्षमा करें," मेहमानों को संबोधित करते हुए उसने कहा। "मैं कुछ देर के लिए आपका साथ छोड़ कर जा रही हूं।"

और वह बाग़ की अंधेरी वीथिका से होती हुई निकल गयी।

यह शाम केवल एवेलीना के लिए ही चिंतामय न थी। वीथिका के मोड़ पर, जहां बेंच पड़ी थी, उसे कुछ व्यथित आवाज़ें सुनाई दीं। मक्सिम बहन से बात कर रहे थे।

"हां, मैं उसके बारे में भी उतना ही सोचता रहा हूं, जितना प्योत्र के बारे में," बूढ़ा सख़्ती से कह रहा था। "ज़रा सोच तो, वह अभी बच्ची है, जीवन में कुछ नहीं समझती। मैं नहीं मान सकता कि तू बच्ची की अबोधता का लाभ उठाना चाहेगी।"

जब आन्ना मिखाइलोव्ना ने जवाब दिया, उसकी आवाज़ आंसुओं में भीगी थी।

"मक्स, लेकिन मक्स ... यदि वह ... तो ... मेरे बेटे का क्या होगा?"

"जो होगा, सो होगा," बूढ़ा सिपाही दृढ़ता से बोला। उसकी आवाज़ भारी हो रही थी। "वक़्त आने पर देख लेंगे। लेकिन किसी भी

हालत में उसकी आत्मा पर किसी की बरबाद जिंदगी का बोझ नहीं पड़ना चाहिए ... और हमारी आत्मा पर भी ... यह सोच के देख, आन्ना," कोमल स्वर में मक्सिम ने कहा।

बूढ़े ने बहन का हाथ उठाया और उसे प्यार से चूम लिया। आन्ना मिखाइलोव्ना ने अपना सिर झुका दिया।

"मेरा बेटा, मेरा बेटा! .. अच्छा होता, वह कभी उससे मिला न होता..."

युवती ने यह शब्द सुने नहीं, जान लिये थे: मां के अधरों से यह आह इतने धीमे निकली थी।

एवेलीना का चेहरा लाल हो गया। वह अनचाहे ही वीथिका के मोड़ पर रुक गयी ... अब जब वह उधर निकलेगी, वे दोनों देख लेंगे कि उसने उनके मन की बातें सुन ली हैं ...

लेकिन कुछ क्षण पश्चात सगर्व उसने अपना सिर उठाया। आख़िर उसने ख़ुद तो छिप-छिप कर किसी की बातें सुनीं नहीं। और फिर कृत्रिम लज्जा के कारण ही तो वह अपनी राह पर रुकेगी नहीं। फिर यह बूढ़ा जरूरत से ज्यादा अपने पर लेता है। वह अपने जीवन का निश्चय स्वयं कर सकती है।

वह मोड़ मुड़ी और दोनों के पास से सिर ऊंचा किये हुए निकल गयी। मक्सिम ने अपनी बैसाखी जल्दी से रास्ते में से हटा ली। और आन्ना मिख़ाइलोव्ना अपनी दयनीय दृष्टि से उसे देखती रहीं, जिसमें स्नेह की अनुभूति थी, प्रशंसा की अभिव्यक्ति थी और भय का संचार था।

मां मानो यह अनुभव कर रही थी कि यह सुन्दर गर्वीली लड़की, जो अभी-अभी उनपर सरोष दृष्टि डालती हुई उनके पास से गयी है, अपने साथ उसके बेटे के पूरे जीवन का सौभाग्य या दुर्भाग्य लेती गयी है।

८

बाग़ के एक किनारे एक पुरानी पनचक्की थी, जो किसी काम नहीं आ रही थी। अरसे से उसकी चक्कियां बन्द पड़ी थीं, उसके धुरों मे काई उग आयी थी और बांध के फाटकों में पड़ी दरारों मे से पानी की कलकल

करती पतली-पतली धाराएं निरंतर झरती रहती थीं। यह अन्धे का प्रिय स्थान था। वह यहां बांध के पास बैठा घंटों झरते जल की कोमल मधुर ध्वनियां सुनता रहता था। वह बड़ी दक्षता के साथ इन ध्वनियों को पियानो पर निकालता था। परंतु इस समय उसका ध्यान इस ओर न था ... वह पगडंडी पर तेज-तेज क़दम उठाता आगे-पीछे चल रहा था। उसका हृदय कटुता से भरा था और आंतरिक वेदना से चेहरा विकृत था।

युवती के पैरों की हल्की चापें सुनकर वह रुक गया। एवेलीना ने उसके कंधे पर हाथ रखा और गंभीर स्वर में पूछा:

"प्योत्र, बता मुझे, तू इतना परेशान क्यों है?"

वह तेजी से घूमा और पगडंडी पर चलने लगा। युवती उसके बग़ल में चलने लगी।

एवेलीना उसके मौन का और इस तरह एकदम घूम जाने का अभिप्राय समझ गयी और एक क्षण तक सिर लटकाये चुपचाप उसके साथ चलती रही। घर की ओर से गीत सुनाई दे रहा था:

हैं पहाड़ जो खड़े-खड़े
उन से ही उक़ाब झपटे
वे झपटें, वे चिल्लायें
वे शिकार पाना चाहें ...

दूरी से कोमल पड़ा युवा ऊंचा स्वर प्रेम, सुख और जीवन के विस्तार का गीत गा रहा था और गीत की ध्वनियां रात्रि की नीरवता में चारो ओर लहर रही थीं, बाग़ की मंद सरसराहट उनमें डूब रही थी ...

वहां सुखी लोग थे, वे उन्मादमय, घटनापूर्ण जीवन की बातें कर रहे थे। कुछ ही मिनट पहले एवेलीना भी उन्हीं के साथ थी, ऐसे ही जीवन के सपनों से उन्मत्त थी और इस जीवन में अंधे का कोई स्थान न था। वह कब उठकर चल दिया, यह भी एवेलीना को न मालूम हो सका था। और कौन जाने इस अकेलेपन में पीड़ा और कसक के ये थोड़े-से क्षण प्योत्र के लिए कितने लम्बे हो गये थे...

प्योत्र की बग़ल में चलते-चलते एवेलीना यही सब सोच-विचार रही थी। उसे प्योत्र के साथ बातचीत करने तथा उसकी मानसिक स्थिति बदलने में आज से पहले कभी इतनी परेशानी न हुई थी। तथापि वह अनुभव

रह रही थी कि उसकी उपस्थिति से धीरे-धीरे प्योत्र की उदासी कम होती जा रही है।

सचमुच ही प्योत्र की तेज चाल कुछ धीमी पड़ गयी और चेहरा भी कुछ शांत हो गया। वह अपने पास ही उसके पदचाप सुन रहा था और धीरे-धीरे तीव्र मानसिक वेदना शांत हो रही थी, उसके हृदय में एक दूसरा भाव उसका स्थान ले रहा था। वह इस भाव से परिचित था, यद्यपि उसे पूरी तरह से समझता नहीं था, और सहज ही उसके सुखप्रद प्रभाव में आ जाता था।

"क्या हुआ तुझे?" एवेलीना ने फिर पूछा।

"कोई खास बात नहीं," उसने उत्तर दिया। उसके स्वर में व्यथा की कटुता थी। "बस, मुझे लगता है कि मैं इस दुनिया में बिल्कुल फ़ालतू हूं।"

घर की ओर से आ रहे गीत के स्वर कुछ क्षण के लिए शांत हो गये और फिर एक दूसरा गीत सुनाई दिया। इसके स्वर बहुत धीमे थे। अब विद्यार्थी बन्दूरिस्तों* की मंद लय का अनुकरण करता हुआ प्राचीन "दूमा"** गा रहा था। कभी-कभी उसका स्वर एकदम विलीन हो जाता और कल्पना पर धूमिल स्वप्न छा जाते और फिर शीघ्र ही पत्तियों की मर्मर के बीच मृदु धुन सुनाई देने लगती...

प्योत्र उसे सुनता हुआ रुक गया।

"पेल्या," वह उदास-सा बोला, "जानती है, हमारे बुजुर्ग अक्सर कहा करते हैं कि दुनिया में जीना दूभर होता जा रहा है। मुझे लगता है वे ठीक कहते हैं। पुराना ज़माना अन्धों तक के लिए आज से अच्छा था। अगर मैं उस ज़माने में होता, तो पियानो की जगह बन्दूरा बजाता और नगरों और देहातों में घूमता-फिरता ... मुझे सुनने को लोगों की भीड़ें लगतीं और मैं उन्हें उनके बाप-दादाओं की वीर गाथाएं सुनाता, उनके महान कार्यों और उनके यश के गीत गाता। तब मेरी भी दुनिया में कोई जगह होती। और अब? वह कैडेट छोकरा तक, ऐसी तीखी आवाज लिये, वह भी,—तूने सुना था?—कहता है, शादी करेगा,

---

*बन्दूरिस्त—उक्राइनी वाद्य—बन्दूरा—बजानेवाला।—अनु०

**दूमा (सोच)—एक प्रकार का उक्राइनी गीत।—स०

कमांडर बनेगा। सब उसपर हंस रहे थे, और मैं ... मुझे तो यह भी नसीब नहीं।"

एवेलीना की नीली-नीली आंखें भय से फैल गयी और उनमें आंसू झलक आये।

"यह छोटे स्तावूचेन्को की बातों का तुझपर ऐसा असर पड़ा है," बात को मजाक़ में उड़ा देने के लहजे में उसने कहा। यद्यपि उसकी आवाज से स्पष्ट था कि वह सकुचा गयी थी और यह लहजा कृत्रिम था।

"हां," विचारमग्न प्योत्र ने उत्तर दिया और फिर आगे कहा, "उसकी आवाज बड़ी मीठी है। वह सुन्दर है?"

"अच्छा है," एवेलीना ने कुछ विचार करते हुए कहा, किन्तु सहसा उसे स्वयं अपने ऊपर क्रोध आ गया और वह तेजी से बोल उठी, "नहीं, वह ... वह मुझे क़तई पसन्द नहीं। वह अपने को जाने क्या समझता है। और आवाज भी उसकी मीठी नहीं, तीखी है।"

प्योत्र इस क्रोधावेश से आश्चर्यचकित उसे सुनता रहा। युवती ने पैर पटका और बोलती गयी:

"यह सब बेवक़ूफ़ी है! मुझे पता है, यह सब मक्सिम की कारस्तानी है। ओह, कितनी नफ़रत है मुझे इस मक्सिम से।"

"यह तू क्या कह रही है, वेल्या?" भौंचक्के अन्धे ने पूछा। "कैसी कारस्तानी?"

"नफ़रत है, नफ़रत है!" युवती ढिठाई से कहती गयी। "हर बात नाप-जोख कर, हर काम नाप-जोख कर। इस नाप-जोख ने उसमें दिल नाम की कोई चीज ही नहीं छोड़ी है ... नहीं, नहीं, मत बोल, उनका नाम मत ले मेरे सामने। और किसने उन्हें परायी जिंदगी में दख़ल देने का हक़ दिया है?"

वह सहसा रुक गयी, अपने पतले-पतले हाथ भींचे इतने जोर से कि उंगलियां चटख गयीं और एकदम बच्चों जैसे रो पड़ी।

प्योत्र ने उसके हाथ अपने हाथों में ले लिये। वह आश्चर्य-विमूढ़ हो रहा था। वह अकस्मात् निकले हुए एवेलीना के इन उद्‌गारों का कारण न समझ सका। एवेलीना हमेशा शांत रहती थी। उसका अपने ऊपर पूरा वश था। वह खड़ा-खड़ा उसकी सिसकियां सुनता रहा, और सुनता रहा उस विचित्र प्रतिध्वनि को, जो उसकी सिसकियां उसके हृदय से टकरा-

टकरा कर पैदा कर रही थीं। उसकी कल्पना के सामने पुरानी स्मृतियां दौड़ने लगीं—आज ही की भांति उदास वह एक टीले पर बैठा है और एक छोटी-सी लड़की उसके सामने रो रही है वैसे ही जैसे वह इस समय रो रही थी...

लेकिन सहसा एवेलीना ने अपने हाथ छुड़ा लिये और प्योत्र फिर आश्चर्यचकित हो गया: वह हंस रही थी।

"कैसी पगली हूं, मैं भी! और रोने की बात भी क्या है भला?"

उसने अपनी आंखें पोंछीं और फिर भाव-विभोर, मृदु स्वर में बोली:

"नहीं, ज्यादती नहीं करनी चाहिए। सचमुच वे दोनों बहुत अच्छे हैं! .. और वे अभी जो बातें कर रहे थे, वे भी बहुत अच्छी थीं। लेकिन यह सब हर एक के लिए तो नहीं।"

"जो पा सके, उसी के लिए है," अन्धे ने कहा।

"क्या बेकार की बातें हैं!" उसने साफ़ आवाज में कहा, यद्यपि उसकी आवाज में मुस्कान के साथ-साथ कुछ क्षण पहले के आंसुओं का भी आभास हो रहा था। "मामा मक्सिम भी तो जब तक बस चला लड़ते रहे और अब जैसा हो सकता है रह रहे हैं। और हम भी..."

"हम मत कह। तेरी बात और है ..."

"नहीं, और नहीं।"

"क्यों नहीं?"

"क्योंकि ... क्योंकि तू मुझसे विवाह जो करेगा और इसका मतलब है कि हमारा जीवन एक हो जायेगा।"

प्योत्र स्तंभित-सा रुक गया।

"मैं? .. तुझसे? .. यानि तू मेरी? .."

"हां, हां, क्यों नहीं!" वह बोली। उत्तेजना के कारण जल्दी में उसकी जबान से शब्द फिसलते जा रहे थे। "बुद्धू कहीं का! क्या तूने इसके बारे में कभी सोचा ही न था? इतनी मामूली-सी बात! क्यों, मुझसे नहीं, तो और किससे विवाह करेगा?"

"हां, बेशक," उसने हामी भरी। और फिर सहसा ही अपने शब्दों के स्वार्थ भाव का अनुभव करके बोलते-बोलते रुक गया।

फिर युवती का हाथ पकड़कर वह बोला: "सुन, वेल्या। वहां अभी बातें हो रही थीं कि बड़े शहरों में लड़कियां पढ़-लिख रही हैं; तू भी पढ़-लिख कर कुछ बन सकती है ... और मैं ..."

"श्रौर तू क्या?"

"मैं ... मैं अन्धा हूं!" उसका तर्कहीन निष्कर्ष था।

और एक बार फिर बचपन की स्मृतियां उसके दिमाग़ में घूम गयीं—धीरे-धीरे बहती हुई नदी, एवेलीना से उसकी पहली मुलाक़ात, अन्धेपन की बात सुनकर उसका फूट-फूट कर रोना ... और वह सहसा यह सोचकर चुप हो गया कि पहले की ही तरह इस बार भी लड़की को वैसी ही चोट पंहुचा रहा है। कुछ क्षण के लिए सिवा सामनेवाले बांध से झरते हुए पानी की झरझर के उसे और कुछ भी सुनाई न दिया। एवेलीना की कोई ध्वनि नहीं सुनाई दे रही थी मानो वह हवा में विलीन हो गयी हो। युवती का चेहरा इस क्षण सचमुच वेदना से विकृत था। किंतु शीघ्र ही उसने अपने को संभाला और अब जब बोली, तो उसकी आवाज़ हल्की थी और उसमे चिन्ता की झलक तक न थी।

"ठीक है, अन्धा ही है, तो क्या हुआ," उसने कहा। "पर अगर किसी लड़की को अन्धे से प्यार हो जाये, तो फिर विवाह भी उसी से करना चाहिए ... हमेशा से ही ऐसा होता रहा है। और हम भला क्या करें?"

"प्यार हो जाये..." प्योत्र ने धीरे-धीरे यह बात दुहरायी, और जैसे ही ये चिरपरिचित शब्द एक नया स्वरूप धारण कर उसके अन्तस् में उतरे उसकी सचल भौहें विचारशील मुद्रा में खिंच गयीं। "प्यार हो जाये?" उसने पूछा। उसकी उत्तेजना बढ़ती जा रही थी...

"हां! तू और मैं, हम दोनों एक दूसरे को प्यार करते हैं ... तू तो निरा बुद्धू है! ज़रा सोच तो, अगर मैं चली जाऊं, तो तू अकेला यहां रह सकेगा?.."

प्योत्र का चेहरा मुरझा गया और अन्धी आंखें जड़ हो गयीं, और भी अधिक खुल गयीं।

वातावरण शान्त था। केवल पानी की झरझर सुनाई पड़ रही थी, जो कभी-कभी इतनी हल्की पड़ जाती कि बन्द-सी होती लगती। परंतु उसका क्रम बराबर बना रहता, उसकी झरझर की कहानी समाप्त होने को ही न आती। वृक्षों में से कभी-कभी कोई हल्की-सी फुसफुसाहट सुनाई दे जाती। मकान से आता हुआ गीत शांत हो चुका था, परंतु अब तालाब पर बुलबुल ने अपना गीत आरंभ कर दिया था...

"मैं तो मर जाऊंगा," उसने मुरझायी आवाज़ में कहा।

एवेलीना के होंठ हिलने लगे, वैसे ही जैसे उस पहली मुलाक़ात के समय और उसने बच्चों जैसी हल्की आवाज़ में कठिनाई से कहा:

"मैं भी ... तेरे बिना अकेली ... दूर, परायी दुनिया में..."

प्योत्र ने उसका नन्हा-सा हाथ अपने हाथ में दबाया। युवती ने प्रत्युत्तर में उसका हाथ भींच दिया। और उसे यह विचित्र लगा कि इस नन्हे हाथ का स्पर्श पहले के सभी स्पर्शों से एकदम भिन्न है: उसकी नन्ही उंगलियों का हल्का-सा स्पर्श उसके हृदय की गहराइयों में प्रतिध्वनित हो रहा था। वैसे भी अपने बचपन की सखी के स्थान पर अब उसे एवेलीना में एक दूसरी, नयी युवती का आभास हो रहा था। स्वयं अपने आप को वह शक्तिशाली, बलवान अनुभव कर रहा था और वह निर्बल थी, रो रही थी। और तब प्रेम-विभोर होकर उसने एक हाथ से युवती को अपने वक्ष से लगा लिया और दूसरे से उसके रेशमी बाल सहलाने लगा।

प्योत्र को लगा कि उसके हृदय का सारा क्लेश धुल चुका है, उसकी सारी आकांक्षाएं और अभिलाषाएं शान्त हो चुकी हैं और जीवन में बस यही एक क्षण है।

बुलबुल थोड़ी देर तक भिन्न स्वर निकालती रही, फिर चहकने लगी और नीरव बाग़ में उसका तीव्र गान गूंज उठा। युवती सिहर उठी और लजाते हुए प्योत्र का हाथ हटा दिया।

प्योत्र ने उसे मुक्त कर दिया और गहरी सांस लेते हुए खड़ा-खड़ा कुछ सुनता रहा। एवेलीना बाल संवार रही थी। प्योत्र ख़ुश था। उसका हृदय धड़क रहा था और सारे शरीर में ख़ून तेज़ी से दौड़ रहा था। उसे अपने में एक अनूठी शक्ति का अनुभव हो रहा था। एक क्षण बाद एवेलीना बोल उठी, "अब हमें अपने मेहमानों के पास चलना चाहिए," और प्योत्र विस्मित होकर इस प्रिय कंठ से निकलते हुए नये सुरीले सुर सुन रहा था।

६

प्योत्र और एवेलीना के अलावा सब के सब बैठक में जमा थे। मक्सिम बूढ़े स्तावूचेन्को से गप्प लड़ा रहे थे और युवक मंडली खुली हुई खिड़कियों के पास चुपचाप बैठी थी। बैठक में एक विचित्र शांत वातावरण था,

जब सब के दिलों में किसी अवश्यंभावी घटना का अस्पष्ट-सा आभास रहता है। प्योत्र और एवेलीना का न होना सभी को खल रहा था। मक्सिम कभी-कभी अपनी बातचीत के दौरान किसी आशा में खुले दरवाजे पर निगाह दौड़ा लेते। आन्ना मिखाइलोव्ना की आंखों से उदासी टपक रही थी। वह इस बात का पूरा प्रयत्न कर रही थीं कि उनके अतिथि-सत्कार में कोई कमी न आये। केवल पान पोपेल्स्की, जो वर्ष प्रतिवर्ष भारी-भरकम होते जा रहे थे, हमेशा की भांति शांत बैठे खाने के इन्तजार में कुर्सी पर ऊंघ रहे थे।

बरामदे में पैरों की चापें सुनाई पड़ीं और सभी निगाहें उस ओर मुड़ गयीं। चौड़े दरवाजों की अंधेरी चौखट पर एवेलीना की आकृति प्रकट हुई और उसके पीछे प्योत्र धीरे-धीरे सीढ़ियां चढ़ रहा था।

युवती ने अनुभव किया कि सभी उसकी ओर एकाग्रता से ध्यानपूर्वक देख रहे हैं, किंतु उसे जरा भी घबराहट नहीं हुई। सदा की तरह अपनी सधी हुई चाल में उसने कमरा पार किया और बस एक क्षण के लिए जब उसकी नजरें भौंहों तले से मक्सिम की नजर से टकरायीं, वह हल्के से मुस्करा दी और उसकी आंखों में चुनौती और उपहास की चमक दौड़ गयी। पानी पोपेल्स्काया अपने पुत्र पर गहरी नजरें टिकाये थीं।

ऐसा प्रतीत होता था कि प्योत्र यह समझे बिना कि वह उसे किधर ले जा रही है एवेलीना का अनुकरण कर रहा था। जब दरवाजे पर उसका गोरा चेहरा और पतली आकृति प्रकट हुई, वह प्रकाश में डूबे कमरे की दहलीज पर सहसा ठिठक गया। और फिर तेजी से दहलीज पार करके वैसे ही अर्द्ध-एकाग्रता और अर्द्ध-अन्यमनस्कता के भाव से पियानो तक चला गया।

संगीत इस घर के शांत जीवन का एक सहज अंश था, किंतु इसके साथ ही वह एक आत्मीय या यों कहें कि सर्वतः घरेलू अंश था। उन दिनों जब घर में अतिथियों की बातों, उनके गीतों की चहल-पहल होती, प्योत्र कभी भी पियानो के पास नहीं जाता था, उसे बस बड़ा स्तावूचेन्को बजाता था, जो संगीतज्ञ था। उसकी यह चुप्पी ही मेहमानों की हंसी-ठठोली और चहल-पहल में उसे अकेला कर देती, पृष्ठभूमि में डाल देती, जिसे देखकर मां का हृदय रो उठता। अब, इस सारे समय में पहली

बार, प्योत्र निर्भय और मानो पूरी तरह से सोचे-समझे बिना अनजाने ही अपने स्वाभाविक स्थान पर पहुंचा था ... लगता था वह भूल गया था कि कमरे में कोई है भी कि नहीं। हां, वैसे तो, जब उन दोनों ने कमरे में प्रवेश किया, तो वहां ऐसी स्तब्धता थी कि अन्धा कमरे को खाली समझ सकता था...

उसने पियानो खोला, हल्के-से कुछ कुंजिकाएं दबायीं और फिर तेज़ी से कुछ सुर निकाले। लगता था वह कुछ पूछ रहा है न जाने वाद्य से या फिर अपने मन से।

फिर कुंजिकाओं पर हाथ फैलाकर वह गहरी सोच में डूब गया और कमरे की नीरवता और भी गहरी हो गयी।

रात खिड़कियों के अंधेरे चौखटों में से देख रही थी; लैम्प के प्रकाश से प्रकाशित हरी-हरी पत्तियों के झुंड कहीं-कहीं बाग़ में से झांक रहे थे। अतिथि उसके सुर-साम्य तथा श्वेत मुख से प्रतिबिम्बित होनेवाले उसके विचित्र प्रेरक चमत्कार से इतने मन्त्रमुग्ध हो उठे थे कि वे मूक बैठे रहे सुर-लहरियों में डूब जाने के लिए।

लेकिन प्योत्र के हाथ अब भी सुर-कुंजिकाओं पर निश्चल रखे हुए थे। वह शान्त बैठा था मानो कुछ सुन रहा हो। उसकी अन्धी आंखें ऊपर को उठी हुई थीं। उसकी आत्मा में भावनाओं का समुद्र हिलोरें ले रहा था। एक अज्ञात एवं अननुभूत जीवन उससे टकरा रहा था वैसे ही जैसे उठती हुई तरंगें उस नाव से टकराती हैं, जो दीर्घ काल से समुद्र के तट पर बालू के बीच धंसी-धंसी अपनी मुक्ति के स्वप्न देखा करती है... उसके मुखमंडल पर आश्चर्य की एक झलक थी और था प्रश्नसूचक कौतूहल। इसके अतिरिक्त और भी कुछ था—एक अनूठी उत्तेजना, एक अनूठा उत्साह। उसकी अन्धी आंखें गहन थीं, गम्भीर थीं।

एक क्षण के लिए ऐसा लगा जैसे वह अपनी आत्मा में उस भाव को नहीं खोज पा रहा है, जिसे वह इतनी तृष्णा के साथ सुन रहा है। किंतु फिर वैसी ही आश्चर्यचकित मुद्रा में और वैसे ही मानो अंत तक अभिलषित की प्रतीक्षा किये बिना वह कांप उठा। उसने अपनी उंगलियां सुर-कुंजिकाओं पर चलायीं और नयी-नयी अनुभूतियों से अनुप्राणित होकर संगीत के प्रवाह में बहने लगा। अब चारों ओर सुर-लहरियां नृत्य कर रही थीं—मादक और मधुर।

स्वर-लिपि की सहायता से संगीत का अध्ययन करना अन्धों के लिए बहुत मुश्किल है। ऐसी स्वर-लिपि में उभरे हुए चिह्नों का प्रयोग किया जाता है, हर स्वर के लिए अलग-अलग चिह्न होते हैं और पुस्तक के शब्दों की तरह वे एक पंक्ति में लिखे जाते हैं। सुर में बंधे स्वरों के बीच विस्मय बोधक चिह्न बने होते हैं। स्पष्ट है कि अन्धे को सब स्वरों को याद कर लेना पड़ता है और वह भी हर हाथ से बजाये जानेवाले स्वरों को अलग-अलग। यह एक लंबी एवं श्रमपूर्ण प्रक्रिया है। लेकिन प्योत्र को संगीत की सृष्टि करनेवाले पृथक-पृथक तत्वों से प्यार था और इससे उसे बहुत सहायता मिलती थी। प्रत्येक हाथ से बजनेवाले कुछ स्वरों को याद करके वह उन्हें बजाने बैठता और जब उभरे हुए चिह्नों के संयोग से स्वयं उसके लिए भी अप्रत्याशित ही सुरीली स्वर-लहरियां बन निकलतीं, तो इससे उसे इतनी ख़ुशी होती और इसमें इतनी गहन रुचि होती कि स्वरों को रटने का सूखा काम भी उसके लिए आकर्षक हो जाता था।

फिर भी स्वर-लिपि में चिह्नित संगीत-रचना और ध्वनि के रूप में उसकी अभिव्यक्ति के बीच उसे अनेक कड़ियां पार करनी पड़ती थीं। संगीत का रूप लेने के पूर्व प्रत्येक चिह्न को उंगलियों के माध्यम से मस्तिष्क तक की यात्रा करनी होती, स्मृति-पट पर अपनी जड़ जमानी होती और फिर जब उंगलियां सुर-कुंजिकाओं को दबातीं, तो उन्हें मस्तिष्क से लेकर उंगलियों तक का सफ़र एक बार फिर करना होता। और चूंकि प्योत्र की संगीत प्रतिभा बचपन से ही बड़ी प्रखर थी, अतएव वह स्मरण-प्रक्रिया में स्वयं भी अपना योग देती और इसका परिणाम यह होता कि परायी संगीत-रचना पर उसके व्यक्तित्व की स्पष्ट छाप पड़ती। प्योत्र की संगीतानुभूति ने उसमें वह स्वरूप ग्रहण किया था, जिस रूप में संगीत की प्रथम सुर-लहरी ने उसके मानस में प्रवेश किया था। यही वह स्वरूप था, जो उसकी माता के संगीत में भी मुखरित हुआ था। यह लोक-संगीत का स्वरूप था, जो उसकी आत्मा में सदा प्रतिध्वनित होता रहता था और जिसके आधार पर उसकी आत्मा का प्रकृति के साथ तादात्म्य स्थापित होता था।

और अब इतालवी संगीत के प्रथम सुरों में ही, जिसे वह धड़कते हृदय से बजा रहा था, कुछ इतनी असाधारणता थी कि अतिथि आश्चर्य से एक दूसरे का मुंह देखने लगे—विस्मित, अवाक्। किंतु कुछ ही क्षण पश्चात सभी मंत्रमुग्ध हो गये और केवल संगीतज्ञ स्तावूचेन्को बहुत देर तक उसके वादन में परिचित संगीत-रचना को पहचानने का प्रयत्न करता रहा और अन्धे वादक की अपनी विशिष्ट शैली का विश्लेषण करता रहा।

पियानो के तारों की झंकार और गर्जन बैठक को भरते हुए निस्तब्ध बाग़ में फैल रहे थे ... युवकों की आंखें कौतूहल और उत्साह से चमक रही थीं। बूढ़ा स्तावूचेन्को पहले तो सिर झुकाये मौन सुनता रहा, फिर धीरे-धीरे उसपर संगीत की मस्ती चढ़ती गयी और वह मक्सिम को कोहनियां मारता हुआ उसके कान में बुदबुदाने लगा:

"यह हुआ न बजाना, क्यों? क्या मैं ग़लत कह रहा हूं?"

जैसे-जैसे संगीत का प्रभाव बढ़ता गया, उसकी पुरानी स्मृतियां ताज़ी होती गयीं और शायद उसे अपनी जवानी की याद आने लगी, क्योंकि उसके कन्धे सीधे हुए, उसके गालों में लाली दौड़ी और उसकी आंखों में चमक आयी। उसकी मुट्ठी भिंची और ऐसा लगा कि वह अभी उसे मेज पर दे मारेगा, मगर उसने वैसा नहीं किया और चुपके से नीचे गिरा दिया। अपने लालों पर एक सरसरी निगाह डालकर उसने मूंछें सहलायीं और फिर मक्सिम की ओर झुककर फुसफुसाया:

"बूढ़ों की छुट्टी करना चाहते हैं ... बकते हैं! .. अपने जमाने में हमने भी, भाई, बहुत कुछ ... और अब भी भला ... ठीक कह रहा हूं ना?"

साधारणतया मक्सिम संगीत के प्रति बिल्कुल उदासीन थे। लेकिन आज उन्हें अपने शिष्य के वादन में नवीनता का अनुभव हुआ और वह पाइप के धुएं से घिरे उसे सुन रहे थे, सिर हिला रहे थे और घड़ी-घड़ी प्योत्र से एवेलीना पर निगाहें दौड़ा रहे थे। स्वाभाविक जीवन शक्ति का झोंका एक बार फिर उनकी प्रणाली में इस तरह आ घुसा था, जिसकी उन्होंने कल्पना न की थी ... आन्ना मिखाइलोव्ना भी एवेलीना की ओर प्रश्नभरी निगाहें डाल रही थीं, वह अपने आप से पूछ रही थीं: यह क्या है, जो उनके बेटे के संगीत में ध्वनित हो रहा है—दुख अथवा सुख? एवेलीना एक कोने में बैठी थी। उसका चेहरा लैम्प के पीछे अंधेरे में था।

उस अन्धकार में केवल उसकी बड़ी-बड़ी आंखें चमक रही थीं। अकेली वह इस संगीत में अपने ही मन के भाव सुन रही थी: उसे इन सुरों में पनचक्की पर जल की झरझर और संध्या के झुटपुटे में डूबे वृक्षों की मर्मर सुनाई दे रही थी।

११

संगीत की धुन बदल चुकी थी। प्योत्र ने जो इतालवी धुन आरम्भ की थी, अब वह बहुत पीछे छूट गयी थी और उसके स्थान पर उसमें स्वयं उसकी अपनी कल्पनाएं मुखरित हो रही थीं—वे सब कल्पनाएं, जो उस समय उसके मस्तिष्क में उपजी थीं, जब वह पियानो की सुर-कुंजिकाओं पर हाथ धरे ध्यानमग्न बैठा था। उसके वादन में प्रकृति की पुकार थी—वायु के निश्वास और वन की मर्मर, जल की छलछल और दूर, बहुत दूर विलीन होती हुई अस्पष्ट ध्वनियां। और ये सब ध्वनियां एक दूसरे में गुंथी गूंज रही थीं और इनकी पृष्ठभूमि में ध्वनित हो रही थी हृदय को हर्षातिरेक से परिपूर्ण करनेवाली वह गहन अनुभूति, जिसे प्रकृति की रहस्यमय ध्वनियां आत्मा में जन्म देती हैं और जिसे शब्दों में व्यक्त करना इतना कठिन है... क्या है यह?.. उदासी? .. परंतु वह इतनी मधुर क्यों?... खुशी?... तो फिर उसमें इतनी गहरी, इतनी अनन्त करुणा क्यों?

कभी-कभी संगीत के सुर जोर पकड़ते प्रबल होते। अन्धे युवक की मुखाकृति में एक विचित्र कर्कशता आ जाती। वह मानो स्वयं इन अप्रत्याशित धुनों की नवीन शक्ति से, जो उसके लिए भी नयी थी, आश्चर्यचकित हो रहा था और साथ ही अन्य कुछ की प्रतीक्षा में था... श्रोता सांस रोके वाद्य से निकलनेवाले प्रत्येक स्वर को बड़े ध्यान से सुनते और उन्हें ऐसा प्रतीत होता कि बस थोड़े से सुर और, और फिर संगीत का अनुपम स्वर-साम्य एवं माधुर्य यहीं एक अनूठे सौन्दर्य की सृष्टि कर देगा। मगर वह क्षण आने के पहले ही सुर-लहरियां करवटें लेतीं और वातावरण में एक विचित्र करुणा व्याप्त हो जाती—ऐसा लगता कि सीधी चली आनेवाली तरंग-माला ने सहसा टूटकर फेन और फुहार का रूप ले लिया है। और फिर देर तक शांत होते संगीत में उद्वेग और आकुलता के तीक्ष्ण सुर सुनाई देते रहे।

एक क्षण के लिए दौड़ती हुई उंगलियां थम जातीं और एक बार फिर कमरे में मौन छा जाता, जो बाग़ के वृक्षों की सरसराहट से हो टूट जाता। और श्रोताओं को उनके इस भौतिक संसार से उठा कर कल्पना के मधुर लोक में ले जानेवाला मायावी चमत्कार सहसा लुप्त हो जाता और उन्हें फिर कमरे की दीवारें और खिड़की से झांकनेवाली अंधेरी रात दिखाई पड़ने लगती। यह स्थिति तब तक बनी रहती, जब तक कि उंगलियां बाजे पर नयी शक्ति से फिर से न दौड़ने लगतीं।

संगीत फिर प्रारम्भ हो जाता—सुर-लहरी में विकास होता और वह माधुर्य की ऊंचाइयों पर पहुंचती। सुरों की अस्पष्ट झंकार में लोक-गीत की धुनें गुंथ जातीं; उनमें कभी प्रेम, तो कभी उदासी, कभी अतीत की वेदनाओं और यश, तो कभी जवानी का हर्षोन्माद और आशाएं ध्वनित हो उठतीं। अन्धा अपनी भावनाओं को संगीत के परिचित स्वरूपों में व्यक्त करने का प्रयास कर रहा था।

परंतु यह गीत भी वैसे ही समाधानहीन प्रश्न के करुण सुर में समाप्त हो जाता।

१२

एक अस्पष्ट असंतोष और करुणा का भाव लिये आखिरी स्वर शांत हो गये। बेटे के चेहरे पर नज़र डालते ही आन्ना मिखाइलोव्ना को उसपर एक विचित्र भाव दिखाई दिया। उन्हें लगा कि वह उससे परिचित हैं: उनकी कल्पना के समक्ष वसन्त काल का एक धुपहला दिन घूम गया और एक बार फिर उन्होंने प्रकृति की अंगड़ाइयों की अत्यधिक गहरी छापों से क्षुब्ध नन्हे पेत्रूस को नदी-तट के समीप की घास पर लेटे हुए देखा।

किन्तु यह भाव केवल उन्हीं ने देखा था। कमरे में बातों का शोर मच गया। बूढ़ा स्तावूचेन्को मक्सिम से चिल्ला-चिल्ला कर कुछ कह रहा था, युवक उत्तेजित एवं प्रभावित थे, वे बड़े जोश से प्योत्र से हाथ मिला रहे थे और यह भविष्यवाणी कर रहे थे कि वह एक विख्यात संगीतकार होगा।

"इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं," बड़े भाई ने पुष्टि की। "तुमने आश्चर्यजनक सफलता से लोक-धुन के सार को अपनाया है। तुमने उसे

पूरी तरह से अपने संगीत के वश में कर लिया है। पर वह, आरंभ में तुमने कौनसी रचना बजायी थी?"

प्योत्र ने इतालवी संगीत-रचना का नाम बताया।

"वही तो मैं सोच रहा था," युवा स्तावूचेन्को बोला। "मैं इस संगीत-रचना से कुछ हद तक परिचित हूं ... तुम्हारी शैली में अद्‌भुत मौलिकता है ... कई वादक तुमसे अधिक निपुण हैं, किंतु जिस तरह तुमने यह रचना बजायी, वैसे कभी किसी ने नहीं बजायी। यह ... मानो इतालवी संगीत का उक्राइनी संगीत में रूपान्तर है। तुम्हें जरूरत है अध्ययन की, प्रशिक्षण की और सब ..."

प्योत्र ध्यानपूर्वक सब कुछ सुन रहा था। आज से पहले वह इतनी उत्सुकतापूर्ण बातचीत का केन्द्र कभी नहीं रहा और अब उसके हृदय में अपनी शक्ति की गौरवमय अनुभूति जन्म ले रही थी। आज के संगीत से उसे इतनी पीड़ा और इतना असंतोष हुआ था, जितना जीवन भर कभी नहीं हुआ था। क्या यह भी सम्भव है कि उसके इस संगीत ने लोगों पर सचमुच इतना अधिक प्रभाव डाला है? तो, वह भी जीवन में कुछ कर सकता है। वह अपनी जगह बैठा हुआ था, उसका हाथ अभी भी पियानो की कुंजिकाओं पर फैला हुआ था। बातों के शोर के बीच उसे सहसा अपने हाथ पर किसी के गरम स्पर्श का अनुभव हुआ। यह एवेलीना उसके पास आयी थी। चुपके से उसकी उंगलियां दबाते हुए हर्षमय उत्तेजना के साथ धीमी आवाज़ में उसने कहा:

"सुना तूने? तेरे लिए भी अपना काम होगा। काश, तू देख सकता, जान सकता कि तू हमारे साथ क्या कर सकता है ..."

अन्धा कांप उठा और सीधा बैठ गया।

इस छोटे-से दृश्य को मां के सिवा और किसी ने नहीं देखा। मां को ऐसा लगा जैसे युवावस्था के प्रेम की प्रथम रोमांचकारी अनुभूति स्वयं उसी को हुई हो।

प्योत्र वहीं बैठा रहा। अब वह उस नयी प्रसन्नता में विभोर हो जाना चाहता था, जो उसके मानस में भर चुकी थी। और शायद इसी समय उसने उस झंझा के प्रथम लक्षणों का भी अनुभव किया, जो उसके अन्तस्‌ की गूढ़तम गहराइयों के किसी कोने में उठ रही थी—अस्पष्ट, निराकार।

छठा अध्याय

१

प्योत्र दूसरे दिन सुबह तड़के ही उठ गया। कमरे मे नीरवता छायी हुई थी और घर में भी अभी दिन की हलचल शुरू नहीं हुई थी। कमरे की खिड़की रात को खुली छोड़ दी गयी थी; अब उसमें से बाग़ की प्रातःकालीन ताज़गी अंदर आ रही थी। प्योत्र अन्धा भले ही था, परंतु उसे अपने चतुर्दिक प्रकृति की पूरी-पूरी अनुभूति होती थी। वह जान गया कि अभी प्रभात है और खिड़की खुली है—टहनियों की सरसराहट किसी भी तरह से दबी हुई या दूर न थी, वह उसे पास ही साफ़-साफ़ सुन रहा था। आज यह अनुभूति सदा की अपेक्षा अधिक प्रखर थी: उसे यह भी पता था कि सूर्य कमरे में झांक रहा है और यदि वह खिड़की के बाहर हाथ फैलाये, तो झाड़ियों से ओस के कण झर पड़ेंगे। इसके अतिरिक्त उसके तन-मन में एक पूर्णतः नवीन, अज्ञात अनुभूति छायी हुई थी।

वह कुछ देर तक बिस्तर में लेटा रहा और बाग़ में चहचहाती किसी नन्ही-सी चिड़िया का शांत कलरव और अपने मन में प्रबल होते जा रहे विचित्र भाव को ध्यानमग्न सुन रहा था।

"यह क्या हुआ था मुझे?" उसने सोचा और तत्क्षण स्मृति-पटल पर वे शब्द उभर आये, जो कल उसने संध्या समय, पुरानी पनचक्की के पास कहे थे: "क्या तूने कभी यह सोचा ही नहीं? .. कैसा बुद्धू है तू! .."

नहीं, उसने इसके बारे में कभी नहीं सोचा था। उसकी निकटता उसके लिए सदा सुखमय थी, किंतु कल से पहले उसने कभी इस ओर ध्यान नहीं दिया था, जैसे हम उस हवा का अनुभव नहीं करते, जिससे सांस लेते हैं। इन सीधे-सादे शब्दों का उसकी आत्मा पर ऐसा प्रभाव पड़ा था मानो पानी की चिकनी चमकीली सतह पर ऊंचाई से पत्थर गिरा हो: अभी क्षण भर पहले वह एकदम शांत, समतल था, नीला आकाश और सूर्य उसमें प्रतिबिंबित हो रहे थे... पत्थर की एक चोट और वह तली तक खलबला उठा।

अब वह आत्मा में एक नयी अनुभूति लिये हुए उठा और अपनी पुरानी सहेली को एक नये रूप में देखने लगा। और पिछली शाम की

सभी बातें उसे याद आयीं। उसकी कल्पना ने उसके स्मृति-पटल पर युवती की आवाज़ उभार दी और वह इस आवाज़ के नये सुरों को आश्चर्यचकित-सा सुनने लगा: "प्यार हो जाये ... कैसा बुद्धू है तू! .."

वह पलंग से उछला, जल्दी-जल्दी कपड़े पहने और ओस से भीगी बाग़ की पगडंडियों से होता हुआ पुरानी पनचक्की की ओर भाग चला। पानी की छलछल और वृक्षों की मर्मर उसे पिछली शाम की भांति ही सुनाई पड़ रही थी, परन्तु कल अंधेरा था, और इस समय उज्ज्वल धूप से भरी सुबह थी। आज से पहले उसने प्रकाश का इतना स्पष्ट "अनुभव" कभी न किया था—ऐसा लगता था जैसे आर्द्र सुरभि और प्रातःकाल की ताज़गी के साथ ही हर्षोन्मादपूर्ण दिन की खिलखिलाती किरणें भी उसमें प्रवेश कर गयी हैं और उसकी तंत्रिकाओं को गुदगुदा रही हैं।

२

कोठी की ज़िन्दगी में अब एक नयी बहार आ गयी थी—आन्ना मिख़ाइलोव्ना स्वयं युवा दिखाई पड़ने लगी थीं और मक्सिम भी हंसी-मज़ाक़ करने लगे थे, यद्यपि कभी-कभी धुएं के बादलों के पीछे से, कहीं एक ओर को गरज रहे बादलों की गड़गड़ाहट की तरह उनकी बड़बड़ाहट सुनाई दे जाती थी। वह कहते कि लगता है बहुत-से लोग जीवन को एक घटिया उपन्यास की तरह समझते, जिसका अंत विवाह में होता है और यह कि दुनिया में ऐसी बहुत-सी बातें हैं, जिनपर थोड़ा सोच-विचार कर लेना कुछ लोगों के लिए लाभदायक ही होगा। पान पोपेल्स्की इधर काफ़ी रोचक हो गये थे: लाल-लाल चेहरा, बड़ी ख़ूबसूरती से एक-से सफ़ेद पड़ रहे बाल और गोल-मटोल शरीर। मक्सिम की इस बड़बड़ाहट से वह सदा तत्परता के साथ सहमत हो जाते, शायद उन्हें लगता था कि ये बातें उन्हीं को कही गयी हैं और फ़ौरन जागीर का काम-काज देखने चल देते, जो यों भी बहुत अच्छा चल रहा था। प्योत्र और एवेलीना हंसते रहते और अपनी योजनाएं बनाते रहते। प्योत्र को बड़ी गंभीरता से संगीत का अध्ययन संपूर्ण करना था।

पतझड़ के अन्तिम मधुर दिनों में जब फ़सल की कटाई के बाद खेत

खलिहान, वन-उपवन धूप में मकड़ी के सुनहरे जाले में बंधे दिखते हैं। पोपेल्स्की परिवार ने स्तावूचेन्को के निवास स्थान स्तावूकोवो के लिए प्रस्थान किया। स्तावूकोवो पोपेल्स्की परिवार की जागीर से लगभग सत्तर वेर्स्ता दूर था, किन्तु इस बीच प्राकृतिक दृश्यावली में बहुत बड़ा अन्तर था। कार्पेथियाई पर्वतमाला की अन्तिम श्रेणियां, जो वोलीन तथा बूग के मैदान में भी दिखती हैं, यहां नजरों से ओझल हो गयी थीं और उक्राइना का स्तेपीवाला इलाक़ा यहां शुरू हो रहा था। इन मैदानों में, जहां कहीं-कहीं गहरे नाले थे, बाग़ों और हरियाली में डूबे गांव थे; क्षितिज पर प्राचीन क़ब्रों के ऊंचे-ऊंचे टीले दिखाई दे रहे थे। टीलों पर काफ़ी पहले से ही जुताई-बुआई हो रही थी।

पोपेल्स्की परिवार ने पहले कभी इतनी लंबी यात्रा नहीं की थी। प्योत्र अपने गांव और खेतों की तो चप्पा-चप्पा भूमि से परिचित था, लेकिन इनसे दूर जगहों पर वह खो-सा जाता था, उसे अपने अन्धेपन का अधिक एहसास होता था और वह घबड़ाने लगता था और चिड़चिड़ा हो जाता था। फिर भी उसने स्तावूचेन्को का निमंत्रण तत्परता से स्वीकार किया। उस स्मरणीय रात्रि के पश्चात् जब उसने अपने प्रेम तथा प्रस्फुटित होती हुई अपनी प्रतिभा से सर्वप्रथम साक्षात्कार किया था, वह अंधेरी, अनिश्चित दूरियों में खोये बाह्य संसार के प्रति अधिक निर्भीक हो गया था। य दूरियां उसकी कल्पना में निरंतर फैलती हुई उसे अपनी ओर खींच रही थीं।

पहले कुछ दिन हंसी-खुशी में बड़ी तेजी से गुजर गये। इस बार प्योत्र युवकों की मंडली में अपने आप को कहीं अधिक मुक्त अनुभव कर रहा था। वह तन्मय होकर बड़े स्तावूचेन्को का वादन और राजधानी के संगीत विद्यालय तथा कंसर्टों की उसकी कहानियां सुनता। जब बड़ा स्तावूचेन्को प्योत्र की संगीत अनुभूति की, जो अभी मंजी हुई नहीं थी, किंतु फिर भी बहुत गहन थी, प्रशंसा करने लगता, तो उसका चेहरा एकदम लाल हो जाता। वह अब दूर किसी कोने में बैठा नहीं रहता था, अपितु युवकों के वाद-विवाद में, थोड़े संयम से, किंतु बराबरी का हिस्सा लेता था। एवेलीना का व्यवहार अब पहले की तरह रूखा, ठंडा और सावधानीपूर्ण नहीं था। वह युवकों के साथ बेतकल्लुफ़ी के साथ पेश आती थी और अक्सर उन्हें हंसी-मजाक़ के फौवारों से प्रसन्न किया करती थी।

स्तावूकोवो से लगभग दस वेर्स्ता दूर एक पुराना मठ था, जो इस इलाक़े में बड़ा प्रसिद्ध था। किसी ज़माने में उसने स्थानीय इतिहास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभायी थी; अनेकों बार तातार लुटेरों ने टिड्डी दलों की तरह इसे घेरा या और उसपर तीरों की बौछार की थी, कई बार पोलैंड के विविध सैनिकों की टुकड़ियां जान हथेली पर लेकर उसकी दीवारों पर चढ़ी थीं और कभी कज्ज़ाकों ने पोलिश क़ब्ज़ावरों से अपने गढ़ को छुड़ाने के लिए अपनी जानें यहां खोयी थीं ... अब उसकी पुरानी मीनारें ढहती जा रही थीं, दीवारों की जगह पर कहीं-कहीं केवल बाड़ थी, जो मठ के सब्ज़ियों के खेतों को किसानों के मनचले जानवरों से रक्षा करती थी। चौड़ी खाइयों की तली में जौ उगा हुआ था।

एक दिन, जब मौसम सुहावना था, स्तावूचेन्को परिवार तथा उसके अतिथि इस मठ को देखने चले। मक्सिम, उनकी बहन और एवेलीना एक बड़ी-सी पुरानी गाड़ी में बैठे, जो बड़ी नाव की भांति अपनी स्प्रिंगों पर हिचकोले खाती जा रही थी। युवक और उनके साथ ही प्योत्र भी घोड़ों पर चले।

प्योत्र साथियों के घोड़ों की टापों तथा सामने चलती हुई गाड़ी के पहियों की घर्राहट सुनता हुआ बड़ी कुशलता से, आज़ाद चल रहा था। वह इतने इतमीनान और निर्भयता के साथ घोड़े पर चल रहा था कि यदि कोई अपरिचित व्यक्ति देखता, तो वह अनुमान भी न लगा पाता कि यह युवक घुड़सवार रास्ता नहीं देख सकता और केवल दीर्घकालीन अभ्यास से घोड़े की अन्तःचेतना के अनुकूल उसे चलने का आदी हो गया है। आन्ना मिखाइलोव्ना ने शुरू में व्यग्रतापूर्वक अपने पुत्र की ओर देखा, क्योंकि वह घोड़ा और सड़क दोनों ही से अपरिचित था। मक्सिम भी उसे कभी-कभी कनखियों से देख लेते। उनकी नज़रों में शिक्षक का गर्व और औरतों के डर पर उपहास का भाव था।

"आप जानते हैं ..." गाड़ी के पास आकर सहसा विद्यार्थी कहने लगा। "अभी-अभी मुझे एक क़ब्र की बात याद आयी है, जिसकी कहानी हमें मठ के पुराने अभिलेखों को उलटते-पलटते पता चली है। चाहें तो हम उधर मुड़ लें। ज़्यादा दूर नहीं है, यहीं गांव के किनारे पर।"

"यह हमारे साथ चलते हुए तुम्हें ऐसी बुरी यादें क्यों आने लगीं?" एवेलीना खिलखिलाकर हंस दी।

"इस सवाल का जवाब मैं बाद में दूंगा!" उसने गाड़ीवान को हुक्म दिय कि वह अपनी गाड़ी कोलोद्ना गांव की ओर मोड़े और ओस्ताप के गा के पास रुक जाये। और तब घोड़े को पीछे फेरते हुए वह आकर अन घुड़सवारों से मिल गया।

गाड़ी अब एक संकरी छोटी सड़क से होकर चल रही थी और उसके पहिये धूल की एक मोटी-सी तह में धंसे जा रहे थे। नवयुवक अपने घोड़ को दौड़ाते हुए तेजी से आगे निकल गये और सड़क के किनारे एक बा के पास उतर पड़े। घोड़ों को यहां बांध चुकने के बाद युवक स्तावूचेन्क पीछे वापस लौटे, ताकि जब गाड़ी यहां पहुंचे, तो वे उतरने में स्त्रियं की सहायता कर सकें। प्योत्र घोड़े की जीन के सहारे खड़ा था, औ जैसा कि वह हमेशा करता था, सिर झुकाये चारों ओर की ध्वनियों क सुन रहा था और यथासंभव इस अपरिचित स्थान में अपनी स्थिति निश्चित करने का प्रयत्न कर रहा था।

उसके लिए शरद् का यह धुपहला दिन एक अंधेरी रात थी जो केवल दिन की तेज आवाजों से संजीवित थी। उसे आती हुई गाड़ी क आवाज तथा दोनों युवकों की बातचीत और हंसी साफ़-साफ़ सुनाई प रही थी। उसके पास खड़े घोड़े लगाम के छल्लों को झनझनाते बार-बार अपना सिर बाड़ के उस पार उगी हुई घास की ओर बढ़ा रहे थे। पास ही कहीं, शायद क्यारियों से किसी गीत के स्वर धीमे-धीमे खोये-खोये से हवा के मंद झोंकों के साथ बहे आ रहे थे। बाग़ की पत्तियों में सरसराहट हो रही थी, कहीं एक सारस चहक रहा था, मुर्गे के पंखों की फड़फड़ाहट और ऐसी बांग, मानो एकाएक उसे कुछ याद आ गया हो, सुनाई दे रह थी। पास ही से एक ढेंकली की भी आवाज आ रही थी। इन सब ध्वनिय से निकट ही गांव में हो रहे दिन के काम-काजों का आभास हो रहा था।

और सचमुच वे गांव के किनारे एक बाग़ के पास रुके थे ... अधिक दूर से आनेवाली ध्वनियों में सबसे साफ़ थी मठ के घंटे की समस्वर ऊंची बारीक टनटन। न जाने इस घंटे की टनटन से या फिर हवा के बहाव से या अन्य किन्हीं चिह्नों से, जिन्हें वह स्वयं भी नहीं जानता था, प्योत्र यह अनुभव कर रहा था कि उधर दूर, मठ के पार कहीं सहसा गर्त है, शायद नदी तट पर, जिसके पार दूर-दूर तक समतल मैदान फैला हुआ है, जहां से शांत जीवन की अस्पष्ट ध्वनियां वह कठिनाई से सुन

पा रहा है। ये ध्वनियां उस तक मंद-मंद-सी, रुक-रुक कर आ रही थीं और उनके माध्यम से उसका मस्तिष्क दूरी का अनुभव कर रहा था, जिसमें अस्पष्ट, लंबी ध्वनियां झिलमिलाती हैं, वैसे ही जैसे हम आंखों वालों को दूरस्थ रेखाएं सायंकाल की हल्की रोशनी में झिलमिलाती हुई सी लगती हैं...

हवा प्योत्र की टोपी के नीचे से झूल रही बालों की लट से खिलवाड़ करती हुई प्राचीन यूनानी वादक एग्रोल के हार्प की लंबी तान की सी ध्वनि करती हुई उसके कानों के पास से बह रही थी। अस्पष्ट स्मृतियों ने उसके मस्तिष्क को झकझोर दिया। विस्मृति के गर्भ से निकलती हुई उसके बालपन की स्मृतियां वायु, स्पर्श एवं ध्वनि के रूप में साकार हो उठीं ... उसे लगा कि यह हवा दूर से आती हुई घंटे की आवाज़ और गीत के स्वरों से एकाकार होकर उसे कोई करुण कहानी सुना रही है। यह इन स्थानों के बीते दिनों की या उसके अपने अतीत की या उसके अनिश्चित, अंधकारमय भविष्य की कहानी थी।

क्षण भर बाद गाड़ी आ पहुंची, सब उतरे और बाग़ में गये। बाग़ के एक कोने में घास-फूस के बीच ज़मीन में लगभग धंसी हुई पत्थर की चौड़ी सिल पड़ी थी। और घास-फूस से कुछ ऊपर भिन्न-भिन्न प्रकार के कंटीले पौधों की पत्तियां एवं फूल हवा में झूल रहे थे और प्योत्र को घास और काई से ढंकी क़ब्र पर उनकी फुसफुसाहट सुनाई दे रही थी।

"अभी हाल ही में हमें इसका पता चला है," छोटे स्तावूचेन्को ने कहा। "लेकिन जानते हैं इसके नीचे कौन लेटा है? अपने ज़माने का प्रसिद्ध योद्धा, बूढ़ा अतामान* इगनात कारीय ..."

"तो यहां आकर तुझे चैन मिला, बूढ़े शैतान!" मक्सिम धीरे से बोले। "लेकिन वह यहां कोलोद्ना में कैसे आ पहुंचा?"

सन् सत्रह सौ ... में कज़्ज़ाक फ़ौजों ने तातारों के साथ मिलकर इस मठ पर घेरा डाला हुआ था। मठ पर पोलिश सेनाओं का क़ब्ज़ा था ... और आप तो जानते ही हैं कि तातार सदा ही खतरनाक सहयोगी थे ... दुश्मनों ने किसी न किसी प्रकार से उनके मिर्ज़ा को खरीद लेने की कोई तरकीब निकाल ली होगी। सो रात को तातार और पोलिश सिपाही एक

---

*अतामान—पुराने ज़माने में कज़्ज़ाकों का नायक।—अनु०

साथ ही कज्जाकों पर टूट पड़े। यहां कोलोवुना के पास अंधेरे में घमासान युद्ध हुआ। अन्त में तातारों की हार हुई और मठ भी वापस ले लिया गया। लेकिन इस लड़ाई में कज्जाकों का अतामान मारा गया।"

"कहानी में एक और नाम मिलता है," वह धीमे-धीमे बोलता गया। "यद्यपि हमें बहुत ढूंढ़ने पर भी दूसरी क्रब्र नहीं मिली है। मठ में मिले अभिलेख के अनुसार कारोय की बग़ल में एक युवा बन्दूरिस्त दफ़नाया हुआ है। सभी अभियानों में अतामान का साथ देनेवाला यह बन्दूरिस्त अन्धा था ..."

"अन्धा? अभियानों में?" आन्ना मिखाइलोव्ना ने भयभीत होकर कहा। उनके सामने अंधेरे में चलनेवाले उस घमासान युद्ध में अपने ही अन्धे पुत्र का चित्र खिंच गया था।

"हां, वह अन्धा था। और लगता है वह सारे ज़ापोरोज्ये में विख्यात गायक था ... कम से कम मठ में मिले अभिलेख में यही लिखा है। यह अभिलेख पोलिश, उक्राइनी और चर्च-स्लावोनिक इन सब भाषाओं की खिचड़ी में लिखा है। लाइये, मैं सुनाये देता हूं, मुझे यह पूरा याद है: 'और ओहि संग यशस्वी कज्जाक कवि यूरको भव, कदापि कारोय संग छोड़ि नाहीं एवं ओहि मन को चहेता रहिन। जिन्हिं दुष्ट शक्ति मारे औ' यूरको पर वार कियो रहि, स्व दुष्ट धर्म मांहिं विकलांग प्रति दया न जानो तथा तं को महान गीत एवं वादन प्रतिभा, जो सुनं स्तेपी को भेड़ियो मुग्ध भयो, ना पहिचानि और रात्रि को आक्रमण मां अन्धे पर दया न कीन्हें। ताहि योद्धा औ' गायक पास-पास दफ़नाये होईं, जिन्हिं महान बलिदान अनन्त काल तक अमर भव। आमीन ...'"

"पत्थर काफ़ी चौड़ा है," किसी ने कहा। "हो सकता है दोनों यहीं दफ़नाये गये हों ..."

"हां, सचमुच, लेकिन पत्थर पर लिखे लेख पर काई उग आयी है ... देखो तो, यहां ऊपर सत्ता के चिह्न बने हुए हैं। परंतु आगे सब काई से हरा है।"

"ठहरो," प्योत्र ने कहा। वह सांस रोके, बड़ी उत्सुकता से यह कहानी सुन रहा था।

वह पत्थर के पास आकर उसपर झुक गया। उसकी पतली-पतली उंगलियां पत्थर पर जमी काई की हरी परत पर चलने लगीं। वह परत

के नीचे पत्थर का कड़ापन महसूस कर रहा था और उसपर खुदे हुए अक्षरों की हल्की-हल्की रेखाएं टटोल रहा था।

एक क्षण तक वह ऐसे बैठा रहा। उसका चेहरा ऊपर उठा हुआ था और भौंहें तनी हुई थीं। फिर उसने पढ़ना आरम्भ किया :

"... इगनातो जिस नाम कारीय रह्यो ... दुर्भाग्यवश ... तातारन को तीर तो ग्राहत होयो ..."

"हां, इतना हम भी पढ़ पाये थे," विद्यार्थी बोला।

उत्तेजना से तनी हुई और पोरों पर मुड़ी हुई अन्धे की उंगलियां नीचे को चल रही थीं।

"जेहि मार्‍यो ..."

"'दुष्ट शक्ति'..." विद्यार्थी तुरंत आगे बोला। "यह शब्द यूरको की मृत्यु के वर्णन में मिलते हैं ... अर्थात् सचमुच ही यह भी इसी पत्थर के नीचे पड़ा है ..."

"हां, 'दुष्ट शक्ति...' प्योत्र ने पढ़ा। "आगे सब नष्ट हो गया है ... ठहरो, और है: 'तातारी तलवारों सों कट्यो रहि'... लगता है और भी कोई शब्द है, पर, नहीं ... और कुछ नहीं बचा है।"

सचमुच ही इसके आगे बन्दूरिस्त की सारी स्मृति डेढ़ सौ साल पुराने कालग्रस्त पत्थर में खो गयी थी ...

कुछ क्षण के लिए गहन नीरवता छायी रही। वायु में केवल पत्तियों की सरसराहट ही सुन पड़ती थी। एक लम्बी निश्वास से नीरवता भंग हुई। यह ओस्ताप था—बाग का मालिक और प्राचीनता के अधिकार से बूढ़े अतामान के अंतिम निवास का स्वामी। जागीरदारों के पास आकर वह आश्चर्यचकित देख रहा था, कैसे एक युवक, जिसकी जड़ आंखें ऊपर को लगी थीं, उंगलियों से टटोल-टटोल कर पत्थर पर खुदे शब्द पढ़ रहा है। दसियों दशाब्दियों, आंधी, तूफ़ान और बारिशों ने इन शब्दों को आंखों वालों की आंखों से छिपा दिया था।

"भगवान की कृपा है," प्योत्र की ओर श्रद्धाभाव से देखता हुआ वह बोला। "ईश्वर की माया से अन्धे वह जान पाते हैं, जो आंखों वाले आंखों से नहीं जान पाते।"

"पान्ना एवेलीना, अब तुम समझीं कि मुझे सहसा यूरको-बन्दूरिस्त की याद क्यों आयी?" विद्यार्थी ने प्रश्न किया। गाड़ी मठ की ओर

धूलभरी सड़क पर धीरे-धीरे बढ़ रही थी। "मैं और मेरा भाई यह सोचकर हैरान थे कि अन्धा गवैया कारीय और बिजली की तरह आक्रमण करनेवाली उसकी सेना के साथ किस प्रकार बराबर घोड़े पर चलता रहा होगा। यह हो सकता है कि उस समय कारीय सेनानायक न होकर केवल एक टुकड़ी का ही नेता रहा हो, लेकिन हम यह जानते हैं कि वह हमेशा घुड़सवार कज्जाकों का ही नेता रहा था न कि पैदल टुकड़ियों का। और बन्दूरिस्त – वे तो प्रायः बूढ़े हुआ करते थे, जो भीख मांगने के लिए गांव-गांव घूमते थे ... आज जब मैंने तुम्हारे प्योत्र को घोड़े की सवारी करते देखा, तो मेरी कल्पना के आगे घोड़े पर सवार कन्धे पर बन्दूक की जगह उसका बन्दूरा लटकाये अन्धे यूरको का चित्र घूम गया ..."

युवक एक क्षण के लिए रुका और विचारमग्न उसने फिर कहना शुरू किया: "और शायद वह युद्ध में भी लड़ा हो ... कुछ भी हो वह अभियानों में भाग लेता था और खतरे उठाया करता था। हमारे उक्राइना में वह भी क्या जमाना था!"

"कितना भयानक है यह सब!" आह भरते हुए आन्ना मिखाइलोव्ना बोलीं।

"कितना अद्भुत था यह सब!" युवक ने प्रतिवाद किया ...

"अब ऐसा कुछ नहीं होता," तीखी आवाज़ में प्योत्र ने कहा। वह गाड़ी के पास आ गया था। भौंहे ऊपर किये और अन्य घोड़ों की टापें सुनते हुए उसने अपने घोड़े को गाड़ी के साथ-साथ चलाया ... उसका चेहरा कुछ अधिक सफ़ेद पड़ गया था और उसपर उसकी आंतरिक उद्विग्नता प्रकट हो रही थी ... "अब यह सब कुछ लुप्त हो चुका है," उसने दोहराया।

"जिसे लुप्त होना था, वह लुप्त हो गया," मक्सिम ने विचित्र रूखेपन से कहा ... "उनका अपना जीवन था, तुम अपना ढूंढ़ो ..."

"आपके लिए तो ऐसा कहना आसान है," विद्यार्थी ने उत्तर दिया। "आपने जीवन से अपना भाग पा लिया है ..."

"हां, और जीवन ने भी मुझसे कुछ लिया है," पुराने गरीबाल्दी के साथी ने उत्तर दिया और अपनी बैसाखी की ओर देखते हुए एक फीकी-सी हंसी बिखेर दी।

कुछ देर चुप रहने के बाद उन्होंने कहा:

"मैं भी कभी उक्राइनी कज्जाकों के स्वतंत्र संगठन 'सेच' के सपने देखा करता था, स्वच्छंदता के रोमांटिक काव्यमय सपने ... यहां तक कि तुर्की में सादिक़* से भी मिला था ..."

"और फिर क्या हुआ?" युवकों ने उत्सुकतापूर्वक पूछा।

"सारा नशा काफ़ूर हो गया, जब मैंने तुम्हारे उन 'स्वच्छंद कज्जाकों' को तुर्की तानाशाही की चाकरी करते हुए देखा ... कितना छल-कपट! कितना ऐतिहासिक ढोंग! .. मैं समझ गया कि इतिहास ने इस तमाम ढकोसले को कबाड़खाने में फेंक दिया है और समझ गया कि महानता उद्देश्यों की होती है, न कि सुंदर, रोमांचकारी स्वरूप की ... और तब मैं इटली चला गया। वहां के लोग एक उद्देश्य के लिए लड़ रहे थे, जिसके लिए उनकी भाषा न जानते हुए भी मैं अपना जीवन उत्सर्ग करने को तैयार था।"

मक्सिम ने बड़ी गंभीरता और सच्चे दिल से यह सब कहा। वृद्ध स्तावूचेन्को तथा उसके पुत्रों की ज़ोरदार बहसों में वह प्रायः कभी भाग न लेते थे। हां, कभी-कभी युवकों के उत्साह पर प्रसन्नता प्रकट करने अथवा उनके पक्ष के समर्थन के लिए उनके द्वारा अनुरोध किये जाने पर वह मुस्करा ज़रूर देते थे। लेकिन आज जब उनकी कल्पना के सामने काई लगी क़ब्र पर उस पुरानी कथा ने एक सजीव स्वरूप ग्रहण किया, तो वह क्षुब्ध हो उठे और उन्हें ऐसा लगा जैसे अतीत की इस पुरानी गाथा का आज कोई वास्तविक महत्व है—प्योत्र के लिए और प्योत्र के माध्यम से उन सबके लिए।

इस बार युवकों ने तर्क करने का कोई प्रयत्न नहीं किया। शायद यह कुछ मिनट पहले प्रोस्ताप के बाग़ में हुई तीव्र अनुभूतियों का फल था—क़ब्र का पत्थर साफ़-साफ़ कह रहा था: पुराने दिन गुज़र गये हैं,—अथवा शायद वे इस पुराने सैनिक की गम्भीर वाणी से बहुत प्रभावित हुए थे ...

"तो अब हमारे लिए रह क्या जाता है?" क्षण भर मौन रहने के बाद विद्यार्थी ने पूछा।

---

*चाइकोव्स्की, एक उक्राइनी स्वच्छंदतावादी, जो सादिक़-पाशा के नाम से मशहूर था, कज्जाकों को तुर्की में एक राजनीतिक शक्ति में संगठित करने के सपने देखता था।—सं०

"संघर्ष, वही शाश्वत संघर्ष," मक्सिम ने उत्तर दिया।

"किस क्षेत्र में? किस रूप में?"

"इसका पता लगाना तुम्हारा काम है," मक्सिम ने संक्षिप्त उत्तर दिया।

अब मक्सिम के शब्दों में उपहास की व्यंजना न थी और ऐसा प्रतीत होता था कि वह इन समस्याओं पर गम्भीरतापूर्वक विचार-विनिमय करने को तैयार हैं। लेकिन गम्भीर बातचीत के लिए अब समय नहीं बचा था ... गाड़ी मठ के फाटक तक पहुंच चुकी थी। विद्यार्थी ने झुककर प्योत्र के घोड़े की लगाम पकड़ ली। अन्धे युवक के चेहरे पर खुली किताब की भांति गहरा उद्वेग स्पष्ट लिखा था।

३

मठ के दर्शक प्रायः पुराना गिरजाघर देखते और फिर घंटाघर पर चढ़ते थे, जहां से दूर-दूर तक का दृश्य दिखता था। साफ़ मौसम में लोग गुबेर्निया* नगर के सफ़ेद धब्बे और क्षितिज पर द्नेप्र की टेढ़ी-मेढ़ी रेखाएं देखने का यत्न करते थे।

सूर्यास्त होने को था। मक्सिम को एक मठवासी की छोटी-सी कोठरी के पास आराम करने के लिए छोड़कर बाक़ी लोग घंटाघर के दरवाज़े के पास पहुंचे। मेहराब के नीचे काला चोग़ा और सिर पर नुकीली टोपी पहने मठ का दुबला-पतला नौजवान सेवादार खड़ा था, उसका एक हाथ दरवाज़े पर लगे ताले पर था ... कुछ ही दूर सहमी चिड़ियों के झुंड की तरह बच्चों की टोली खड़ी थी; साफ़ पता चल रहा था कि नौजवान सेवादार और शैतान बच्चों की टोली में अभी-अभी कोई झड़प हो रही थी। सेवादार के लड़ाकू हाव-भाव और जिस तरह वह ताले पर हाथ रख कर खड़ा था, उससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता था कि बच्चे साहब लोगों के पीछे-पीछे घंटाघर में घुस जाना चाहते थे और सेवादार उन्हें भगा रहा था। उसका चेहरा क्रोधपूर्ण और ज़र्द था, केवल गालों पर लाली के धब्बे थे।

---

*गुबेर्निया—पुराने रूस की प्रशासनिक इकाई।—अनु०

नौजवान सेयावार की आंखों में कुछ विचित्र जड़ता थी ... सब से पहले आन्ना मिख़ाइलोव्ना का ही ध्यान उसके चेहरे और आंखों के विचित्र भाव की ओर गया और घबड़ाकर उन्होंने एवेलीना का हाथ पकड़ लिया।

"अन्धा!" भयभीत-सी युवती बुदबुदायी।

"हुश!" मां ने उत्तर दिया, "एक और ... देख रही है?"

"हां ..."

सेयावार के चेहरे में प्योत्र से एक विचित्र समानता थी, जिसे न देख पाना कठिन था। घबड़ाहट के कारण मुंह पर झलक पड़नेवाली वही सफ़ेदी, वैसी ही साफ़ एवं जड़ पुतलियां, भौंहों की वैसी ही व्यग्र चंचलता, जो प्रत्येक ध्वनि सुनकर किसी डरे हुए कीड़े की मूंछों की भांति इधर-उधर नाचने लगती थीं ... हां, उसके नाक-नक़्श अधिक रूखे थे, शरीर बेडौल, किंतु इससे दोनों की समानता और भी स्पष्ट हो रही थी। और जब नौजवान अपनी खोखली छाती को हाथों से दबाकर ज़ोर-ज़ोर से खांसने लगा, आन्ना मिख़ाइलोव्ना ने भयभीत होकर उसकी ओर देखा। उनकी आंखें खुली की खुली रह गयीं मानो उन्होंने कोई भूत देखा हो ...

खांसी का दौरा ख़त्म होने पर उसने दरवाज़ा खोला और दहलीज़ पर रुककर फटी-फटी आवाज़ में पूछा:

"बच्चे तो नहीं आ रहे? भागो, कमबख़्तो!" वह उनकी ओर लपका। फिर युवकों को अंदर जाने का रास्ता देते हुए उसने चापलूसीभरी और ललचायी आवाज़ में कहा:

"घंटिये को भी कुछ मिलेगा, दाता?.. संभलके चलना,—अंधेरा है ..."

सब लोग सीढ़ियां चढ़ने लगे। अभी कुछ ही क्षण पहले आन्ना मिख़ाइलोव्ना को यह सोचकर कि चढ़ाई कितनी सीधी और कठिन है कुछ घबड़ाहट हो रही थी, लेकिन अब वह मूक उनके पीछे हो लीं।

अन्धे घंटिये ने दरवाज़ा बन्द करके उसपर ताला लगा दिया ... युवक मंडली टेढ़े-मेढ़े ज़ीने से होती हुई ऊपर चढ़ रही थी, लेकिन आन्ना मिख़ाइलोव्ना, जो बाक़ी लोगों को रास्ता देने के निमित्त एक कोने में दुबक गयी थी, नीचे खड़ी-खड़ी अभी भी सकुचा रही थीं। मीनार के भीतर अंधेरा हो गया था। कुछ क्षण पश्चात आन्ना मिख़ाइलोव्ना को

पत्थर की मोटी दीवार में एक तिरछे छेद में से आती हुई संध्याकालीन धूमिल प्रकाश की एक किरण दिखाई पड़ी। इस प्रकाश में सामने की दीवार के कुछ टेढ़े-मेढ़े धूलभरे पत्थर धुंधले से चमक रहे थे।

"चाचा, ओ चाचा, जाने दे ना," दरवाजे के बाहर से बच्चों की बारीक-बारीक आवाजें आयीं। "अच्छे चाचा, जाने दे ना।"

घंटिया गुस्से में दरवाजे की ओर लपका और उसपर मढ़ी लोहे की चद्दर पर बेतहाशा मुट्ठियां पटकने लगा।

"भागो, भागो, कमबख्तो ... बिजली गिरे तुम पर, मुओ!" वह चिल्ला रहा था, उसकी आवाज गुस्से से फटी जा रही थी ...

"अन्धा शैतान!" कई बच्चे एक साथ जोर से बोल पड़े और दरवाजे के बाहर से दसेक नंगे पैरों की तेजी से भागने की आवाज आयी।

घंटिया एक क्षण तक सुनता रहा। फिर उसने एक गहरी सांस ली।

"मरते भी नहीं, कमबख्त ... सत्यानाश हो तुम्हारा, मुओ ... हे भगवान! ओ मेरे भगवान, क्यों मुझ अभागे को भूल गया है तू..." सहसा वह कराह उठा। यह एक बुरी तरह से सताये हुए, जीवन भर पीड़ित, दुःखी इन्सान की निराशाभरी कराह थी।

"कौन है यहां? क्यों खड़े हो?" तीखी आवाज में उसने पूछा। वह आन्ना मिखाइलोव्ना से टकरा गया था, जो निचली सीढ़ियों पर जड़वत् खड़ी थीं।

"जाओ, जाओ। कोई बात नहीं," फिर कुछ नम्रता से वह बोला, "ठहरो, लो मेरा हाथ पकड़ लो ... घंटिये को भी कुछ मिलेगा, दाता?" उसने फिर वही अप्रिय चापलूसीभरी आवाज में पूछा।

आन्ना मिखाइलोव्ना ने अंधेरे में अपना बटुआ टटोला और उसे एक नोट थमा दिया। अन्धे ने उसकी ओर बढ़े हुए हाथ से फ़ौरन नोट झपट लिया। वे दीवार के छेद तक चढ़ गये थे और उससे आते प्रकाश में आन्ना मिखाइलोव्ना ने देखा कैसे वह नोट को गाल से लगाकर उसपर उंगली फेर रहा है। उसका सफ़ेद चेहरा, जो उसके बेटे के चेहरे से इतना मिलता था, छेद से आ रही रोशनी में अजीब-सा लग रहा था। अचानक वह भोली और लोभी खुशी के भाव से विकृत हो गया।

"धन्यवाद, बहुत-बहुत धन्यवाद। सचमुच का नोट, पच्चीस रूबल का ... मैंने सोचा—हंसी उड़ा रही हैं ... अन्धे का मजाक़ ... ऐसा भी होता है, लोग उड़ाते हैं ..."

बेचारी मां का पूरा चेहरा आंसुओं से भीगा था। उसने जल्दी से आंसू पोंछे और ऊपर को चल दी, जहां आगे चली गयी युवा मंडली की मिली-जुली आवाजें और गूंजती चापें दीवार के पीछे झरते पानी की तरह सुनाई दे रही थीं।

युवा मंडली काफ़ी ऊंचे एक मोड़ पर ठहर गयी। यहां एक छोटी-सी खिड़की में से कुछ ताजी हवा और कुछ प्रकाश आ रहा था, जो नीचे के प्रकाश से अधिक स्वच्छ, अधिक प्रखर था। खिड़की के नीचे दीवार पर, जो काफ़ी चिकनी थी, बहुत-से शब्द खुदे हुए थे। ज्यादातर यह दर्शकों के नाम थे।

चुटकियां लेते हुए युवक इन नामों में अपने परिचितों के नाम ढूंढ़ रहे थे।

"और यह लो सुनो उपदेश," विद्यार्थी ने कहा और थोड़ी कठिनाई के साथ पढ़ा: "पथ पर निकलते हैं बहुत, लक्ष्य तक पहुंचते है कम..." लगता है इस चढ़ाई की ही बात कही गयी है," हंसते हुए वह बोला।

"जो दिल में आये समझ," उसकी ओर कान लगाकर घंटिये ने बड़ी रुखाई से कहा और उसकी भौंहें जल्दी-जल्दी हिलने लगीं। "यहीं पर एक कविता भी है थोड़ा नीचे। अगर तू उसे पढ़ पाये ..."

"कहां है कविता? कोई कविता नहीं यहां।"

"हां, हां, तुझे पता नहीं है, और मै तुझे कह रहा हूं कि है। तुम आंखों वालों से भी बहुत कुछ छिपा हुआ है ..."

वह दो सीढ़ियां नीचे उतरा और अंधेरे में, जहां दिन के प्रकाश की आखिरी हल्की झलक खो गयी थी, टटोलते हुए बोला:

"यहां है। अच्छी कविता है, पर तुम लोग बत्ती के बिना नहीं पढ़ पाओगे ..."

प्योत्र उसके पास आ गया और दीवार पर हाथ फेरते हुए उसने शीघ्र ही वह कटु सूक्ति ढूंढ़ ली, जिसे खोदनेवाला शायद स्वयं सौ साल पहले मर चुका था:

भूल न जाओ, यह है नश्वर जीवन
भूल न जाओ, अन्तिम निर्णय के क्षण,
भूल न जाओ, निश्चित मरने का दिन
भूल न जाओ, नरक-यातना, पीड़न...

"लो एक और उपदेश," विद्यार्थी स्तावूचेन्को ने टीका की, परन्तु उसका मज़ाक़ जम न सका।

"क्यों, पसन्द नहीं आया?" ज़हरीली आवाज़ में घंटिया बोला। "हां, अभी तो तू जवान है, फिर भी ... कौन जाने। मौत की घड़ी तो रात के चोर की तरह आती है।" और फिर बदली हुई आवाज़ में कहने लगा, "सुन्दर कविता है। 'भूल न जाओ, यह है नश्वर जीवन, भूल न जाओ, अन्तिम निर्णय के क्षण,' हां, उस दरबार में किसका क्या होगा ..." फिर उसी ज़हरीलेपन से उसने अपनी बात ख़त्म की।

कुछेक सीढ़ियां और चढ़कर वे घंटाघर के पहले चबूतरे पर पहुंचे। यह काफ़ी ऊंचा था। दीवार में और ऊपर जाने के लिए पहले से अधिक कठिन रास्ता था। अंतिम चबूतरे से उन्हें विस्तृत मनोहर दृश्य दिखा। सूर्य पश्चिम में डूब रहा था, नीची भूमि पर लम्बी-लम्बी परछाइयां लोट रही थीं, पूर्व में घनी बदली छायी हुई थी, दूरी पर सब कुछ संध्या के झुट-पुटे में खोया हुआ था और बस कहीं-कहीं नीली परछाइयों में से सूर्य की तिरछी किरणें कहीं किसी झोंपड़ी की सफ़ेद दीवार, तो कहीं लाल पड़ी खिड़की चमका देती थीं और कभी दूर दूसरे घंटाघर के क्रास पर झिलमिला उठती थीं।

सब स्तब्ध थे। ऊंचाई पर बह रही स्वच्छ, पृथ्वी की वाष्पों से रहित वायु चबूतरे के मेहराबों में घंटों की रस्सियों को झकोरती घंटों में पहुंचकर उनमें रह-रह कर एक लंबी गूंज पैदा कर रही थी। गहरी धातु-ध्वनियां मंद-मंद गूंज रही थीं और इनके पीछे कानों को किसी और ध्वनि का आभास हो रहा था, या तो सुदूर अस्पष्ट संगीत या तांबे की गहरी निश्वासें। नीचे चारों ओर फैले दृश्य से गहन शांति और मृदु चैन की अनुभूति हो रही थी।

इस समय मीनार के चबूतरे पर जो मौन छाया हुआ था, उसका एक कारण और भी था। किसी समान आन्तरिक प्रेरणावश जो शायद उनकी आत्मा में हो रही ऊंचाई और अपनी निस्सहायता की अनुभूति का परिणाम थी, दोनों अन्धे मेहराब के कोनों पर मंद-मंद बहती संध्याकालीन वायु की ओर मुख फेरकर और दोनों हाथों को चबूतरे के चारों ओर बनी दीवार पर टिकाकर खड़े हो गये।

इस समय उन दोनों की विचित्र समानता किसी की भी आंखों से छिपी नहीं रही। घंटिया उम्र में कुछ बड़ा था; उसका लम्बा-चौड़ा चोग़ा उसके दुबले-पतले शरीर पर झूल रहा था, नाक-नक़्श अनघड़ थे। बारीकी से देखने पर कुछ फ़र्क़ भी मिल सकते थे—घंटिये के बाल भूरे थे, नाक कुबड़ही थी और होंठ प्योत्र की अपेक्षा कुछ पतले। होंठों के ऊपर मूंछें निकलने लगी थीं और ठोड़ी घुंघराली दाढ़ी से घिरी थी। लेकिन दोनों के हाव-भाव, उनके होंठों की दाब और उनकी भौंहों की निरंतर चंचलता में वह आश्चर्यजनक, संबंधियों जैसी समानता थी, जिसके फलस्वरूप बहुत-से कुबड़े शकल से दो भाइयों की तरह एक से लगते हैं।

प्योत्र का चेहरा अधिक शान्त था। उसमें जो आदतन उदासीनता दिखाई पड़ रही थी, वह घंटिये में कटुता को पहुंच गयी थी, जो कभी-कभी द्वेष का रूप भी ले लेती थी। परंतु इस समय वह भी शांत हो रहा लगता था। वायु का मंद बहाव मानो उसके चेहरे की झुर्रियां मिटा रहा था और उसमें वह मृदु शांति उंडेल रहा था, जो उसकी अन्धी आंखों से छिपे चारों ओर के मनोरम दृश्य पर छायी हुई थी। उसकी भौंहों की चंचलता धीरे-धीरे कम होती जा रही थी।

और फिर सहसा दोनों की भौंहें चंचल हो उठीं मानो दोनों ने ही नीचे घाटी से आती हुई कोई ऐसी ध्वनि सुनी हो, जिसे दूसरे लोग सुनने में असमर्थ थे।

"घंटे बज रहे हैं," प्योत्र बोला।

"यह सेंट येगोरी का गिरजा है, यहां से पन्द्रह वेर्स्ता दूर," घंटिये ने बताया। "वे हमारे से आधा घंटा पहले संध्या प्रार्थना के लिए घंटे बजाते हैं ... तुझे सुनाई दे रहा है? मुझे भी सुनाई दे रहा है, दूसरों को नहीं सुनाई पड़ता ...

"कितना अच्छा लगता है यहां," सपनों में खोया वह कहता गया। "ख़ासकर त्योहार के दिन। तुम लोगों ने कभी मुझे बजाते सुना है?"

प्रश्न में बच्चों का सा घमंड था।

"आना कभी सुनने। फ़ादर पम्फ़ीली ने ... फ़ादर पम्फ़ीली को नहीं जानते? उन्होंने ख़ास मेरे लिए ये दो छोटे घंटे मंगवाये हैं।"

दीवार से हटकर उसने बड़े प्यार से दो छोटे घंटों को सहलाया। वे अभी दूसरे घंटों की तरह काले नहीं हुए थे।

"बड़े प्यारे घंटे हैं ... बजाओ, तो बस गाते जाते हैं, गाते जाते हैं ... खासकर ईस्टर पर ..."

उसने बढ़कर घंटों की रस्सियां पकड़ लीं और तेज़-तेज़ उंगलियां चलाता हुआ दोनों में से सुरीले स्वर निकालने लगा; घंटे के लटकन की चोट इतनी हल्की और साथ ही इतनी स्पष्ट थी कि टनाटन सभी को सुनायी पड़ रही थी, किंतु यह ध्वनि संभवतः घंटाघर के चबूतरे से दूर नहीं फैल रही थी।

"और यह बड़ा घंटा बजता है—बू-म, बू-म, बू-म ..."

उसके चेहरे पर बच्चों जैसी प्रसन्नता बिखर गयी, लेकिन उसकी इस प्रसन्नता में दयनीयता थी।

"घंटे तो मंगवा दिये," गहरी सांस लेते हुए वह बोला। "पर नया गरम कोट नहीं ले देता। कंजूस! यहां इतनी ऊंचाई पर ठंड से मरता हूं ... सबसे ख़राब शरद है ... बहुत ठंड होती है ..."

एक क्षण के लिए वह रुका, कान लगाकर कुछ सुना और फिर बोला:

"वह लंगड़ा नीचे पुकार रहा है। जाओ, तुम्हारे जाने का समय हो गया।"

"चलो, चलें," एवेलीना सबसे पहले उठ खड़ी हुई। अभी तक वह मंत्रमुग्ध-सी पलक झपकाये बिना घंटिये पर नजरें जमाये रही थी।

सब लोग सीढ़ियों की ओर बढ़े। घंटिया ऊपर ही खड़ा रहा। प्योत्र मां के पीछे क़दम उठाते-उठाते सहसा रुक गया।

"आप जाइये," आज्ञापूर्ण स्वर में उसने कहा। "मैं अभी आता हूं।"

शीघ्र ही बाकी लोग नीचे उतर गये और सीढ़ियों पर से पैरों की चापें आनी बन्द हो गयीं। केवल एवेलीना आन्ना मिखाइलोव्ना को आगे निकलने देकर वहीं दीवार से सटी सांस रोके खड़ी रही।

अब अन्धे युवक अपने को अकेले समझ रहे थे। एक क्षण तक दोनों गतिहीन खड़े रहे—शान्त, मौन, कुछ सुनते हुए से।

"कौन है यहां?" फिर घंटिये ने पूछा।

"मैं ..."

"तू भी अन्धा है?"

"हां। और तू बहुत देर से अन्धा है?" प्योत्र ने पूछा।

"जन्म से," घंटिये ने उत्तर दिया। "एक दूसरा है हमारे यहां रोमान–वह सात साल का था, जब अन्धा हुआ ... कब रात होती है कब दिन, बता सकता है?"

"हां, बता सकता हूं।"

"मैं भी बता सकता हूं। जब उजाला होता है, मुझे पता लगता है। रोमान नहीं बता पाता, फिर भी वह भाग्यशाली है।"

"क्यों?" प्योत्र ने उत्सुकतापूर्वक प्रश्न किया।

"क्यों? जानता नहीं क्यों? उसने दिन का प्रकाश देखा है। उसने अपनी मां को देखा है। समझा? रात को सोता है और सपने में मां को देखता है ... हां, अब वह बूढ़ी हो गयी है, पर वह अभी भी उसे जवान देखता है। तूने कभी अपनी मां को सपने में देखा है?"

"नहीं," दबी आवाज़ में प्योत्र ने उत्तर दिया।

"यही तो बात है, नहीं देख सकता। यह तो जो अन्धा हो जाये, वही देख पाता है, और अगर पैदा ही अन्धा हुआ हो, तो ..."

प्योत्र खिन्न, म्लान खड़ा था, उसके चेहरे पर मानो काली घटा छा गयी थी। घंटिये की भौंहें भी उसकी आंखों पर ऊंचा तन गयीं। इन निश्चल आंखों में अन्धेपन की वही गहरी वेदना थी, जिससे एवेलीना भली भांति अवगत थी ...

"फिर भी कितने पाप करते हैं हम ... हे भगवान, हे सृष्टिकर्ता, हे पवित्र मां मरियम! एक बार, बस एक बार सपने में ही एक किरण प्रकाश की, ख़ुशी की देखने दो! .."

घंटिये के चेहरे पर एंठन दौड़ गयी और उसने अपनी पहली जैसी कटु आवाज़ में कहा:

"पर नहीं, नहीं देखने देते ... कभी कोई सपना-सा आता है, धुंधला-सा कुछ दिखता है, मगर उठने पर कुछ याद नहीं आता ..."

वह सहसा रुक गया और कुछ सुनने लगा। उसका चेहरा सफ़ेद पड़ गया और एक कंपकंपी के साथ विकृत हो गया।

"शैतान के पिल्ले घुस आये हैं," गुस्सेभरी आवाज़ में उसने कहा।

और सचमुच बच्चों की चिल्लपों और उनके पैरों की चापें बढ़ती हुई बाढ़ की गरज के समान संकरी सीढ़ियों पर से आती सुनाई पड़ रही

थीं। फिर एक क्षण के लिए मौन छा गया। शायद बच्चे नीचे के चबूतरे पर पहुंच गये थे, जहां शोर बाहर फैल रहा था। लेकिन तुरन्त ही फिर सीढ़ियों पर शोर मचने लगा] और हंसते-खेलते बच्चों का एक झुंड एवेलीना के पास से दौड़ता हुआ ऊपर चढ़ गया। वे सबसे ऊपर की सीढ़ी पर एक क्षण के लिए रुके और फिर एक-एक करके भागते हुए अन्धे घंटिये के सामने से निकलने लगे। घंटिये का मुख द्वेष के कारण विकृत हो रहा था और वह घुसते हुए बच्चों पर अन्धाधुन्ध मुक्के बरसाये जा रहा था।

सीढ़ी के अन्धकार में से एक और नयी आकृति निकली। प्रत्यक्षतः यह रोमान था। उसका चेहरा चौड़ा था और चेचक के दागों से भरा था। चेहरे से उसकी सुप्रकृति एवं मधुर स्वभाव झलक रहा था। उसकी आंखों के गड्ढे पलकों से ढंके थे। उसके होंठों पर मधुर मुस्कान थी। वह भी अभी तक दीवार से चिपकी खड़ी हुई एवेलीना के पास से गुज़रता हुआ ऊपर चढ़ आया। चबूतरे पर येगोर का एक मुक्का आकर उसकी गर्दन पर भी पड़ गया।

"येगोर!" एक गहरी, ख़ुशदिल आवाज़ में वह बोला। "क्यों, भैया, फिर लड़ रहा है?"

वे टकराये और एक दूसरे को टटोलने लगे।

"क्यों, तूने इन शैतान के पिल्लों को अंदर घुसने दिया?" येगोर ने उफ़ड़नी में पूछा। उसकी आवाज़ में क्रोध अभी तक बना हुआ था।

"कोई बात नहीं ..." रोमान ने हंसते हुए उत्तर दिया। "नन्हे बच्चे भगवान का रूप हैं ... कैसे डरा दिया है तूने इन्हें। ऐ, शैतानो, कहां हो तुम ..."

बच्चे चबूतरे के कोनों में जंगले के पास दुबके बैठे थे और उनकी आंखों में शरारतभरी चमक थी और थोड़ा-थोड़ा डर भी।

एवेलीना अंधेरे में चुपके-चुपके आधी सीढ़ियां उतर आयी थी, जब उसने येगोर और प्योत्र की चापें सुनीं। और ऊपर के चबूतरे से बच्चों का कोलाहल और हंसी सुनाई दी। बच्चे ख़ुशी से रोमान की ओर लपके।

दर्शक मठ के दरवाज़े से निकल रहे थे, जब घंटे पर पहली चोट पड़ी। रोमान संध्या प्रार्थना के लिए घंटे बजा रहा था।

सूर्यास्त हो चुका था और गाड़ी अंधेरे रास्ते पर बढ़ती चली जा

रही थी। उसके साथ-साथ गिरजे के घंटों की नीरस ग्रावाज सायंकाल की नीली परछाइयों में डूबती चल रही थी।

घर लौटने तक सारे रास्ते सभी मौन थे। सारी शाम प्योत्र दूसरो से अलग वारा के किसी अंधेरे कोने में बैठा रहा। स्वयं एवेलीना की चिन्ताकुल पुकारों का भी उसने कोई उत्तर न दिया। जब सब सोने चले गये, तो वह चुपके से उठा और टटोलता-टटोलता अपने कमरे में पहुंच गया ...

४

पोपेल्स्की परिवार ने स्तावूकोवो में कुछ दिन और गुजारे। कई बार ऐसे मौक़े भी आये, जब प्योत्र पहले ही की तरह उत्साहित और अपने ही ढंग से प्रसन्नचित्त दिखाई पड़ता था। स्तावूचेन्को के बड़े बेटे ने भिन्न-भिन्न वाद्य-यंत्रों का अच्छा-खासा संग्रह एकत्र किया था। प्योत्र के लिए यह सब बहुत रोचक था। वह नये-नये वाद्यों को बजाने का प्रयत्न करता। हर वाद्य की एक अपनी ध्वनि थी। ये ध्वनियां अलग-अलग उसकी प्रत्येक सूक्ष्म से सूक्ष्म अनुभूति की अभिव्यक्ति कर सकती थीं। लेकिन कोई ऐसी बात जरूर थी, जो उसे परेशान कर रही थी और उसकी प्रसन्नता के थोड़े-से क्षण बढ़ते हुए अन्धकार की पृष्ठभूमि में कभी-कभी चमक जानेवाली बिजली के समान थे।

बिना एक शब्द कहे ही सब ने मानो ऐसा तय कर लिया था कि कोई भी मठ की घटना का जिक्र तक न करे और यह सारी यात्रा ही मानो सब के दिमाग़ से निकल गयी थी, विस्मृत हो गयी थी। लेकिन प्रत्यक्ष था कि प्योत्र पर उसका गहरा प्रभाव पड़ा है। जब कभी वह अकेला होता, या यदि लोगों के बीच होता, तो शान्ति के उन क्षणों में, जब उसके मस्तिष्क को व्यस्त रखने के लिए कोई दूसरी बात न रहती, वह स्वयं अपने ही विचारों में डूब जाता और उसके मुख पर कटुता झलक उठती। उसके चेहरे पर छा जानेवाले इस भाव से सभी परिचित थे, किंतु अब यह कटुता अधिक गहरी लगती थी और ... उसे देखकर बरबस अन्धे घंटिये का ध्यान आ जाता था।

पियानो बजाते समय जब प्योत्र तन्मय हो जाता, संगीत में बह जाता, तब उसकी उंगलियों तले से निकल रहे सुरों में घंटाघर के छोटे घंटों की द्रुत टन-टन और तांबे की लंबी उसासें सुनाई देने लगतीं ... और वह सब, जो किसी की जबान पर न आ पाता था, सबकी कल्पना में स्पष्टतः खड़ा हो जाता: अंधेरी सीढ़ियां, दुबला-पतला घंटिया, उसके गालों पर तपेदिक की लाली, ग़ुस्से में भरकर उसका चीखना और भाग्य पर उसके कटुतापूर्ण उलाहने ... और तत्पश्चात् ऊंचे चबूतरे पर एक ही मुद्रा में दोनों अन्धे, दोनों के चेहरों का एक-सा भाव और दोनों की चंचल भौंहों का एक-सा फड़कना ... स्पष्ट था कि वह सब, जिसे अब तक प्योत्र के निकट संबंधी उसकी अपनी विशेषता समझते आ रहे थे, वह अंधकार की रहस्यमय शक्ति की छाप थी, जो उसकी सभी बलियों पर एक-सी पड़ती है।

"सुन, आन्ना," घर लौटने पर मक्सिम ने बहन से पूछा। "तुझे पता है मठ की सैर पर क्या हुआ था? मैं देख रहा हूं लड़का उसी दिन से बदल गया है।"

"आह, यह सब उस अन्धे से मुलाक़ात का नतीजा है," निःश्वास छोड़ते हुए आन्ना मिखाइलोव्ना ने उत्तर दिया।

उन्होंने कुछ समय पहले ही मठ को भेड़ की खाल के दो गर्म कोट और कुछ रुपये-पैसे भेजे थे और एक पत्र में फ़ादर पम्फ़ीली से प्रार्थना की थी कि वे यथासंभव दोनों घंटावादकों के दुर्भाग्य का बोझ हल्का करें। वह स्वभाव से ही बहुत दयालु थीं, परन्तु शुरू में वह रोमान को भूल गयीं और केवल एवेलीना ने उन्हें याद दिलाया कि मठ के दोनों ही अन्धों के लिए प्रबंध करना चाहिए। "हां, हां, जरूर ही," आन्ना मिखाइलोव्ना ने उत्तर दिया, किंतु स्पष्ट था कि उनके विचार एक पर ही केंद्रित थे। उनकी तीव्र दया-भावना में कुछ [illegible] तक एक और अंधविश्वासी भाव भी मिला हुआ था: उन्हें लग[illegible] इस भेंट [illegible] बुरी शक्ति का कोप शांत कर पायेंगी [illegible] के सिर पर मंडरा रही थी।

"कौनसा [illegible]

"वह [illegible]

मक्सिम [illegible]

"मेरे इन पैरों का सत्यानाश जाये! आन्ना तू शायद भूल गयी कि मैं घंटाघरों पर नहीं चढ़ता और औरतें कभी कोई बात ढंग से नहीं बता सकतीं। एवेलीना, तू ही कुछ ढंग से बता, वहां घंटाघर पर क्या हुआ था?"

"वहां एक अन्धा घंटिया है," एवेलीना ने कहना शुरू किया। उसकी आवाज़ धीमी थी। इन कुछ दिनों में वह खुद सफ़ेद पड़ गयी थी। "और वह ..."

वह रुक गयी। आन्ना मिखाइलोव्ना ने दोनों हाथों से अपना भभकता मुंह ढंक लिया था। उसपर आंसू बह रहे थे।

"और वह प्योत्र से बहुत मिलता-जुलता है।"

"और किसी ने मुझे बताया तक नहीं! खैर, आगे? इसमें रोने की क्या बात है, आन्ना?" उन्होंने हल्के-से ताने के साथ कहा।

"आह, यही तो वह बात है, जो मेरी सहनशक्ति के बाहर है," आन्ना मिखाइलोव्ना ने धीरे से कहा।

"क्या सहनशक्ति के बाहर है? यही कि कोई अन्धा तेरे बेटे से मिलता-जुलता है?"

एवेलीना ने मक्सिम पर एक अर्थपूर्ण निगाह डाली और वह चुप हो गये। कुछ देर बाद आन्ना मिखाइलोव्ना कमरे के बाहर चली गयीं, परन्तु एवेलीना हमेशा की भांति अपनी कढ़ाई में लगी रही। एक क्षण के लिए कमरे में मौन छाया रहा।

"तूने बात पूरी नहीं की?" मक्सिम ने पूछा।

"हां। जब सब नीचे उतरे, तो प्योत्र वहीं रह गया। उसने चाची आन्ना (वह बचपन से आन्ना मिखाइलोव्ना को ऐसे बुलाती थी) से कहा कि वह दूसरों के साथ नीचे चली जायें और स्वयं अन्धे के पास रुक गया ... और मैं ... भी वहीं ठहर गयी।"

"छिपकर उनकी बातें सुनने के लिए?" बूढ़े शिक्षक ने लगभग यंत्रवत पूछा।

"मैं, मैं वहां से नहीं जा सकी," उसने धीमे से उत्तर दिया। "वे एक दूसरे से यों बातें कर रहे थे, जैसे कि ..."

"जैसे अभागे अभागे से करते हैं?"

"हां, जैसे अन्धा अन्धे से करता है ... और फिर येगोर ने प्योत्र से पूछा, क्या वह सपने में मां को देखता है? प्योत्र ने कहा, 'नहीं'।

पियानो बजाते समय जब प्योत्र तन्मय हो जाता, संगीत में बह जाता, तब उसकी उंगलियों तले से निकल रहे सुरों में घंटाघर के छोटे घंटों की द्रुत टन-टन और तांबे की लंबी उसासें सुनाई देने लगतीं ... और वह सब, जो किसी की ज़बान पर न आ पाता था, सबको कल्पना में स्पष्टतः खड़ा हो जाता: अंधेरी सीढ़ियां, दुबला-पतला घंटिया, उसके गालों पर तपेदिक़ की लाली, ग़ुस्से में भरकर उसका चीखना और भाग्य पर उसके कटुतापूर्ण उलाहने ... और तत्पश्चात् ऊंचे चबूतरे पर एक ही मुद्रा में दोनों अन्धे, दोनों के चेहरों का एक-सा भाव और दोनों की चंचल भौंहों का एक-सा फड़कना ... स्पष्ट था कि वह सब, जिसे अब तक प्योत्र के निकट संबंधी उसकी अपनी विशेषता समझते आ रहे थे, वह अंधकार की रहस्यमय शक्ति की छाप थी, जो उसकी सभी बलियों पर एक-सी पड़ती है।

"सुन, आन्ना," घर लौटने पर मक्सिम ने बहन से पूछा। "तुझे पता है मठ की सैर पर क्या हुआ था? मैं देख रहा हूं लड़का उसी दिन से बदल गया है।"

"आह, यह सब उस अन्धे से मुलाक़ात का नतीजा है," निःश्वास छोड़ते हुए आन्ना मिखाइलोव्ना ने उत्तर दिया।

उन्होंने कुछ समय पहले ही मठ को भेड़ की खाल के दो गर्म कोट और कुछ रुपये-पैसे भेजे थे और एक पत्र में फ़ादर पम्फ़ीली से प्रार्थना की थी कि वे यथासंभव दोनों घंटावादकों के दुर्भाग्य का बोझ हल्का करें। वह स्वभाव से ही बहुत दयालु थीं, परन्तु शुरू में वह रोमान को भूल गयीं और केवल एवेलीना ने उन्हें याद दिलाया कि मठ के दोनों ही अन्धों के लिए प्रबंध करना चाहिए। "हां, हां, ज़रूर ही," आन्ना मिखाइलोव्ना ने उत्तर दिया, किंतु स्पष्ट था कि उनके विचार एक पर ही केंद्रित थे। उनकी तीव्र दया-भावना में कुछ हद तक एक और अंधविश्वासी भाव भी मिला हुआ था: उन्हें लग रहा था कि इस भेंट से वह किसी बुरी शक्ति का कोप शांत कर पायेंगी, जिसकी काली परछाईं उनके बेटे के सिर पर मंडरा रही थी।

"कौनसा अन्धा?" आश्चर्यचकित मक्सिम ने पूछा।

"वह ... वहां घंटाघर पर।"

मक्सिम की बैसाखी ज़मीन पर पटाक से बजी।

"मेरे इन पैरों का सत्यानाश जाये! आन्ना तू शायद भूल गयी कि मैं घंटाघरों पर नहीं चढ़ता और औरतें कभी कोई बात ढंग से नहीं बता सकतीं। एवेलीना, तू ही कुछ ढंग से बता, वहां घंटाघर पर क्या हुआ था?"

"वहां एक अन्धा घंटिया है," एवेलीना ने कहना शुरू किया। उसकी आवाज धीमी थी। इन कुछ दिनों में वह खुद सफ़ेद पड़ गयी थी। "और वह ..."

वह रुक गयी। आन्ना मिखाइलोव्ना ने दोनों हाथों से अपना भभकता मुंह ढंक लिया था। उसपर आंसू बह रहे थे।

"और वह प्योत्र से बहुत मिलता-जुलता है।"

"और किसी ने मुझे बताया तक नहीं! खैर, आगे? इसमें रोने की क्या बात है, आन्ना?" उन्होंने हल्के-से ताने के साथ कहा।

"आह, यही तो वह बात है, जो मेरी सहनशक्ति के बाहर है," आन्ना मिखाइलोव्ना ने धीरे से कहा।

"क्या सहनशक्ति के बाहर है? यही कि कोई अन्धा तेरे बेटे से मिलता-जुलता है?"

एवेलीना ने मक्सिम पर एक अर्थपूर्ण निगाह डाली और वह चुप हो गये। कुछ देर बाद आन्ना मिखाइलोव्ना कमरे के बाहर चली गयी, परन्तु एवेलीना हमेशा की भांति अपनी कढ़ाई में लगी रही। एक क्षण के लिए कमरे में मौन छाया रहा।

"तूने बात पूरी नहीं की?" मक्सिम ने पूछा।

"हां। जब सब नीचे उतरे, तो प्योत्र वहीं रह गया। उसने चाची आन्ना (वह बचपन से आन्ना मिखाइलोव्ना को ऐसे बुलाती थी) से कहा कि वह दूसरों के साथ नीचे चली जायें और स्वयं अन्धे के पास रुक गया ... और मैं ... भी वहीं ठहर गयी।"

"छिपकर उनकी बातें सुनने के लिए?" बूढ़े शिक्षक ने लगभग यंत्रवत पूछा।

"मैं, मैं वहां से नहीं जा सकी," उसने धीमे से उत्तर दिया। "वे एक दूसरे से यों बातें कर रहे थे, जैसे कि ..."

"जैसे अभागे अभागों से करते हैं?"

"हां, जैसे अन्धा अन्धे से करता है ... और फिर येगोर ने प्योत्र से पूछा, क्या वह सपने में मां को देखता है? प्योत्र ने कहा, 'नहीं'।

ग्रौर यह भी नहीं देखता। पर दूसरा ग्रन्धा, रोमान, देखता है नौजवान मां, हालांकि वह बूढ़ी हो चुकी है ..."

"हां, तो यह बात है ... ग्रागे?"

एवेलीना सोच में डूब गयी ग्रौर फिर बूढ़े पर ग्रपनी नीली ग्रांखों से देखते हुए, जिनमें संघर्ष ग्रौर वेदना झलक रही थी, बोली:

"वह रोमान बहुत भला ग्रौर शांत है। उसके चेहरे पर उदासी है, मगर द्वेष नहीं ... वह जन्म से ग्रन्धा नहीं ... ग्रौर दूसरा ... वह बहुत तड़पता है," सहसा उसने बात मोड़ दी।

"सीधे-सीधे बोल, क्या बात है," मक्सिम ने बेसब्री से उसे टोक दिया। "दूसरा जला-भूना है?"

"हां। वह बच्चों को मारना चाहता था, उन्हें कोस रहा था। पर रोमान को बच्चे प्यार करते हैं ..."

"जला-भूना है ग्रौर प्योत्र से मिलता-जुलता है ... समझा," विचारमग्न मक्सिम ने कहा।

एवेलीना कुछ देर चुप रही ग्रौर फिर, मानो यह शब्द कहने के लिए उसे भारी ग्रांतरिक संघर्ष करना पड़ा हो, बहुत धीमे-धीमे बोली:

"चेहरा उनका मिलता-जुलता नहीं ... नाक-नक़्श दूसरे हैं। लेकिन चेहरे का भाव ... मुझे लगता है पहले प्योत्र के चेहरे का भाव कुछ-कुछ रोमान जैसा था ग्रौर ग्रब ज्यादातर उस दूसरे के जैसा ... ग्रौर ... ग्रौर मुझे डर है, मैं सोचती हूं ..."

"क्या डर है तुझे? इधर ग्रा, मेरी होशियार बच्ची," ग्रसाधारण लाड़ के साथ मक्सिम ने कहा। ग्रौर जब वह इस दुलार से दुर्बल होती ग्रांखों में ग्रांसू लिये उनके पास ग्रायी, तो उसके रेशमी बालों को ग्रपने बड़े-से हाथ से सहलाते हुए वह बोले:

"क्या सोच रही है, तू? बता मुझे। मैं देखता हूं, तू सोच सकती है।"

"मेरा विचार है कि ... ग्रब वह समझता है कि ... सभी जन्म से ग्रंधे दुष्ट होते हैं ... ग्रौर उसने मन में यह बात बिठा ली है कि वह भी ... ग्रवश्य ही।"

"हां, यह बात है ..." ग्रचानक उसके सिर से ग्रपना हाथ हटाकर मक्सिम बोले। "जरा मेरी पाइप तो दे मुझे, लाडो ... वह रखी, खिड़की पर ..."

कुछ मिनट पश्चात् नीले धुएं का बादल उनके सिर के ऊपर छा गया।

"हूं ... हां ... बड़ी खराब बात है," वह बुदबुदा रहे थे ... "मैं ग़लती पर था ... आन्ना का कहना सच था: हमारी आत्मा जिस अनुभूति से सर्वथा अनभिज्ञ है, उसका अनुभव कर पाने को भी हम व्याकुल हो सकते हैं, उसके अभाव से व्यथित हो सकते हैं। अब उसकी आत्मा में प्रकाश देख पाने की जो जन्मजात इच्छा है, उसे चेतन बुद्धि का भी बल मिल गया। काश यह मुलाक़ात न हुई होती! .. पर सचाई भला कब तक छिपी रह सकती है!"

उनका चेहरा नीले धुएं के बादलों में खो गया ... बूढ़े के चौकोर सिर में किन्हीं नये विचारों और निर्णयों की उथल-पुथल मची हुई थी।

५

जाड़ा आ गया। भारी हिमपात हुआ और गांव, सड़कें तथा मैदान सब हिम से ढंक गये। पूरी कोठी सफ़ेद थी, वृक्षों पर हिम के फाहे लटक रहे थे - मानो सारे बाग़ में श्वेत हिम-फूल खिल रहे थे। बैठक की अंगीठी में जलती लकड़ियां चटख रही थीं और जो भी बाहर से घर में क़दम रखता, अपने साथ ताज़गी, नयी गिरी हिम की सुरभि लाता ...

अन्धा शीतकाल के प्रथम दिन के सौंदर्य और मादकता का पान कर पाता था। उस दिन जब वह सुबह उठता था, तो एक नयी स्फूर्ति का अनुभव करता था। रसोईघर में घुसते समय लोगों का पैरों को पटकना, दरवाज़ों का चरचराना, घर भर में शीतल हवा की छोटी-छोटी लहरों का इतराना, आंगन में लोगों के पैरों तले बर्फ़ का चरमराना और बाहर से आनेवाली सभी ध्वनियों का विचित्र "ठंडापन" - इन सबसे अन्धा जान जाता कि जाड़ा आ गया है। और जब वह इयोख़िम के साथ स्लेजगाड़ी पर पहली सैर के लिए जाता, तो आनंदमग्न सुना करता था कैसे कभी गाड़ी के तले ताज़ी बर्फ़ चरमरा देती है और कभी नदी पार जंगल से कोई चटख गूंजती आती है।

इस बार शीतकाल के प्रथम हिम श्वेत दिन उसपर और भी गहरी उदासी छा गयी। सुबह-सुबह ही ऊंचे बूट पहनकर वह अपने पीछे अछूती

हिमाच्छादित पगडंडियों पर भुरभुरे पदचिह्न छोड़ता पनचक्की की ओर चल दिया।

बाग पूर्णतः नीरव था। ठंड से जमी भूमि हिम का मोटा, नरम दुशाला ओढ़कर एकदम मौन हो गयी थी, कोई भी ध्वनि उससे नहीं आ रही थी। परंतु उसके स्थान पर वायु में विशेष संवेदनशीलता आ गयी थी: कौवे की कांव-कांव, कुल्हाड़ी की चोट, सहसा टूट गयी टहनी की हल्की-सी चरमराहट—सभी ध्वनियां चारों ओर दूर-दूर तक स्पष्टतः फैल रही थीं ... कभी-कभी प्योत्र के कानों में एक विचित्र झनझनाती-सी आवाज पड़ती, जो एक पतले और ऊंचे सुर का रूप ले लेती और फिर दूर, बहुत दूर जाकर समाप्त हो जाती। यह आवाज गांव के उस पोखरे से आ रही थी, जिसपर पिछली रात बर्फ़ की पतली-सी परत जम गयी थी, और जिसपर किसानों के लड़के पत्थर फेंक रहे थे।

कोठी का तालाब भी जम गया था। किन्तु पनचक्की के पास नदी अभी भी हल्की-फुल्की हिम से ढंके किनारों के बीच बह रही थी और बांध पर शोर कर रही थी। नदी का जल गाढ़ा और भारी पड़ गया लगता था।

प्योत्र बांध तक पहुंचकर रुक गया और बड़े ध्यान से कुछ सुनने लगा। जल की ध्वनि बदल चुकी थी। उसमें भारीपन आ गया था और सुरीलापन जाता रहा था। ऐसा प्रतीत होता था कि उस ध्वनि में वह शीतलता प्रतिबिम्बित हो रही है, जो मृत्यु के हाथ की तरह समस्त वातावरण पर छायी हुई थी ...

प्योत्र के हृदय में भी निराशा थी, अंधकार था। ग्रीष्म ऋतु की उस मधुर शाम को ही आशंका, असंतोष और अनिश्चय के रूप में जिस अस्पष्ट अनुभूति ने उसके हृदय के किसी कोने में जन्म लिया था, अब वह प्रबल हो गयी थी और उसने उसकी आत्मा में हर्ष एवं आनंद की अनुभूतियों का स्थान ले लिया था।

एवेलीना कोठी में नहीं थी। शरद ऋतु में ही उसके माता-पिता ने अपनी "हितैषिणी", वृद्धा काउन्टेस पतोत्स्काया को मिलने जाने की तैयारी की थी। वृद्धा का अनुरोध था कि वे बेटी को भी निश्चय ही साथ लायें। पहले तो एवेलीना न मानी, परंतु पिता के आग्रह पर, जिसका मक्सिम ने भी जोरदार समर्थन किया, वह राजी हो गयी।

इस समय पनचक्की के पास खड़े-खड़े प्योत्र अपनी उन अनुभूतियों को याद कर रहा था, जिनका अनुभव उसे कभी यहीं हुआ था और अपने हृदय में एक बार फिर उन समस्त भावों को पूर्ण रूप से जागृत करने का प्रयत्न कर रहा था। वह अपने आप से पूछ रहा था कि क्या उसे एवेलीना की अनुपस्थिति खल रही है। हां, उसका न होना उसे खल जरूर रहा था, परंतु साथ ही वह साफ़-साफ़ समझ रहा था कि स्वयं उसकी उपस्थिति से भी वह प्रसन्न न हो सका था, बल्कि एक नयी मर्मभेदी पीड़ा की कसक से कराह उठा था। उसे उस पीड़ा, उस कसक की तीक्ष्णता इस समय अर्थात् उसकी अनुपस्थिति में कम लग रही थी।

अभी कुछ ही समय पहले प्योत्र के कानों में उसके शब्द गूंजा करते थे, कल्पना में उस प्रथम प्रणयालाप का एक-एक क्षण उभर आता था, अपने हाथों तले वह उसके रेशमी बालों का अनुभव करता था, अपने वक्ष पर उसके हृदय की धुकधुक सुना करता था। और इस सबसे उसका एक स्वरूप बन जाता था, जो उसे आनंदमग्न कर देता था। लेकिन अब उसकी चक्षुहीन कल्पना पर छाये रहनेवाली निराकार धूमिल आकृतियों सा कुछ इस स्वरूप को प्राणांतक स्पर्श कर गया था और वह नष्ट हो गया था। अब वह अपनी स्मृतियों को उस पूर्ण मधुर भाव में संश्लिष्ट नहीं कर पाता था, जो पहले उसके मन में छाया रहा था। आरंभ से ही इस भाव में कोई अन्य कण छिपा हुआ था और अब यह "अन्य" उसकी आत्मा पर छाता जा रहा था, जैसे तूफ़ानी बादल क्षितिज को ढंकता है।

अब एवेलीना की आवाज़ उसके कानों में नहीं गूंज रही थी और न उस सुभावनी संध्या की स्मृति ही उसके मस्तिष्क में शेष रह गयी थी, वरन उसके स्थान पर एक शून्य की सृष्टि हो गयी थी। इस शून्य को भरने के लिए उसके अन्तस् की गहराइयों में से भगीरथ प्रयत्न करता हुआ कुछ उठ रहा था।

वह एवेलीना को देखना चाहता था!

पहले वह केवल मंद-मंद मानसिक पीड़ा का अनुभव किया करता था। इस पीड़ा की अनुभूति, उससे होनेवाली बेचैनी अस्पष्ट थी, धुंधली थी, जैसे कि दांत का धीमा-धीमा दर्द, जिसकी ओर अभी ध्यान नहीं जाता।

हिमाच्छादित पगडंडियों पर भुरभुरे पदचिह्न छोड़ता पनचक्की की ओर चल दिया।

बाग्र पूर्णतः नीरव था। ठंड से जमी भूमि हिम का मोटा, नरम दुशाला ओढ़कर एकदम मौन हो गयी थी, कोई भी ध्वनि उससे नहीं आ रही थी। परंतु उसके स्थान पर वायु मे विशेष संवेदनशीलता आ गयी थी: कौवे की कांव-कांव, कुल्हाड़ी की चोट, सहसा टूट गयी टहनी की हल्की-सी चरमराहट—सभी ध्वनियां चारों ओर दूर-दूर तक स्पष्टतः फैल रही थीं ... कभी-कभी प्योत्र के कानों में एक विचित्र झनझनाती-सी आवाज़ पड़ती, जो एक पतले और ऊंचे सुर का रूप ले लेती और फिर दूर, बहुत दूर जाकर समाप्त हो जाती। यह आवाज़ गांव के उस पोखरे से आ रही थी, जिसपर पिछली रात बर्फ़ की पतली-सी परत जम गयी थी, और जिसपर किसानों के लड़के पत्थर फेंक रहे थे।

कोठी का तालाब भी जम गया था। किन्तु पनचक्की के पास नदी अभी भी हल्की-फुल्की हिम से ढंके किनारों के बीच बह रही थी और बांध पर शोर कर रही थी। नदी का जल गाढ़ा और भारी पड़ गया लगता था।

प्योत्र बांध तक पहुंचकर रुक गया और बड़े ध्यान से कुछ सुनने लगा। जल की ध्वनि बदल चुकी थी। उसमें भारीपन आ गया था और सुरीलापन जाता रहा था। ऐसा प्रतीत होता था कि उस ध्वनि में वह शीतलता प्रतिबिम्बित हो रही है, जो मृत्यु के हाथ की तरह समस्त वातावरण पर छायी हुई थी ...

प्योत्र के हृदय में भी निराशा थी, अंधकार था। ग्रीष्म ऋतु की उस मधुर शाम को ही आशंका, असंतोष और अनिश्चय के रूप में जिस अस्पष्ट अनुभूति ने उसके हृदय के किसी कोने में जन्म लिया था, अब वह प्रबल हो गयी थी और उसने उसकी आत्मा में हर्ष एवं आनंद की अनुभूतियों का स्थान ले लिया था।

एवेलीना कोठी में नहीं थी। शरद ऋतु में ही उसके माता-पिता ने अपनी "हितैषिणी", वृद्धा काउन्टेस पतोत्स्काया को मिलने जाने की तैयारी की थी। वृद्धा का अनुरोध था कि वे बेटी को भी निश्चय ही साथ लायें। पहले तो एवेलीना न मानी, परंतु पिता के आग्रह पर, जिसका मक्सिम ने भी जोरदार समर्थन किया, वह राजी हो गयी।

इस समय पनचक्की के पास खड़े-खड़े प्योत्र अपनी उन अनुभूतियों को याद कर रहा था, जिनका अनुभव उसे कभी यहीं हुआ था और अपने हृदय में एक बार फिर उन समस्त भावों को पूर्ण रूप से जागृत करने का प्रयत्न कर रहा था। वह अपने आप से पूछ रहा था कि क्या उसे एवेलीना की अनुपस्थिति खल रही है। हां, उसका न होना उसे खल जरूर रहा था, परंतु साथ ही वह साफ़-साफ़ समझ रहा था कि स्वयं उसकी उपस्थिति से भी वह प्रसन्न न हो सका था, बल्कि एक नयी मर्मभेदी पीड़ा की कसक से कराह उठा था। उसे उस पीड़ा, उस कसक की तीक्ष्णता इस समय अर्थात् उसकी अनुपस्थिति में कम लग रही थी।

अभी कुछ ही समय पहले प्योत्र के कानों में उसके शब्द गूंजा करते थे, कल्पना में उस प्रथम प्रणयालाप का एक-एक क्षण उभर आता था, अपने हाथों तले वह उसके रेशमी बालों का अनुभव करता था, अपने वक्ष पर उसके हृदय की धुकधुक सुना करता था। और इस सबसे उसका एक स्वरूप बन जाता था, जो उसे आनंदमग्न कर देता था। लेकिन अब उसकी चक्षुहीन कल्पना पर छाये रहनेवाली निराकार धूमिल आकृतियों सा कुछ इस स्वरूप को प्राणांतक स्पर्श कर गया था और वह नष्ट हो गया था। अब वह अपनी स्मृतियों को उस पूर्ण मधुर भाव में संश्लिष्ट नहीं कर पाता था, जो पहले उसके मन में छाया रहा था। आरंभ से ही इस भाव में कोई अन्य कण छिपा हुआ था और अब यह "अन्य" उसकी आत्मा पर छाता जा रहा था, जैसे तूफ़ानी बादल क्षितिज को ढंकता है।

अब एवेलीना की आवाज उसके कानों में नहीं गूंज रही थी और न उस लुभावनी संध्या की स्मृति ही उसके मस्तिष्क में शेष रह गयी थी, वरन उसके स्थान पर एक शून्य की सृष्टि हो गयी थी। इस शून्य को भरने के लिए उसके अन्तस् की गहराइयों में से भगीरथ प्रयत्न करता हुआ कुछ उठ रहा था।

वह एवेलीना को देखना चाहता था!

पहले वह केवल मंद-मंद मानसिक पीड़ा का अनुभव किया करता था। इस पीड़ा की अनुभूति, उससे होनेवाली बेचैनी अस्पष्ट थी, धुंधली थी, जैसे कि दांत का धीमा-धीमा दर्द, जिसकी ओर अभी ध्यान नहीं जाता।

९*

ग्रन्धे घंटिये से भेंट ने इस पीड़ा को चेतन व्यथा की तीव्रता प्रदा[illegible] कर दी थी ...

वह उसे प्यार करता था और उसे देखना चाहता था!

हिमावृत, शान्त, नीरव कोठी में दिन यों ही बीतते गये।

ऐसे भी क्षण आते थे, जब उसकी कल्पना के समक्ष प्रसन्नता की अनुभूतियां साकार हो उठतीं और उसके चेहरे पर आनन्दोल्लास की रेखाएं एक बार फिर छिटक जातीं। किन्तु ये क्षण भी दीर्घजीवी न होते। कभी-कभी तो उसपर एक ऐसी व्यग्रता छा जाती मानो उसे यह आशंका हो रही हो कि ये क्षण फिर कभी न आयेंगे। परिणामतः उसकी मानसिक स्थिति में भी उतार-चढ़ाव दिखाई पड़ने लगे—लाड़-प्यार और मानसिक उत्तेजना के कुछ मिनटों के पश्चात् कई-कई दिनों तक उसपर गहरी निराशा, उदासी छायी रहती। संध्या समय अंधेरी बैठक में से पियानो के करुण, गहरी पीड़ा और उदासीभरे स्वर सुनाई देते और उसका प्रत्येक स्वर आन्ना मिखाइलोव्ना के दिल में एक टीस पैदा करता। अंततः जिस बात का उन्हें सबसे अधिक डर था, वही पूरी हुई: युवक बचपन की ही तरह सपने "देखने" लगा और उनसे व्यथित होने लगा।

एक दिन प्रातःकाल आन्ना मिखाइलोव्ना ने बेटे के कमरे में प्रवेश किया। वह अभी सो रहा था, किंतु उसके चेहरे पर एक विचित्र विक्षुब्धता थी: आंखें अधखुली थीं और ऊपर उठी पलकों के नीचे से धुंधली-सी देख रही थीं, चेहरा सफ़ेद पड़ गया था।

एक क्षण के लिए वह दरवाजे पर रुकीं और उसकी चिन्ता के कारणों का अनुमान लगाने का प्रयत्न करने लगीं। परन्तु उन्हें केवल यही अनुभव हुआ कि बेटे की व्यग्रता बढ़ती जा रही है और उसके मुंह पर कठिन प्रयास की अभिव्यक्ति स्पष्ट होती जा रही है।

सहसा उसे पलंग के ऊपर कोई गति-सी होती लगी। शीतकालीन तेजोमय सूर्य की उज्ज्वल किरण सिरहाने के ऊपर दीवार पर टकराकर झिलमिला उठी और होले-से नीचे को फिसल गयी। फिर थोड़ा और नीचे, थोड़ा और ... प्रकाश पुंज चुपके-चुपके उसकी अधखुली आंखों के पास चला आ रहा था और वह जितनी पास आता जा रहा था अन्धे की व्यग्रता उतनी ही बढ़ती जा रही थी।

आन्ना मिखाइलोव्ना दीवार के सहारे गतिहीन खड़ी रहीं। उनकी आंखें बराबर उस चलते हुए प्रकाश पर जमी रहीं। जैसे वह स्वप्न देख रही हों—प्रकाश का यह पुंज झिलमिलाता हुआ उसकी अरक्षित आंखों की ओर बढ़ रहा था, निकट और निकट। प्योत्र का मुख बराबर सफेद पड़ता जा रहा था और उससे ऐसे प्रयासों की झलक मिल रही थी, जिनमें पीड़ा थी, कसक थी, वेदना थी। अब वह पीला प्रकाश उसके बालों का स्पर्श करने लगा और अब उसके मस्तक का। मां अंतःप्रेरणावश अपने लाल की रक्षा को झुकी, किन्तु ऐसा लगता था मानो उनके पैर जम गये हैं और वह हिलने-डुलने में असमर्थ हैं। इस बीच प्योत्र की पलकें बिल्कुल ऊपर उठ गयीं और पुतलियों में प्रकाश-किरणें चमकने लगीं। उसका सिर तकिये से ऊपर उठ गया मानो प्रकाश का स्वागत कर रहा हो। उसके होठों पर मुस्कान का या विलाप का तनाव दौड़ गया। और सारे चेहरे पर फिर से एक तनावपूर्ण आवेग का भाव जम गया।

अंततः मां ने उस जड़ता से मुक्ति पायी, जो उसके अंग-अंग को जकड़े थी और बिस्तर के पास जाकर बेटे के माथे पर हाथ रख दिया।

वह चौंका और जाग पड़ा।

"मां, तुम हो?" उसने पूछा।

"हां।"

वह उठ बैठा। एक क्षण के लिए ऐसा लगा कि उसमें केवल आंशिक चेतना ही आ पायी है। लेकिन तुरन्त ही वह अवस्था समाप्त हो गयी और वह बोला:

"मैंने फिर सपना देखा, मां ... अब मैं अक्सर सपने देखता हूं, लेकिन ... कुछ याद नहीं रहता ..."

६

प्योत्र की मानसिक स्थिति में परिवर्तन आ रहा था। रात-दिन छायी रहनेवाली उदासी के स्थान पर, जिसमें आशा की कोई किरण न दिखती थी, अब युवक के मिजाज में चिड़चिड़ापन छाने लगा था और साथ ही उसकी अनुभूतियों की अनूठी सूक्ष्मता बढ़ती जा रही थी। उसकी

श्रवणानुभूति अत्यधिक तीक्ष्ण हो गयी थी। प्रकाश की अनुभूति तो उसे सारे शरीर से होती थी, रात को भी यह देखा जा सकता था। वह जान लेता था कि रात अंधेरी है या चांदनी और कई बार जब घर मे सब सोये होते, वह आंगन में खामोश, उदास, अपनी चेतना और कल्पना पर अनोखी, स्वप्नमय चंद्र-कांति के विचित्र प्रभाव का अनुभव करता हुआ और उसमें खोया हुआ देर तक टहलता रहता था। इस बीच वह अपना गोरा मुख नीले आसमान पर तैरते अग्नि-पिंड की ओर घुमाये रखता था और उसकी आंखों में झिलमिलाती शीतल किरणों की चमक प्रतिबिंबित होती थी।

अस्ताचल की ओर अपनी यात्रा में चंद्रमा पृथ्वी के जितने पास आता जाता, उसका आकार उतना ही बढ़ता जाता और जब वह घने लाल कोहरे के पीछे छिपता हुआ धीमे से हिमाच्छादित क्षितिज के पार डूब जाता, तो अन्धे का चेहरा शांत और कोमल हो जाता और वह अपने कमरे में चला जाता।

उन लम्बी-लम्बी रातों में उसके मस्तिष्क मे कौन-कौन से विचार उठा करते थे, कहना कठिन है। हर कोई, जो एक सचेत जीवन जीता है, जिसने उसके सुख-दुःख भोगे हैं, उसके जीवन में एक विशिष्ट आयु में ऐसा क्षण आता है, जब वह एक मानसिक संकट का अनुभव करता है – किसी मे इस संकट की अवधि एवं प्रचंडता अधिक होती है, किसी में कम। और वह सक्रिय जीवन की दहलीज पर रुककर अपने चारो ओर देखता है, यह समझने का प्रयत्न करता है कि प्रकृति में उसका स्थान क्या है, क्या महत्व है और बाह्य संसार से उसका क्या और कैसा संबंध है। इस नाजुक क्षण में से जीवन जिसे बिना उसके चरित्र और दृष्टिकोण में बड़े परिवर्तनो के बिना निकाल ले जाये, वह सौभाग्यशाली ही है। प्योत्र के लिए यह संकट और भी जटिल हो गया था : इस संकट के समय सबके सामने उठनेवाला प्रश्न "हमारे जीने का उद्देश्य क्या है?" उसके लिए इस रूप में खड़ा होता, "अन्धा होते हुए मेरे जीने का उद्देश्य ही क्या?" अंततः इस हर्षरहित मानसिक उलझन में एक और भाव, एक अनबुझी, अपूर्त प्यास की अनुभूति का एकदम भौतिक-सा दबाव भी आ मिलता था। और इस सबका प्रभाव उसके चरित्र पर पड़ता था।

यास्कूल्स्की परिवार बड़े दिन से कुछ पहले ही वापस आ गया और एवेलीना फ़ौरन हंसती-कूदती, हिम से भरे बाल, ताजगी और शीतलता लिये अपने घर से कोठी में भाग आयी और आन्ना मिखाइलोव्ना, प्योत्र और मक्सिम को गले लगाने लगी। पहले कुछ मिनटों में प्योत्र का चेहरा अप्रत्याशित ख़ुशी से चमक उठा, किंतु तत्पश्चात् उसपर फिर एक हठभरी-सी उदासी छा गयी।

उसी दिन एवेलीना के साथ जब वह अकेला रह गया, तो तीखे स्वर में उसने पूछा :

"तू सोचती है, मैं तुझे प्यार करता हूं?"

"मुझे इसका पक्का विश्वास है," युवती ने उत्तर दिया।

"लेकिन मै नहीं जानता", खिन्नचित्त अन्धे ने प्रतिवाद किया। "हां, हां, मैं नहीं जानता। पहले मुझे भी यक़ीन था कि मै तुझे प्यार करता हूं। लेकिन अब मैं नहीं जानता। भूल जा मुझे और समय रहते उनकी बात मान जा, जो तुझे नये जीवन की ओर बुला रहे हैं।"

"क्यों मुझे सता रहा है? आख़िर क्यों?" शिकायत के शब्द धीमे से उसकी आत्मा से फूट निकले।

"सता रहा हूं?" उसके चेहरे पर एक बार फिर दुराग्रह और स्वार्थपरकता झलक उठी।

"हां, मैं सता रहा हूं और इसी प्रकार ज़िन्दगी भर करता रहूंगा। तुझे सताऊं न, ऐसा मै नहीं कर सकता। पहले मैं नहीं जानता था, किन्तु अब जान गया हूं और यह मेरा दोष नहीं है। नियति के जिन हाथों ने एक ही झटके में मुझसे मेरी आंखें छीन ली थीं, जब मै पैदा तक न हुआ था, उन्हीं हाथों ने मेरे हृदय मे यह पाशविकता भी भर दी है ... हम सभी ऐसे ही हैं—जन्म के अन्धे। अच्छा हो तू मुझे भूल जा ... मुझे अपने रास्ते से अलग कर दे। हां, तुम सब मुझसे दूर हो जाओ, क्योंकि तुम्हारे प्रेम के बदले में तुम्हें सिर्फ़ दुःख दूंगा, तुझपर अत्याचार करूंगा ... मैं देखना चाहता हूं। क्या तू समझ नहीं सकती? मैं देखना चाहता हूं, जरूर देखना चाहता हूं। यदि मैं सिर्फ़ मां को, पिता को और तुझे और मामा मक्सिम को देख सकूं—यदि मै तुम्हें एक बार भी देख सकूं, तो मुझे सन्तोष हो जायेगा। मै याद रखूंगा। मै इस स्मृति

को आनेवाले वर्षों मे गहन अन्धकार के बीच भी सुरक्षित रखूंगा ..."

बार-बार यही विचार उसके मस्तिष्क मे घूमते रहते थे। जब वह अकेला होता, तो कोई न कोई वस्तु उठा लेता और बड़े ध्यान से उसे टटोलता, समझने का प्रयत्न करता और फिर उठाकर एक ओर रख देता और उसके रूप एवं आकार का मनन करता रहता। इसी तरह वह उन विभेदो पर भी अपना ध्यान केन्द्रित करता था, जो स्पर्श-शक्ति के माध्यम से भिन्न-भिन्न रंगों की चमकदार सतहों के बीच उसे समझ में आते थे। और इन समस्त वस्तुओं का ज्ञान उसे विभेदों और तुलनाओं के रूप में ही होता, उनकी भौतिक वास्तविक आकृति के रूप में नहीं। अब उसे धुपहले दिन और अंधेरी रात में भी केवल इसलिए अन्तर लगता था कि दिन का प्रकाश किसी अद्भुत, आश्चर्यजनक, अज्ञात मार्ग से उसके मस्तिष्क में प्रवेश करके उसकी पीड़ाओं को घनीभूत कर देता था।

७

एक दिन बैठक में मक्सिम ने प्योत्र और एवेलीना को बैठे देखा। एवेलीना चिन्तित और परेशान थी और प्योत्र उदास। लगता था कि प्योत्र के लिए पीड़ा के नये-नये कारणों को ढूंढना और फिर उनसे अपने आप को और दूसरों को दुःख देना एक तरह की आवश्यकता बन गया था।

"यह पूछ रहा है," एवेलीना ने मक्सिम से कहा, "कि जब लोग घंटों के बारे में 'लाल घनघनाहट' की बातें करते हैं*, तो उसका क्या मतलब होता है। और मैं यह बात उसे ठीक-ठीक नहीं समझा पा रही हूं।"

"क्यों, क्या बात है?" मक्सिम ने प्योत्र से एक संक्षिप्त-सा प्रश्न किया।

प्योत्र ने कंधे हिला दिये।

"कोई खास बात नहीं। सिर्फ़ यही—यदि ध्वनियों का रंग हो और

---

*लाल घनघनाहट—एक रूसी वाक्यांश है, जो किसी त्योहार के दिन गिरजे में बजनेवाले घंटों की घनघनाहट के लिए प्रयुक्त होता है।—अनु०

मैं उसे न देख सकूं, तो इसका अर्थ यह है कि मैं ध्वनियों का भी पूरा-पूरा अनुभव नहीं कर सकता।"

"तू बच्चों जैसी बेवकूफ़ी की बातें कर रहा है," मक्सिम ने कुछ तीखा-सा जवाब दिया, "तुझे अच्छी तरह मालूम है कि यह बात ठीक नहीं। तेरा ध्वनि-ज्ञान हम लोगों से कहीं अधिक बढ़ा-चढ़ा है।"

"लेकिन जब लोग वैसा कहते हैं, तो उनका मतलब क्या होता है?.. उसका कुछ न कुछ अर्थ तो होता ही होगा।"

मक्सिम सोचने लगे।

"यह सिर्फ़ एक तुलना है," उसने उत्तर दिया, "अगर ठीक-ठीक देखें, तो ध्वनि एक गति है और प्रकाश भी गति है। और ऐसा होने पर उनमें बहुत-सी समान विशेषताएं भी होनी चाहिए।"

"कौनसी विशेषताएं?" प्योत्र ने आग्रह किया। "यह 'लाल घनघनाहट' क्या है?"

मक्सिम चुप हो गये। वह उत्तर देने के पहले कुछ सोचना चाहते थे। वह ध्वनि-कम्पन के विज्ञान की बात बता सकते थे। मगर उनका विचार था कि इससे प्योत्र को सन्तोष न होगा, क्योंकि जिस किसी ने भी सर्वप्रथम ध्वनि का वर्णन रंगों तथा प्रकाश के विशेषणों की सहायता से किया था, उसे शायद उनके भौतिक गुणों का ज्ञान न था। फिर भी यह स्पष्ट था कि उसे उनमें किसी एकरूपता का आभास मिला था। लेकिन कौनसी एकरूपता?

मक्सिम के दिमाग़ में एक नयी कल्पना ने जन्म लिया।

"ठहर," वह बोले, "पता नहीं तुझे ठीक-ठीक समझा भी पाऊंगा या नहीं ... लाल घनघनाहट क्या है यह तू मुझसे भी अच्छी तरह जान सकता है: तूने उसे कई बार सुना है शहर में बड़े-बड़े त्योहारों पर, केवल हमारे यहां ऐसा नहीं बोलते ..."

"ठहरो, एक मिनट ठहरो।"

जल्दी-जल्दी प्योत्र ने पियानो खोला और उसे बजाने लगा। कुछ हल्के-हल्के मध्यम सुरों की पृष्ठभूमि में उसकी अभ्यस्त उंगलियों से ऊंचे सुर निकलने लगे, स्पष्ट एवं गतिवान—एक के बाद एक; और हृदय को प्रसन्न कर देनेवाली वही ध्वनियां कमरे में गूंजने लगीं, जो त्योहारवाले दिन गिरजे के घंटों से निकलकर वातावरण में फैलती हैं।

"ठीक है!" मक्सिम ने उत्तर दिया, "बिल्कुल ठीक, ऐसी ही ध्वनियां। और आंखें होते हुए भी हम तेरे से ज्यादा अच्छी तरह यह नहीं समझ पाते। अब देख ... अगर मैं किसी बड़ी लाल सतह को देखता हूं, तो मेरी आंखों को कुछ लचकदार लहरों की ऐसी ही बेचैनीभरी अनुभूति होती है। लगता है मानो स्वयं सतह की लालिमा में परिवर्तन हो रहे हैं: अपने नीचे अधिक गहरी, गूढ़ी पृष्ठभूमि छोड़ते हुए कहीं-कहीं तीखे लाल रंग की लहरें सी तेजी से सतह पर उभरती हैं और फिर उतनी ही तेजी से विलीन हो जाती हैं। इन सब का आंखों पर बड़ा प्रभाव पड़ता है—कम से कम मेरी आंखों पर तो पड़ता ही है।"

"हां, यह ठीक है, बिल्कुल ठीक," एवेलीना उत्तेजित-सी बोल उठी। "मुझे भी ऐसी ही अनुभूति होती है और मैं लाल बनात के मेजपोश को देर तक नहीं देखती रह सकती ..."

"और कुछ लोग त्योहारों के घंटों की टन-टन भी बर्दाश्त नहीं कर सकते। हां, मैं समझता हूं कि यह तुलना मैंने ठीक ही की है। हम इस तुलना को और भी अधिक स्पष्ट कर सकते हैं। घंटियों की एक विशेष प्रकार की ध्वनि को लोग 'गुलाबी ध्वनि' कहते हैं। और इसी नाम का एक रंग भी है। यह ध्वनि और रंग लाल रंग के बहुत समीप हैं—गहराई लिये हुए, अधिक कोमल, अधिक समतल। रूसी त्रोइका गाड़ी की नयी-नयी घंटियों की टुनटुनाहट हमेशा तीखी, असमान और कर्णकटु होती है, लेकिन जब वे बहुत काल तक प्रयोग में आ चुकती हैं, तो उनमें, उनकी ध्वनियों के जानकारों के कथनानुसार, एक नयी धुन पैदा होने लगती है और फिर इसी गुलाबीपन का आभास मिलने लगता है। और यदि तुम छोटी-छोटी घंटियों की ध्वनियों के साथ उनका सामंजस्य बिठा सको, तो गिरजे के घंटों में भी ऐसा ही प्रभाव दिखाई पड़ सकता है।"

प्योत्र घंटियों की टुनटुनाहट जैसी ध्वनियां पियानो पर निकालने लगा।

"नहीं," मक्सिम ने कहा। "मैं तो कहूंगा कि अभी इसमें बहुत लाली है ..."

"ओह, अब समझा!"

और ध्वनियों में सामंजस्य आ गया। ऊंचे सुरों में प्रारम्भ की गयी ये ध्वनियां नीचे और नीचे आती गयीं और धीरे-धीरे नीची, गहरी और मृदु होती गयीं। अब पियानो से रूसी त्रोइका की घंटियों की मधुर झंकार

निकल रही थी—संध्या की झुटपुट में धूलभरी राह पर किसी अज्ञात दिशा में जाती ओइका की घंटियों की शांत, समान, मधुर झंकार धीरे-धीरे मंद पड़ती हुई और अंततः शांत खेतों की नीरवता में विलीन होती हुई।

"हां, यही वह ध्वनि है!" मक्सिम बोले। "तूने इस अन्तर को बिल्कुल ठीक समझा है। हां, एक बार तेरी मां ने ध्वनि के माध्यम से रंगों का ज्ञान कराने की कोशिश की थी। तू तब बहुत छोटा था।"

"हां, मुझे अच्छी तरह याद है। उस समय तुमने उस प्रयास को छुड़वा क्यों दिया था? शायद मैं रंगभेद जान ही लेता।"

"नहीं," मक्सिम कहने लगे, "उससे कुछ न होता। वैसे मुझे लगता है कि आत्मा के निश्चित धरातल पर, एक निश्चित गहराई पर ध्वनि और रंगों की छापें एक-सी ही पड़ती हैं। उदाहरणार्थ, हम किसी व्यक्ति के विषय में कहते हैं कि वह दुनिया को गुलाबी चश्मे से देखता है, लेकिन हमारा मतलब होता है कि वह व्यक्ति खुशदिल है, आशावादी है। सुविदित ध्वनि-चयन से भी बहुत कुछ वैसी ही मानसिक स्थिति पैदा हो सकती है। मैं तो यहां तक कहूंगा कि ध्वनियां और रंग एक-सी आन्तरिक अनुभूतियों के प्रतीक हैं।"

मक्सिम अपना पाइप जलाने के लिए एक क्षण तक चुप रहे और कश लगाते-लगाते प्योत्र के चेहरे की ओर देखते रहे। प्योत्र शान्त बैठा-बैठा कुछ और सुनने की प्रतीक्षा करता रहा। "आगे कहूं या नहीं," मक्सिम ने सोचा, किंतु क्षण भर बाद ही मानो अपने विचारों के विचित्र प्रवाह में बहते हुए वह विचारमग्न बोलने लगे:

"हां, मेरे दिमाग़ में विचित्र प्रकार के विचार आ रहे हैं ... क्या यह सिर्फ़ इत्तिफ़ाक है कि हमारा ख़ून लाल है? जब कभी तेरे दिमाग़ में कोई विचार आता है या सोते समय जब तू कोई ऐसे सपने देखता है कि जागने पर कंपकंपी चढ़ जाती है और आंखों से आंसू निकल पड़ते हैं, जब उत्तेजनावश किसी का चेहरा सुर्ख़ हो जाता है, तो इसका अर्थ है कि ख़ून का दौरा तेज़ हो जाता है और वह हृदय से द्रुतगति से निकलता हुआ दिमाग़ की ओर दौड़ने लगता है। और यह हमारा ख़ून भी लाल है ..."

"वह लाल है ... हमारा ख़ून ..." प्योत्र ने विचारशील मुद्रा में दुहराया, "लाल और गर्म..."

"हां, लाल और गर्म। यह लाल रंग और वे ध्वनियां, जिन्हें हम लाल कहते हैं, हमें प्रफुल्लित करती हैं, उत्साहित करती हैं। वे हमारे लिए तीव्र अभिलाषाओं, उत्कंठाओं के प्रतीक हैं और इनके साथ हमारे मस्तिष्क में जोश, गरमी, उबाल का विचार जुड़ा हुआ है। लोग कहते हैं: खून का जोश, खून खौलना ... और बड़ी दिलचस्प बात है कि कलाकार भी लाल रंगों को 'उष्ण' वर्णों का नाम देते हैं।"

मक्सिम ने थोड़े से कश लगाये और धुएं ने चारों ओर से उन्हें घेर लिया।

उन्होंने आगे कहना शुरू किया: "अगर तू अपना हाथ ऊपर उठाये और फिर घुमाते हुए नीचे ले आये, तो तू एक अर्द्ध-वृत्त बनायेगा। हां, अब कल्पना कर कि तेरा हाथ लम्बा है, बहुत लम्बा, इतना लम्बा, जिसका अनुमान नहीं लगाया जा सकता। अगर तू उसे भी वैसे ही घुमाये, तो भी एक अर्द्ध-वृत्त बनेगा, जो बहुत बड़ा होगा—अनादि, अनन्त ... यही, हमारे ऊपर, आसमान की छत है, मेहराब की तरह—दूर, बहुत दूर तक फैली हुई। एक अतिविशाल अर्द्ध-वृत्त—एक जैसा अनन्त नीला... जब हम उसे ऐसा देखते है, तो हमारी आत्मा शान्त रहती है, निर्मल रहती है। परन्तु जब अनन्त आकाश पर अस्पष्ट, गतिवान, परिवर्तनशील बादल छा जाते हैं, उस समय हमारी आत्मिक शांति भी भंग हो जाती है और हमें कुछ अस्पष्ट व्यग्रता का अनुभव होने लगता है। तुझे तो काली घटा के छाने का पता चल जाता है, है ना?.."

"हां, ऐसा लगता है कि मन मे कोई चीज उथल-पुथल मचा रही है।"

"बिल्कुल ठीक। और इसी लिए हम प्रतीक्षा करते हैं कि बादलों के पीछे से गहन नीलाकाश हमें दिखाई पड़े। काली घटाएं गरज, बरस कर निकल जायेंगी और नीलाकाश वैसा ही बना रहेगा। हम यह अच्छी तरह जानते हैं और इसी लिए शांत चित्त से घटाओं के निकल जाने का इंतजार करते है। सो, आसमान नीला है ... और शान्त रहने पर समुद्र भी नीला ही होता है। तेरी मां की आंखें नीली हैं और एवेलीना की भी।"

"नीलाकाश जैसी ..." प्योत्र ने मन मे सहसा जाग उठे स्नेह भाव के साथ कहा।

"हां, आसमान की ही भांति। नीली आंखें आत्मिक निर्मलता की द्योतक है। अब हरा रंग ले। जमीन काली होती है, वसन्त के आरम्भ में पेड़ के तने काले और कभी-कभी भूरे होते है और तब वसन्त का सूर्य अपनी धूप और अपना प्रकाश इस काले-काले धरातल पर फैलाता हे और उसमें गर्मी पैदा करता है। भूमि से हरियाली उत्पन्न होती हे और सारी कालिमा हरीतिमा से ढंक जाती है—हरी-हरी घास, हरी-हरी पत्तियां। इस हरियाली के लिए प्रकाश भी होना चाहिए और गर्मी भी। परन्तु अत्यधिक प्रकाश और अत्यधिक गर्मी नही। इसी लिए हरियाली आंखों को इतना भाती है। हरियाली में मानो उष्णता के साथ नम शीतलता मिली हुई है। वह हमारी कल्पना में शांत संतुष्टि और स्वास्थ्य के चित्र खींचती है, पर उत्कट अभिलाषाओं के नहीं और न ही उस भावना के, जिसे लोग ख़ुशी कहते है, आनंद कहते है ... तू समझ रहा है?"

"नहीं ... बिल्कुल ठीक-ठीक तो नहीं। पर फिर भी तुम कहते जाओ, कृपया कहते जाओ।"

"क्या किया जाये ... ख़ैर, सुन पाये। जैसे ही जैसे ग्रीष्म की उष्णता बढ़ती है, हरियाली मानो जीवन-शक्ति की प्रचुरता से शिथिल होने लगती है, पत्तियां निढाल-सी झुक जाती है और यदि सूर्य की गर्मी को वर्षा की शीतलता से शान्त न कर दिया जाये, तो हरियाली एकदम मुरझा सकती है। परन्तु जब शरद का आगमन होता है, तो फल फलते हैं और शिथिल पत्तियों के बीच दिन-बदिन लाल होते जाते हैं। फल के जिस ओर सबसे अधिक प्रकाश पड़ता है, वह भाग सबसे अधिक लाल हो उठता है। ऐसा लगता है कि उसके भीतर जीवन की सारी शक्ति और वनस्पति-जगत की सारी उत्कंठा समा गयी है। देखा तूने, यहां भी लाल रंग उत्कंठा का ही द्योतक है। लाल रंग हर्षोल्लास, पाप, रोष, क्रोध तथा प्रतिकार का रंग है। जब जनता के बड़े-बड़े समूह विद्रोह के लिए अपनी आवाज़ बुलन्द करते हैं, तो वे अपनी भावनाओं को लाल झंडे में व्यक्त करते हैं, जो उनके सिरों पर ज्वाला की तरह लहराता है ... पर तू फिर समझ नही पा रहा है? .."

"कोई बात नहीं। कहते जाओ!"

"शरद के अन्तिम दिन। फल पक जाते हैं और वृक्ष से झड़कर जमीन पर गिर पड़ते हैं ... फल की मृत्यु जरूर हो जाती है, परन्तु उसके

अन्तस् में बीज जीवित है और बीज में उसकी "क्षमता" के रूप में जीवित है एक नया पौधा और उसकी भावी हरियाली तथा फल। बीज ज़मीन पर गिर पड़ता है और उसके ऊपर पड़ती हैं सूर्य की तिरछी किरणें, जो अब ठंडी हैं, उसके ऊपर बहती हैं ठंडी हवाएं और छा जाती हैं ठंडी घटाएं ... न केवल उत्कंठाएं, अपितु स्वयं जीवन तक धीरे-धीरे चुपके-चुपके मूक हो जाता है ... धीरे-धीरे हरियाली के आवरण में से काली-काली पृथ्वी की ताक-झांक आरम्भ होती है। आसमान का नीलापन ठंडा पड़ जाता है और एक दिन वह भी आता है कि लाखों करोड़ों हिमकण इस शांत, मूक विधवा पृथ्वी पर गिरते हैं और सारी पृथ्वी समतल, एकरंगी और सफ़ेद हो जाती है... सफ़ेद – यह हिम का रंग है, उन ऊंचे से ऊंचे बादलों का रंग है, जो अप्राप्य ऊंचाइयों पर तैरते-उतराते हैं, और गर्व से अपना सिर उठाये एकाकी खड़े हुए ऊंचे-ऊंचे पर्वतशिखरों का रंग है ... सफ़ेद शुद्धता, शीतलता, पवित्रता और आत्मा के भावी जीवन का प्रतीक है। और काला..."

"वह मैं जानता हूं," प्योत्र ने बात काटते हुए कहा। "कोई ध्वनि नहीं, कोई गति नहीं ... रात्रि..."

"हां, और इसी कारण वह शोक का प्रतीक है, मृत्यु का प्रतीक है।"

प्योत्र विकल हो उठा। "मृत्यु का प्रतीक!" उसने धीरे से ये शब्द दुहराये। "मृत्यु! यही कहा न, तुमने? और मेरे लिए ... मेरे लिए तो सारी दुनिया काली है। हमेशा, हर जगह।"

"यह ठीक नहीं," मक्सिम ने कुछ तेज़ी से उत्तर दिया। "तुझे ध्वनि, उष्णता और गति का ज्ञान है ... तू उन लोगों के बीच रहता है, जो तुझे प्यार करते हैं ... ऐसे बहुत-से होंगे, जो उस प्रसाद को पाने के लिए अपनी आंखें दे देना पसन्द करेंगे, जिसकी तू इतनी उपेक्षा करता है, पागल! पर तू है कि केवल अपने बारे में सोचता हुआ अपने शोक से आतुर हो रहा है ..."

"हां," प्योत्र जोश में आकर बोला। "मैं आतुर रहता हूं, परंतु अपनी इच्छा से नहीं। मै उसे छोड़कर कहां जाऊं, जब कि वह हर घड़ी, हर जगह मेरे साथ है?"

"अगर तू किसी तरह अपने दिमाग़ में यह बात बिठा सके कि दुनिया मे लोगों को इससे भी सैकड़ों गुना अधिक कष्ट भोगना पड़ता है,

यदि तू समझ सके कि तू, जो इस प्रकार का जीवन व्यतीत कर रहा है—लोग तुझे पलकों पर बिठाते हैं, तुझे चाहते है, तुझसे प्रेम करते हैं—वह उन कष्टों को देखते हुए स्वर्ग है स्वर्ग ..."

"नहीं, नहीं!" प्योत्र बीच ही में पहले जैसी ऊंची आवाज में सरोष बोल उठा। "यह ठीक नहीं। मैं अपने को सबसे दुःखी भिखारी से बदलने को तैयार हूं, क्योंकि वह मुझसे ज्यादा खुश है। अन्धों की तो न कोई चिंता करनी चाहिए, न उनकी देख-भाल करनी चाहिए: यह एक बड़ी भूल है ... अन्धों को तो भीख मांगने के लिए सड़कों पर छोड़ देना चाहिए। हां, अगर मैं भिखारी होता, तो इतना अभागा न होता। सुबह जागता, तो मेरे दिमाग़ में पेट भरने की बात आती और मैं भीख में मिले पैसों को गिनता रहता, डरता कि पैसे थोड़े हैं और अच्छी भीख मिल जाने पर खुश होता, फिर रात काटने की चिंता होती। और अगर भीख न मिलती, तो ठंड में ठिठुरता, भूख से तड़पता ... और इस सबसे मेरे पास सोचने के लिए एक क्षण भी न होता ... और ... और ... और... इस ग़रीबी से मुझे इतना कष्ट न होता, जितना अब होता है ..."

"न होता?" मक्सिम ने रुखाई से पूछा और एवेलीना की ओर देखा। उनकी नजर में दया और सहानुभूति थी। लड़की गंभीर बैठी थी, उसके चेहरे का रंग उड़ा हुआ था।

"नहीं, कभी नहीं। मुझे विश्वास है," प्योत्र ने दृढ़ता से उत्तर दिया। उसकी बोली में कर्कशता थी। "मुझे घंटिये येगोर से ईर्ष्या होती है। अक्सर जब मैं सुबह उठता हूं, तो मुझे उसकी याद आती है—ख़ासकर जिस दिन तेज हवा चलती है, बर्फ़ पड़ती है। मैं कल्पना करने लगता हूं: वह मीनार की सीढ़ियों पर चढ़ रहा है ..."

"उसे ठंड लग रही है," मक्सिम ने याद दिलाया।

"हां, उसे ठंड लग रही है। वह ठिठुर रहा है और खांस रहा है। और बार-बार फ़ादर पम्फ़ीली को बुरा-भला कह रहा है, क्योंकि वह उसे जाड़े के लिए गर्म कोट नहीं ला देते। और फिर वह ठंड से अकड़े हाथों से घंटे की रस्सियां पकड़ लेता है और प्रातःकालीन प्रार्थना के लिए उन्हें बजाना आरम्भ कर देता है। और फिर यह भूल जाता है कि वह अन्धा है, क्योंकि कोई भी वहां ठंडक ही महसूस करेगा, चाहे वह अन्धा हो

या आंखों वाला। लेकिन मैं ... मैं यह नहीं भूल सकता और मैं ..."

"और तेरे पास ऐसा कोई है नहीं, जिसे बुरा-भला कह सके।"

"हां, मेरे पास ऐसा कोई भी नहीं, जिसे मैं बुरा-भला कह सकूं। मेरे जीवन को भरने के लिए कुछ भी तो नहीं—सिवा इस अन्धेपन के और कुछ भी तो नहीं। और मैं इसके लिए दोष भी किसे दूं, लेकिन मुझसे अधिक खुश तो एक मामूली भिखारी होगा ..."

"शायद हो," मक्सिम ने उदासीनता से कहा। "मैं इसके बारे में बहस नहीं करूंगा। कुछ भी हो, यदि तुझे जीवन में कठिनाइयां भुगतनी पड़तीं, तो शायद तू खुद अधिक अच्छा होता।"

और एवेलीना पर फिर एक दयार्द्र दृष्टि डालते हुए मक्सिम ने अपनी बैसाखी उठायी और पटपट करते हुए कमरे से बाहर निकल गये।

प्योत्र की मानसिक स्थिति इस बातचीत के पश्चात् और भी अधिक उग्र हो गयी। वह अपने व्ययनीय प्रयासों में और भी अधिक खोया रहने लगा।

और कभी-कभी उसे सफलता भी प्राप्त होती थी: एक क्षण के लिए उसे मक्सिम द्वारा वर्णित अनुभूतियों का आभास होता और वे उसके मस्तिष्क में दूरी की जो कल्पनाएं थीं, दूरी की उसकी जो अनुभूति थी, उसके साथ एकाकार हो जातीं। पृथ्वी दूर, बहुत दूर तक फैली थी—गम्भीर, उदास। वह उसकी थाह पाने का प्रयत्न करता, परन्तु उसका कोई ओर-छोर न था। और इस पृथ्वी के ऊपर कुछ और भी था ... उसकी स्मृति उसकी कल्पना के समक्ष बादलों की गड़गड़ाहट के दृश्य खड़े कर देती और उसी के साथ उसे निस्सीमता और आकाश के विस्तार की अनुभूति होने लगती। और फिर यह गड़गड़ाहट समाप्त हो जाती, लेकिन वहां, ऊपर कुछ रह जाता—वह, जो उसकी आत्मा में निर्मलता और विशालता की अनुभूति भर देता। कभी-कभी यह अनुभूति स्पष्ट और प्रखर हो जाती: उसमें एवेलीना और मां के स्वर आ मिलते, जिनकी आंखें "नीलाकाश जैसी हैं"; और फिर कल्पना की गहराइयों से उठता हुआ ठोस होता हुआ एक रूप सहसा किन्हीं अन्य अनुभूतियों के क्षेत्र में विलीन हो जाता।

ये सारी धूमिल कल्पनाएं उसे कलपाती रहीं। उन्होंने आत्मिक सन्तोष को उसके आगे कभी फटकने नहीं दिया। यद्यपि उसने अपनी इन

अनुभूतियों को समझने के लिए कठोर श्रम किया था, फिर भी वे सदा उसके लिए अस्पष्ट बनी रहीं और उसे केवल निराशा हाथ लगी। वे उस पीड़ा को कम न कर सकीं, जो उसे उसकी व्यथित आत्मा की अभीप्सित वस्तु की तलाश में अथवा उन अनुभूतियों की पुनःप्राप्ति के विफल प्रयासों में होती थी, जिनसे जीवन ने उसे वंचित कर रखा था।

८

वसन्त आया।

स्ताव्रूकोयो से विपरीत दिशा में, कोठी से लगभग ६० वेर्स्ता दूर एक छोटे-से नगर में कैथोलिक गिरजे में एक चमत्कारी देव-चित्र था। जानकार लोग इसकी चमत्कारिक शक्ति बिल्कुल सही-सही बताया करते थे: जो भी प्रतिमोत्सव के दिन पैदल चलकर देव-चित्र की वन्दना करने आयेगा, उसे "बीस दिनों की छूट" मिलेगी अर्थात् इस पृथ्वी पर बीस दिनों के दौरान में किये गये किसी भी पाप या अपराध के लिए उसे परलोक में कोई भी दण्ड नहीं भुगतना पड़ेगा। यही कारण था कि वसन्त ऋतु के आरम्भ में प्रतिवर्ष एक ख़ास दिन उस छोटे-से नगर में ज़िन्दगी की बहार खेला करती। पुराना गिरजा उत्सव के दिन वसन्तकालीन प्रथम पत्र-पुष्पों से भरा-पूरा दिखाई पड़ता और चित्त को प्रसन्न कर देनेवाली उसके घंटों की घनघनाहट सारे नगर में प्रतिध्वनित होने लगती। उस दिन चारों ओर से आनेवाली भिन्न-भिन्न प्रकार की गाड़ियों के पहियों की खड़खड़ाहट सुनाई देती और पैदल चलकर आये हुए तीर्थ यात्रियों की भीड़ की भीड़ नगर के मैदानों, सड़कों और दूरस्थ खेतों में भर जाती। ये तीर्थ यात्री केवल कैथोलिक ही होते हों, ऐसी बात न थी। इस देव-चित्र की ख्याति दूर-दूर तक पहुंच चुकी थी और फलतः कितने ही आर्थोडोक्स चर्च के पीड़ित, दुःखी अनुयायी तक उससे खिंचते हुए चले आते थे। इनमें से अधिकांश होते थे शहरों में रहनेवाले।

हमेशा की भांति इस वर्ष भी उत्सव के दिन गिरजे की सड़क पर श्रद्धालुओं की बेअंत रंग-बिरंगी भीड़ थी। क़स्बे को घेरे टीलों में से किसी एक की चोटी से अगर कोई इस तमाशे को देखता, तो उसे ऐसा लग

सकता था कि गिरजे के चारों ओर सड़क पर कोई दैत्याकार जानवर लेटा हुआ है और धीरे-धीरे हिल-डुल रहा है, जिससे उसकी खुरदरी चमकीली बहुरंगी चमड़ी रह-रह कर चमक उठती है। उसके दोनों ओर भीख के लिए हाथ फैलाये हुए भिखारियों की दो-दो पंक्तियां थीं।

वैसाखी पर सारा बोझ डाले हुए मक्सिम नगर के बाहर जानेवाली सड़क पर धीरे-धीरे आगे बढ़ रहे थे। इयोखिम का हाथ पकड़े प्योत्र भी उनकी बग़ल में चल रहा था।

अब भीड़ का कोलाहल, यहूदी फेरीवालों की चिल्लपों, पहियों की खड़खड़ाहट और गिरजे की सड़क के एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक कान फाड़ देनेवाला सारा शोर और होहल्ला प्रायः पीछे छूट चुका था। इस दूरी पर यह सारी आवाज़ें मिलकर एक तरंगमय गर्जन के रूप में निरंतर गूंज रही थीं। यद्यपि यहां भीड़ कम थी, फिर भी पैरों की चापें, लोगों की चेंचें और पहियों की खड़खड़ाहट निरन्तर सुनाई पड़ रही थी। गाड़ियों की एक लम्बी क़तार चरमर करती हुई उनके पास से होकर गुज़री और निकट की एक गली में घुस गयी।

दिन में ठंडक थी। प्योत्र मक्सिम की पदचापों का अनुसरण करता और बराबर अपने कोट से बदन को ढांकता-छिपाता आगे बढ़ रहा था। यह खोया-खोया सा इस कोलाहल को सुन रहा था। उसका मस्तिष्क उसी उधेड़-बुन में लगा हुआ था, जो इतने अरसे से बराबर उसे व्यग्र कर रही थी, व्यस्त रख रही थी।

और इस स्वार्थपूर्ण व्यस्तता के बीच प्योत्र के कानों में एक नयी आवाज़ पड़ी, जिसने उसके अन्तस् को इतनी ज़ोरों से झकझोरा कि वह एकदम ठिठककर रुक गया।

अब वे नगर के उस अन्तिम छोर पर पहुंच गये थे, जहां मकानों की आखिरी पंक्तियां समाप्त हो चुकी थीं और बाड़ों तथा ऊसर ज़मीन के बीच बड़ी सड़क थी। अन्ततः सड़क के बाद वे खुले-खुले खेतों के बीच होकर जानेवाले एक चौड़े-से राजमार्ग पर आ गये। जहां खेत शुरू होते थे, ठीक वहीं सड़क के किनारे पत्थर का एक खंभा पड़ता था, जिसपर एक देव-चित्र था और एक लालटेन लटक रही थी। निश्चय ही इस खंभे का निर्माण अतीत काल में किन्हीं पवित्र हाथों द्वारा हुआ होगा। सच बात यह थी कि लालटेन कभी जलायी न जाती थी, बस वह वायु के झकोरों

के कारण इधर-उधर हिलती-डुलती रहती थी। और इस खंभे के नीचे अन्धे भिखारियों की एक भीड़ खड़ी थी, जिन्हें उनके आंखों वाले प्रतिद्वंद्वियों ने अच्छी जगहों से धकेल दिया था। प्रत्येक के हाथ में लकड़ी का एक भिक्षा-पात्र था। उनमें से कभी-कभी कोई ऊंची आवाज में बोल उठता था :

"अन्धे को दे, दाता ... मसीहा के नाम पर ..."

इस समय सर्दी पड़ रही थी और भिखारी सुबह से यहां बैठे थे। खेतों से होकर बहनेवाली ठंडी हवा से भिखारियों के लिए कोई भी बचाव न था। वे दूसरों की तरह भीड़ में घूम-फिर कर भी अपने शरीर को गर्मी नहीं पहुंचा सकते थे। बारी-बारी से वे अन्धों का करुण गीत गा रहे थे और उनकी आवाजों में शारीरिक वेदना और निरीहता से पीड़ित हृदयों की कराह थी। गीत के पहले स्वर स्पष्ट सुनाई देते थे और उसके बाद उनकी दुर्बल छातियों में से केवल शिकायतभरी आह ही फूट निकलती थी, जो ठंड से थरथराती हुई हवा में खो जाती थी। परन्तु सड़क के कोलाहल में डूबती हुई ये हल्की आहें भी मानव के कानों में पड़कर उसे स्तंभित कर देती थीं और उसके समक्ष दुःखी, पीड़ित मानवता का एक नग्न चित्र खड़ा कर देती थीं—वह चित्र, जिसे देखकर भी सहसा विश्वास नहीं होता।

प्योत्र रुक गया। उसके चेहरे पर पीड़ा के लक्षण स्पष्ट दिखाई पड़ने लगे मानो भिखारियों के करुण क्रन्दन ने उसकी अंधेरी कल्पना के सामने किन्हीं धुंधली, निराकार आकृतियों को खड़ा कर दिया हो।

"डर क्यों गया?" मक्सिम ने उससे पूछा। "ये वही भाग्यशाली आत्माएं हैं, जिनसे तू अभी थोड़े ही समय पूर्व ईर्ष्या करता था। ये हैं अन्धे भिखमंगे, टके-टके के लिए हाथ फैला रहे हैं ... बेशक उन्हें कुछ सर्दी लग रही है। लेकिन तेरे ख्याल से तो इससे उन्हें खुशी ही होनी चाहिए।"

"निकल चलो यहां से," मक्सिम का हाथ पकड़ते हुए प्योत्र चिल्ला उठा।

"ओह तो तू यहां से चला जाना चाहता है! क्यों दूसरों का दुःख देखकर तेरी आत्मा में और कोई भाव नहीं उठता। नहीं, ठहर। मैं तुझसे कुछ गम्भीर बातें करना चाहता हूं और खुश हूं कि ये बातें यहीं होंगी। तुझे बराबर शिकायत रहती है कि जमाना बदल गया है और अन्धे युवकों को उस युवक बन्दूरिस्त यूरको की भांति युद्धस्थल में रात के वक्त टुकड़े-टुकड़े नहीं किया जाता। तुझे क्रोध आता है कि उस मठ के येगोर की भांति तू किसी को बुरा-भला नहीं कह सकता और अपने दिल में तू

है। क्या तू इतना भी नहीं करेगा? यों ही भाग जायेगा? तुझे केवल भरे पेट दूसरों की भूख से ईर्ष्या करनी आती है! .."

प्योत्र ने अपना सिर पीछे घुमा लिया मानो उसे कोड़े की मार पड़ी हो। जेब से अपना बटुआ निकालकर वह भिखारियों की टोली की ओर बढ़ा। जब उसकी टटोलती हुई छड़ी सबसे निकट के भिखारी पर जाकर रुकी, तो वह उसपर झुका, उसने लकड़ी का भिक्षा-पात्र छुआ और बड़ी होशियारी से उसमें कुछ पैसे डाल दिये। राह जाते कुछ लोग बाक़ी लोगों से भिन्न और अमीर से लगनेवाले इस युवक को अन्धे के प्याले में भीख डालते देखकर रुक गये। विस्मित से वे देख रहे थे कैसे देनेवाला भिखारी के हाथों को टटोलता हुआ दे रहा था और भिखारी उस दान को टटोल-टटोल कर ग्रहण कर रहा था।

परन्तु मक्सिम तेज़ी से एक ओर हटकर सड़क पर आगे बढ़ गये। उनका चेहरा लाल था और आँखों से चिंगारियां निकल रही थीं ... इस समय उनका खून खौल रहा था। उनका यह गुस्सा जवानी में उनसे परिचित लोगों ने अक्सर देखा था। अब वह शिक्षणशास्त्री नहीं थे, जो कहने के पहले हर शब्द को तौलता हो, उसपर विचार करता हो। वह जोश में थे और अपने क्रोध को रोकने का कोई प्रयत्न नहीं कर रहे थे। थोड़ी देर बाद उन्होंने प्योत्र पर कनखियों से एक निगाह डाली और उनका गुस्सा कुछ ठंडा पड़ गया। प्योत्र दूध की भांति सफ़ेद पड़ गया था। उसकी भौंहें खिंचकर पास-पास आ गयी थीं और उसके चेहरे पर गहरी विक्षुब्धता अंकित थी।

क़स्बे की सड़कों पर उनके पीछे-पीछे सर्द हवा धूल उड़ा रही थी। प्योत्र के दिये पैसों के कारण अन्धों में हो रहे झगड़े की आवाज़ें आ रही थीं ...

६

शायद प्योत्र को ठंड लग गयी थी या शायद उसके मानस में चलनेवाले दीर्घकालीन अन्तर्द्वन्द्वों का अन्त हो रहा था या शायद दोनों ही कारण एक साथ उपस्थित हो गये हों—अगले दिन वह अपने कमरे में बीमार पड़ा था। उसका सारा शरीर ताप से जल रहा था। उसका चेहरा विकृत

हो रहा था और वह चारपाई पर पड़ा-पड़ा बेचैनी से करवटें बदल रहा था। कभी-कभी वह कुछ सुनता हुआ सा प्रतीत होता और कभी घबड़ाकर उठ जाता और कहीं भागने को होता। क़स्बे से बूढ़े डाक्टर उसे देखने आये, उन्होंने उसकी नाड़ी पर हाथ रखा और वसन्त काल की ठंडी हवाओं की बातें करने लगे। मक्सिम की भौंहें सिकुड़ी हुई थीं और वह अपनी बहन से आंखें चुरा रहे थे।

ज्वर बहुत समय तक चलता रहा। जब बीमारी चरम सीमा पर पहुंची, तो रोगी कुछ दिन एकदम निर्जीव-सा पड़ा रहा। किन्तु यौवन में एक लोच, एक प्रतिक्रिया-शक्ति है। अंततः उसने रोग पर विजय पायी।

वसंत की एक उज्ज्वल सुबह को सूर्य की एक तीखी किरण खिड़की में से होती हुई रोगी के सिरहाने पर आ गिरी। यह देखकर आन्ना मिखाइलोव्ना ने एवेलीना से कहा:

"परदा गिरा दे ... इस धूप से मुझे डर लगता है..."

किन्तु जब एवेलीना खिड़की तक जाने के लिए तैयार हुई, तो सहसा प्योत्र कहने लगा—इतने दिनों बाद उसने ये पहले शब्द कहे थे:

"नहीं, मत गिराओ। ऐसे ही रहने दो ..."

दोनों खुशी-खुशी उसके ऊपर झुक गयीं।

"तू सुन रहा है? मैं यहां हूं! .." मां ने कहा।

"हां," उसने उत्तर दिया और फिर चुप हो गया। ऐसा लग रहा था मानो वह कुछ याद करने का प्रयत्न कर रहा हो।

तभी धीरे से वह बोल उठा: "ओह, हां!" और बैठने की कोशिश करने लगा। "वह फ़्योदोर ... आया था?"

एवेलीना और आन्ना मिखाइलोव्ना ने एक दूसरे को देखा। आन्ना मिखाइलोव्ना ने प्योत्र के होंठों पर अपनी उंगलियां रख दीं।

"चुप, चुप हो जा," वह धीरे से बोलीं। "बातचीत करना तेरे लिए नुक़सानदेह है।"

प्योत्र ने मां का हाथ अपने होंठों पर दबा लिया और उसे चूमने लगा। उसकी आंखों में आंसू थे। वह देर तक रोता रहा और इससे उसे शान्ति मिली।

कुछ दिनों तक प्योत्र बहुत विचारशील और शान्त बना रहा। किन्तु जब कभी मक्सिम के पैरों की आहट उसे कमरे के पास सुनाई दे जाती, तो उसके चेहरे पर व्यग्रता के चिह्न दिखने लगते। फलतः स्त्रियों ने मक्सिम से अनुरोध किया था कि वह रोगी के कमरे से दूर रहे। लेकिन एक दिन स्वयं प्योत्र ने उनसे मिलने की इच्छा प्रकट की, परन्तु एकान्त में।

पलंग के पास आकर मक्सिम ने प्योत्र का हाथ अपने हाथों में ले लिया और उसे बड़े प्यार से दबाने लगे।

"क्यों, मेरे बच्चे," उन्होंने कहा। "अब तो लगता है मुझे तुमसे माफ़ी मांगनी पड़ेगी।"

प्योत्र ने भी मामा के हाथों को दबाया। "मैं समझता हूं," उसने धीरे-धीरे कहना आरम्भ किया। "कि तुमने मुझे एक सबक सिखाया है और मैं उसके लिए तुम्हारा आभारी हूं।"

"भाड़ में जायें सबक़!" मक्सिम ने बड़ी बेसब्री से कहना शुरू किया, "ज़रूरत से ज्यादा देर तक शिक्षक बने रहने से भी आदमी का दिमाग़ ख़राब हो जाता है। नहीं, उस दिन मैं सबक की बात नहीं सोच रहा था। मुझे सिर्फ़ गुस्सा आ रहा था, अपने ऊपर और तुमपर ..."

"मतलब, तुम सचमुच चाहते थे कि? .."

"क्या चाहता था! .. कौन जानता है, जब इंसान आपे में नहीं रहता, तो वह क्या चाहता है ... मैं सिर्फ़ यही चाहता था कि तुझे दूसरों के दुःख-दर्द का कुछ ज्ञान हो और तू अपने बारे में सोचना-विचारना कुछ कम कर दे ..."

दोनों चुप हो गये ...

"उनका वह गीत," क्षण भर बाद प्योत्र बोला। "वह मुझे बेसुधी की हालत में भी याद था ... और वह फ़्योदोर, जिसे तुमने बुलाया था — वह कौन है?"

"फ़्योदोर कन्दीबा। मेरा एक पुराना साथी है।"

"क्या वह ... भी अन्धा ही पैदा हुआ था?"

"इससे भी कहीं ख़राब: उसकी आंखें युद्ध में जल गयी थीं।"

"और अब वह अन्धों का वही गीत गाता है और भीख मांगता है?"

"हां, और उससे अपने ढेरों अनाथ भतीजों का पेट भरता है। और

यही नहीं, हर किसी से वह मज़ाक़ की, हंसी-ख़ुशी की दो बातें भी करता है ..."

"सच?" प्योत्र ने पूछा और विचार करता सा कहने लगा, "चाहे जो कहो, इसमें जरूर कोई रहस्य है। और मैं चाहता हूं कि ..."

"क्या चाहता है, मेरे बच्चे?"

कुछ ही मिनटों बाद किसी के आने की आहट हुई और आन्ना मिखाइलोव्ना ने कमरे में प्रवेश किया। वह बड़ी व्यग्रता से यह देख रही थीं कि उनके आने से प्योत्र और मक्सिम की बातचीत का सिलसिला टूट गया है और उनमें हो रही बातचीत से दोनों उत्तेजित हैं।

एक बार ज्वर से मुक्ति मिल जाने के बाद प्योत्र का युवा शरीर तेज़ी से स्वस्थ होने लगा। अगले दो हफ़्तों में वह चंगा हो गया और घूमने-फिरने लगा।

उसमें बड़ा परिवर्तन आ गया था। चेहरे का हाव-भाव भी बदल गया था, उसमें पहले की तरह तीव्र मानसिक वेदना की झलक नहीं थी। उसके मन को जो जोरदार धक्का लगा था, उससे वह अब शांत, उदास, विचारमग्न रहने लगा था।

मक्सिम को भय था कि यह परिवर्तन कहीं अस्थायी न हो, वैसा जैसा शारीरिक अशक्तता के कारण कभी-कभी तंत्रिका-तंत्र के ढीले पड़ जाने की वजह से देखने में आता है। एक दिन सायंकाल प्योत्र अपनी बीमारी के बाद से पहली बार पियानो पर बैठा और सुर-कुंजिकाओं पर उंगलियां दौड़ाने लगा। उसके संगीत में बहुत कुछ उसकी मानसिक स्थिति के अनुरूप एक मौन एवं मृदु उदासीनता थी। सहसा उसके इस संगीत में अन्धे भिखारियों के गीत के पहले स्वर फूट निकले और संगीत की धुन बिखर गयी ... प्योत्र उठ पड़ा। उसका चेहरा विकृत हो रहा था। आंखों में आंसू छलछला आये थे। ऐसा लगता था कि अभी उसमें जीवन के उस सशक्त बेसुरेपन से मोर्चा लेने की शक्ति का विकास नहीं हुआ है, जिसने उसमें इस हृदय-विदारक शोक-गान के रूप में घर कर लिया था।

उस दिन शाम को मक्सिम फिर प्योत्र से एकांत मे देर तक बातें करते रहे। और उसके बाद दिन बीते, बीते हफ़्ते, लेकिन प्योत्र की मनःस्थिति में कोई परिवर्तन देखने में न आया। अपने दुर्भाग्य की वह कटु अनुभूति, जिसने उसके हृदय को आन्दोलित कर रखा था और उसकी

आत्मिक शक्ति को जकड़ दिया था, अब निर्मूल होती सी दिखाई पड़ रही थी। और उसके स्थान पर अन्य अनुभूतियां अपनी जड़ें जमा रही थीं। अब फिर उसने अपने ध्येय निश्चित किये और भविष्य की योजनाएं बनानी आरम्भ कीं। उसमें नये जीवन का विकास हो रहा था और उसकी आहत आत्मा में नयी-नयी भावनाएं जन्म ले रही थीं, उसी प्रकार जिस प्रकार ठूंठ वृक्ष वसन्त की प्रथम मादक बयार का मृदु संस्पर्श पाकर खिल उठता है, झूम उठता है... उसी ग्रीष्म ऋतु में यह निश्चय किया गया कि प्योत्र गम्भीर अध्ययन के लिए कीयेव जायेगा। एक विख्यात पियानो वादक को उसका शिक्षक भी नियुक्त किया गया। प्योत्र के साथ सिर्फ़ उसके मामा को ही रहना था। और इस एक बात पर प्योत्र तथा मक्सिम दोनों ने ही पूरा जोर दिया था।

१०

जुलाई के महीने में एक दिन संध्या के समय एक लैंडो गाड़ी, जिसमें दो घोड़े जुते थे, रात भर विश्राम करने के लिए जंगल के किनारे, एक खेत में जाकर रुक गयी। प्रभात की पहली किरण फूटने के साथ ही साथ दो अन्धे भिखारी सड़क पर जाते हुए दिखाई दिये। एक के हाथ में एक खोखले बेलन के आकार का एक सीधा-सादा-सा बाजा था। बाजे का हैंडल घुमाने पर उसके भीतर लकड़ी का गोला कसकर तनी हुई तारों पर घूमता था और उनमें से उदास, एकसुरी भनभनाहट निकलती थी। दूसरा भिखारी कोई प्रातःकालीन भजन गुनगुनाता जा रहा था। उसकी आवाज़ नाक में से निकल रही थी, मगर फिर भी सुनने में अप्रिय नहीं थी।

थोड़ी दूर पर धूप में सुखायी हुई मछलियों से लदी-लदायी कुछ गाड़ियां चर्र-मर्र करती आगे बढ़ रही थीं। गाड़ीवानों ने सुना कि कोई उन अन्धे भिखारियों को पुकार रहा है। मुड़ने पर उन्होंने देखा कि अन्धे सड़क के एक ओर घूमे और 'पान' लोगों की ओर बढ़े, जो लैंडो गाड़ी की बगल में एक क़ालीन बिछाये आराम कर रहे थे। कुछ समय बाद जब गाड़ीवान अपने घोड़ों को एक कुएं के पास पानी पिलाने के लिए रुके, तो उनकी भेंट फिर इन्हीं भिखारियों से हुई। मगर इस बार

दो की जगह तीन आदमी थे। आगे-आगे एक बूढ़ा लम्बी लाठी से राह टटोलता चल रहा था, उसके सफ़ेद बाल हवा में लहरा रहे थे और उसकी सफ़ेद लम्बी मूंछें नीचे की ओर झुकी थीं। उसके मस्तक पर कुछ पुराने दाग़ दिखाई पड़ रहे थे, जो शायद जलने के कारण पड़ गये थे। उसकी आंखों में गड्ढे पड़े थे और उसके कंधे से जाती हुई एक मोटी-सी डोरी पीछे चलनेवाले दूसरे भिखारी की पेटी से बंधी थी। यह दूसरा भिखारी एक लम्बा, भोंडा-सा व्यक्ति था, जिसके चेहरे पर चेचक के दाग़ थे और मुंह से चिड़चिड़ापन झलक रहा था। दोनों की चाल अभ्यस्तों जैसी थी, दोनों के नेत्रहीन चेहरे ऊपर उठे थे, जैसे कि वे वहां अपना रास्ता ढूंढ़ रहे हों। तीसरा भिखारी एक युवक था, जो किसानों के नये वस्त्र पहने था। उसका चेहरा सफेद और कुछ डरा हुआ सा था। उसके क़दम डगमगाते हुए पड़ रहे थे और मानो पीछे से आती कोई आवाज़ सुनता हुआ सा वह रुक जाता, जिससे उसके साथियों को भी रुकना पड़ता।

भिखारी धीरे-धीरे आगे बढ़ते रहे। दस बजते-बजते जंगल पीछे छूट गया। अब वह क्षितिज पर एक धूमिल नीली रेखा मात्र लग रहा था। उनके चारों ओर स्तेपी थी। बाद में टेलीग्राफ़ के तारों की आवाज़ सुनकर उन्हें पता चला कि सामने एक चौड़ा-सा राजमार्ग है, जो धूलवाली सड़क को काटता हुआ आगे बढ़ रहा है। उस राजमार्ग पर आने पर वे दाहिनी ओर मुड़े। सहसा उन्हें पीछे से घोड़ों के खुरों की चापें तथा पक्की सड़क पर लोहे के पहियों की गड़गड़ाहट सुनाई पड़ी। वे रुक गये और सड़क की एक ओर हो लिये। फिर लकड़ी का गोला तारों पर भिनभिनाने लगा और बूढ़े ने अन्धों का गीत खींचा:

"अन्धे को दे, दाता ..." बाजे की भिनभिनाहट में युवक की उंगलियों तले से निकलती तारों की झंकार भी मिल गयी।

एक सिक्का वृद्ध कन्दीबा के पैरों के पास आकर खन्न से गिरा। और पहियों की घड़घड़ाहट रुक गयी: देनेवाले शायद यह देखना चाहते थे कि अन्धे सिक्के को ढूंढ़ लेंगे या नहीं। कन्दीबा ने तुरन्त सिक्का उठा लिया और उसके चेहरे पर सन्तोष और प्रसन्नता दिखने लगी।

"भगवान भला करे," सड़क पर रुकी हुई गाड़ी की ओर मुंह घुमाते हुए वह बोल उठा। गाड़ी में सफेद बालों वाले एक वृद्ध का चौकोर शरीर और उसकी बग़ल में एक जोड़ी बैसाखी दिख रही थी।

गाड़ी में बैठे हुए इस वृद्ध ने नौजवान अन्धे की ओर ग़ौर से देखा... उसका चेहरा सफ़ेद था, किन्तु अब वह शान्त हो चुका था। अन्धों का गीत शुरू होते ही उसकी उंगलियां तारों पर दौड़ने लगीं मानो वह उनकी झंकार में गीत के कर्कश स्वरों को डुबो देना चाहता हो ... गाड़ी फिर चल दी, मगर जब तक भिखारी दिखाई देते रहे वृद्ध पीछे मुड़-मुड़ कर बराबर उन्हें देखता रहा।

शीघ्र ही पहियों की आवाज़ दूर जाकर विलीन हो गयी। भिखारी सड़क पर चलते रहे।

"तेरी क़िस्मत अच्छी है, यूरी," बूढ़ा बोला। "और बजाता भी ख़ूब है ..."

कुछ क्षणों बाद बिचले अन्धे ने पूछा:

"पोचायेव जा रहा है मन्नत मानने?"

"हां," युवक ने धीरे से उत्तर दिया।

"सोचता है, देखने लगेगा? .." उसने फिर एक कटु मुस्कान के साथ पूछा।

"ऐसा भी होता है," बूढ़े कन्दीबा ने मृदुता से कहा।

"कितने साल हो गये जाते-जाते, आज तक तो कोई ऐसा मिला नहीं," चेचक के दाग़ों वाला खिन्नता से बोला। तीनों चुप हो गये और रास्ता नापते गये। सूर्य ऊपर उठता जा रहा था, तीर की तरह सीधी सड़क की सफ़ेद रेखा पर केवल अन्धों की काली आकृतियां और उनसे भी आगे लैंडो गाड़ी एक बिंदु सी दिख रही थी। आगे चलकर दो रास्ते हो गये। गाड़ी ने कीयेव को जानेवाला राजमार्ग पकड़ा और अन्धे मुड़कर कच्ची सड़कों पर पोचायेव की ओर चल दिये।

शीघ्र ही कोठी में कीयेव से मक्सिम का पत्र आया। उन्होंने लिखा था कि वे दोनों कुशलपूर्वक हैं और सब काम ठीक-ठाक चल रहा है।

और इस बीच तीन अन्धे आगे बढ़ते जा रहे थे। अब वे आसानी से क़दम मिलाकर चल रहे थे। पहले की ही तरह सबसे आगे कन्दीबा अपनी लाठी से ठक-ठक करता चल रहा था। उसे सभी सड़कों, रास्तों का पता था और वे हमेशा मेले-त्योहार के दिन या पैंठ-बाज़ार के दिन किसी न किसी बड़े गांव, क़स्बे में पहुंच जाते थे। इस छोटे से बैंड की सुरीली धुनें सुनकर भीड़ इकट्ठी हो

जाती, और फिर बूढ़े कन्दीबा की टोपी में रह-रहकर सिक्के खनक उठते।

युवक के चेहरे से उत्तेजना और भय की छाप मिट गयी थी और उसकी जगह एक दूसरा भाव ले रहा था। प्रत्येक क़दम, जो वह सड़कों पर रखता, उसके कानों में नयी-नयी आवाज़ें, नयी-नयी ध्वनियां बिखेर देता—विशाल, अज्ञात संसार की वे ध्वनियां जो कोठी की मंद-मंद, हिलोरती, डुलाती मर्मर-ध्वनियों से एकदम भिन्न थीं ... उसकी अन्धी आंखें और खुल गयीं। उसका सीना फैलकर चौड़ा हो गया। उसकी श्रवण-शक्ति और भी प्रखर, और भी तीक्ष्ण हो गयी। धीरे-धीरे वह अपने साथियों के बारे में भी जानने-समझने लगा—कन्दीबा दयावान था, कुज़्मा चिड़चिड़ा। जब उक्राइनी किसानों के चर्र-मर्र करते हुए छकड़ों की क़तार निकलती, तो वह भी अपने साथियों के साथ उनके पीछे लग लेता; स्तेपी में अलाव के पास रातें बिता देता; बाजारों तथा मेलों-ठेलों के कोलाहल सुनता; मानव मात्र के—न कि एकमात्र अन्धों के ही—दुःख, दर्द, दुर्भाग्य का अनुभव करके उसके हृदय में कसक उठती, पीड़ा होती... और आश्चर्य की बात यह थी कि अब उसके मानस में ये सारी नयी-नयी छापें अंकित होती जा रही थीं। अब अन्धों का गाना सुनकर उसे कंपकंपी न चढ़ती। और जैसे-जैसे इस हाहाकार करते हुए जीवन-सागर में उसके दिन व्यतीत होते गये, अप्राप्य को पाने की उसकी प्रबल आकांक्षा कम होती गयी, लुप्त होती गयी ... उसके भावुक कान प्रत्येक नये गान और प्रत्येक नयी धुन को ग्रहण करते और जब राह चलते वह अपनी उंगलियां तारों पर चलाता, तो चिड़चिड़े कुज़्मा का भी दिल पिघल उठता और उसके चेहरे पर शांति छा जाती। पोचायेव के पास पहुंचते-पहुंचते अन्धों का झुंड बढ़ता जा रहा था।

अभी शरद ऋतु समाप्त न हुई थी, पर सड़कों पर बर्फ़ ही बर्फ़ पड़ी हुई थी। एक दिन कोठीवाले यह देखकर हैरान रह गये कि पानिच भिखारियों से लत्ते पहने दो अन्धों के साथ चला आ रहा है। लोगों का कहना था कि वह पोचायेव में मां मरियम के गिरजे मन्नत मानने गया था।

पर उसकी आंखें पहले की ही तरह निर्मल और पहले की ही तरह दृष्टिहीन थीं। हां, उसकी आत्मा अवश्य निरोग हो गयी थी और ऐसा लगता था कि एक भयावह दुःस्वप्न की छाया कोठी पर से हमेशा के लिए हट गयी है ... और अंततः जब मक्सिम, जो कीयेव से बराबर पत्र

लिखते रहे थे, लौटे, तो आन्ना मिखाइलोव्ना ने उनका स्वागत इन शब्दों से किया: "यह सब मैं तुम्हें कभी माफ़ नहीं करूंगी, कभी नहीं।" लेकिन उनके चेहरे पर इससे उलट बात लिखी थी ...

जाड़े की लम्बी-लम्बी शामों को प्योत्र उन्हें अपने दर-दर भटकने की बातें सुनाता और जब गोधूलि के समय पियानो पर बैठता, तो घर भर में नयी-नयी सुर-लहरियां नाचने लगतीं, ऐसी सुर-लहरियां, जो इस घर में पहले कभी सुनाई नहीं दी थीं ... कोयेव यात्रा अगले वर्ष तक के लिए स्थगित कर दी गयी थी। अब सारे परिवार का ध्यान प्योत्र की भावी योजनाओं और आशाओं पर ही केन्द्रित था ...

सातवां अध्याय

१

उसी शरद ऋतु में एवेलीना ने अपने माता-पिता को अपना अटल निश्चय सुना दिया—वह "कोठी के" अन्धे युवक से ही विवाह करेगी। बूढ़ी मां रो पड़ी, पिता देव-चित्रों के समक्ष पूजा कर चुकने के पश्चात् बोले कि उनके विचार में इस संबंध में यही ईश्वर की इच्छा है।

दोनों का विवाह हो गया। प्योत्र के लिए युवा दांपत्य-जीवन के आनंदमय शांत दिन आ गये, किंतु इस आनन्द के पीछे किसी अस्पष्ट चिन्ता की भी प्रतिच्छाया कभी-कभी दिख जाती थी। चरम प्रसन्नता के क्षणों में भी उसके अधरों पर कुछ ऐसी मुस्कान होती मानो उसे अपने इस सौभाग्य की उचितता पर शंका है, मानो वह डर रहा है कि यह आनंद स्थायी नहीं है। यह समाचार सुनकर कि वह पिता बननेवाला है उसके मुखमंडल पर आशंका की एक लहर दौड़ गयी थी।

फिर भी इस समय वह जिस प्रकार जीवन व्यतीत कर रहा था, उससे उसे पहले जैसी व्यर्थ बातों पर मनन करने के लिए अवकाश ही न मिला। अब उसके दिन गम्भीर अध्ययन में और अपनी पत्नी तथा भावी बच्चे के प्रति उत्तरोत्तर बढ़ती हुई चिन्ता में कटने लगे। कभी-कभी इन सब चिंताओं के बीच उसके हृदय में अन्धों के करुण क्रंदनमय गीत की

स्मृतियाँ जाग उठतीं। तब वह गांव में निकल जाता, जहां पयोदोर कन्दीबा और उसके बेचक के दागवाले भतीजे के लिए एक नया झोंपड़ा बनवा दिया गया था। पयोदोर अपना प्राचीन उपाइनी वाद्य कोब्ज़ा उठा लेता या फिर वे देर तक बातें करते रहते और धीरे-धीरे प्योत्र के विचारों में शांति आ जाती और उसकी योजनाएं और भी अधिक सफलता प्राप्त करने के लिए उसे प्रेरित करने लगतीं।

अब वह प्रकाश के प्रति कम भावुक रह गया था। उसकी आत्मा में निहित शक्तियां, जो प्रत्येक बाह्य अनुभूति पर प्रतिक्रिया करने को तत्पर रहती थीं और उसे व्यथित किये थीं, अब मानो सो गयी थीं और अब वह पहले की तरह अपनी विभिन्न अनुभूतियों को एकसूत्र करके उन्हें एक स्वरूप देने के निष्फल चेतन प्रयासों से इन सोयी शक्तियों को झकझोर नहीं रहा था। उनके स्थान पर सुखद स्मृतियां और जीवनदायिनी आशाएं खेल रही थीं। लेकिन कौन जाने, संभव है उसकी आत्मा में व्याप्त हो गयी यह शान्ति उसके अचेतन मस्तिष्क के कार्य में सहायक हो रही हो और उसकी ये अस्पष्ट, पृथक-पृथक अनुभूतियां उसकी चेतना की सहायता के बिना स्वयं ही अधिक सफलता से उसके मस्तिष्क में एक दूसरे की ओर राह बना रही थीं। इसी तरह से हमारा मस्तिष्क स्वप्न में ऐसे-ऐसे विचारों और रूपों की सृष्टि करता है, जिनकी सृष्टि चेतना की सहायता से असंभव है।

२

कमरे में शान्ति थी। यह वही कमरा था, जिसमें प्योत्र का जन्म हुआ था। इस शान्ति को भंग कर रहा था एक शिशु का क्रन्दन। अब बच्चा कुछ दिनों का हो चुका था और एवेलीना भी स्वस्थ होती जा रही थी। किन्तु इन दिनों प्योत्र काफ़ी उदास रहने लगा था। उसे किसी भावी अनिष्ट की आशंका हो रही थी।

डाक्टर आये। उन्होंने बच्चे को उठाया और खिड़की के पास लिटा दिया। एक झटके से उन्होंने परदा हटा दिया, जिससे तेज़ धूप कमरे में आयी और वे अपने यंत्रों के साथ बच्चे पर झुक गये। पास ही उदास,

गम्भीर प्योत्र भी बैठा था। पिछले कई दिनों से उसकी यही दशा थी। लगता था कि डाक्टर के इन परीक्षणों का उसके लिए कोई अर्थ नहीं, जैसे उसे मालूम हो कि नतीजा क्या होगा।

"वह शायद अन्धा है," वह बार-बार कह रहा था। "अच्छा होता, अगर वह पैदा ही न हुआ होता।"

युवक डाक्टर ने कोई उत्तर न दिया। वह अपने परीक्षणों में लगे रहे। और उन्होंने आखिर ऑफ्थैल्मोस्कोप को एक ओर रख दिया और कमरे में शांत, विश्वासपूर्ण आवाज सुनाई दी:

"पुतलियों में गति है; बच्चा देखता है, इसमें सन्देह नहीं।"

प्योत्र कांप उठा और तुरन्त उठकर खड़ा हो गया। उसकी इस गति से स्पष्ट था कि उसने डाक्टर के शब्द सुने हैं, किन्तु उसके मुख पर कुछ ऐसे भाव झलक रहे थे, जिनसे पता चलता था कि शायद ही उसने डाक्टर की बात समझी हो। कांपते हुए हाथ से खिड़की का सहारा लेकर वह वहीं जड़वत् खड़ा हो गया। उसका पीला चेहरा ऊपर को उठा हुआ था, मुखमुद्रा स्थिर, जड़ थी।

इस क्षण तक उसके पूरे अस्तित्व में एक विचित्र उत्तेजना छायी हुई थी। उसे अपना अस्तित्व तक भूल सा गया था, किंतु साथ ही उसका रोम-रोम कोई आशाप्रद समाचार सुनने के लिए व्याकुल था।

उसके चारों ओर अंधकार था और वह यह भली भांति समझ रहा था। वह अपने से पृथक उसकी निस्सीमता का अनुभव कर रहा था। यह अंधकार उसपर बढ़ा आ रहा था और वह अपनी कल्पना में उसकी निस्सीमता को समेट रहा था मानो उसका सामना कर रहा हो। वह अभेद्य अंधकार के इस असीम, डोलायमान महासागर से अपने बच्चे की रक्षा करने के लिए उसकी राह रोके खड़ा था।

यह थी उसकी मानसिक स्थिति उस समय, जब डाक्टर बच्चे की परीक्षा कर रहे थे। पहले भी वह डरता था, किंतु पहले उसके हृदय में आशा की एक किरण भी थी। किंतु अब एक दर्दनाक, भयानक आशंका उसके सारे तंत्रिका-तंत्र पर, जो चरम-सीमा तक उत्तेजित था, छा गयी थी, उसके रोम-रोम में भर गयी थी और आशा उसके हृदय के किसी कोने में, किसी गुप्त कोश में छिप गयी थी, दुबक गयी थी। और सहसा इन शब्दों ने "बच्चा देखता है!" सब कुछ उलट दिया। पलक झपकते ही

आशंका काफूर हो गयी और पलक झपकते ही आशा विश्वास में बदल गयी और अन्धे की भावुक उत्तेजित आत्मा को प्रदीप्त कर गयी। यह एक अप्रत्याशित वार था, जो चमकती बिजली की तरह उसकी अंधेरी आत्मा पर हुआ था। डाक्टर के शब्द अग्नि बाणों की तरह मस्तिष्क में कौंध गये ... मानो उसके अंतस् में एक अग्निकण चमका और उसकी आत्मा के कोने-कोने को, उसके शरीर के कोश-कोश को प्रकाशित कर गया ... उसका रोम-रोम कांप उठा और वह स्वयं यों थरथरा रहा था, जैसे कसकर खिंचा हुआ तार अप्रत्याशित चोट से झनझना उठता है।

और तब, इस अनुभूति के पश्चात् प्योत्र के उन नेत्रों के आगे अनोखे दृश्य, अनूठी कल्पनाएं साकार होने लगीं, जिनकी ज्योति उसके जन्म से पहले ही बुझ गयी थी। यह प्रकाश था अथवा ध्वनि, इसकी उसे चेतना न थी। यह ध्वनियां थीं, जो सजीव हो गयी थीं, ध्वनियां, जिन्होंने कोई रूप धारण कर लिया था, ध्वनियां, जो प्रकाश की भांति, किरणों की तरह प्रवाहित हो रही थीं। वे एक छोर से दूसरे छोर तक फैले हुए गगन-मंडल की भांति चमक रही थीं, सूर्य के लाल पिंड की तरह आकाश पर विचर रही थीं, वे स्तेपी की हरियाली से आच्छादित धरती के गान की भांति थिरक रही थीं, वे उद्यान के स्वप्निल बीच-वृक्षों की भांति झूम रही थीं।

यह केवल पहला क्षण था और इस क्षण की धूमिल अनुभूतियां ही उसकी स्मृति में रह गयीं। और सब कुछ कालांतर में विस्मृति के गर्भ में समा गया। वह केवल निश्चयपूर्वक यह कहता था कि उन कुछेक क्षणों में उसकी आंखें खुल गयी थीं, वह देख रहा था।

प्योत्र ने क्या देखा, कैसे देखा और सचमुच कुछ देखा भी या नहीं—नहीं कहा जा सकता। बहुतों ने उससे कहा कि यह असंभव है, किंतु वह अपनी बात पर अड़ा रहता और यकीन दिलाता कि उसने सचमुच पृथ्वी और आसमान देखे थे, मां, पत्नी और मक्सिम को देखा था।

कुछेक क्षण तक वह अपना प्रबुद्ध मुख ऊपर को उठाये खड़ा रहा। वह इतना विचित्र लग रहा था कि सब का ध्यान अपने आप ही उसपर केंद्रित हो गया और चारों ओर सब कुछ मौन हो गया। सबको लग रहा था कि खिड़की के पास खड़ा यह व्यक्ति उनका प्योत्र नहीं, जिसे वे अच्छी तरह जानते हैं, अपितु कोई दूसरा अपरिचित व्यक्ति है। वह

पहला, अकस्मात ही उसपर उतर आये रहस्य से घिरा कहीं विलीन हो गया था।

और इस रहस्य के साथ अकेला कुछ अल्प क्षणों तक रहने से उसे केवल एक तृप्ति की अनुभूति रह गयी थी और एक अद्भुत विश्वास कि इन क्षणों में उसने देखा था।

क्या सचमुच ऐसा हो सकता था?

क्या यह संभव था कि प्रकाश की वे समस्त अस्पष्ट, धूमिल अनुभूतियां, जो उन क्षणों में अज्ञात पथों से होती हुई उसके अंधकारमय मस्तिष्क में पहुंचती थीं, जब अन्धे का सारा शरीर प्रकाशमय दिन को देख पाने की चेष्टा में तन जाता था, थरथराता था,—अब आकस्मिक हर्षोन्माद के इन लघु क्षणों में उसके मस्तिष्क में उभर आयी हों, जैसे कि रासायनिक घोल में नेगेटिव पर उभरता हुआ धुंधला चित्र?..

और अन्धी आंखों ने नीले आसमान को, चमकते हुए सूर्य को, बहती हुई निर्मल नदी को और उसके पास ही उस टीले को देखा, जहां वह बचपन में अनेक बार रोया था ... और फिर वह पुरानी पनचक्की, तारों जड़ी वे रातें, जिनमें उसके हृदय में हूक उठती थी, कसक उठती थी, और गुपचुप उदास शशि भी उसकी आंखों के सामने साकार हो उठे, उसे दिखने लगे ... और गांवों की धूलभरी पगडंडियां, सड़कें और सीधा दूर तक चला जानेवाला राजमार्ग, गाड़ियों की क़तारें और उनके लोहे के पहियों पर पड़ती हुई सूर्य की किरणें और भीड़-भड़क्का, जहां उसने अन्धे भिखारियों का गीत गाया था, सभी उसे दिखाई दिये ...

अथवा शायद ये उसके मस्तिष्क में उठनेवाली छायावत् आकृतियां रही हों—उन रहस्यमय बड़े-बड़े पहाड़ों की, काल्पनिक मैदानों की, मायावी नदियों के तटों पर और सूर्य की चमकती हुई किरणों में झूमते हुए अद्भुत वृक्षों की और उस सूर्य की किरणों की, जिसे उसके पूर्वजों की असंख्य पीढ़ियों ने देखा था?

अथवा यह केवल अंधकारमय मस्तिष्क की उन गहराइयों में स्वरूपहीन अनुभूतियों को छोड़ कर और कुछ न था, जिनका कभी मक्सिम ने जिक्र किया था और जहां प्रकाश तथा ध्वनि प्रफुल्लता एवं उदासीनता, प्रसन्नता एवं वेदना के सम प्रभावों की सृष्टि करते हैं?..

ग्रौर बाद में उसे याद ग्रायी थी केवल संगीत की धुन, जो एक क्षण के लिए उसकी ग्रात्मा में ध्वनित हो उठी थी, वह धुन, जिसमें उसके सारे प्यार ग्रौर प्रकृति ग्रौर जीवन में उसे प्राप्त समस्त ग्रनुभूतियों ने एकसूत्र होकर एक स्वरूप धारण कर लिया था।

कौन जाने?

उसे तो केवल इस रहस्य का ग्राना ग्रौर जाना ही याद रहा। ग्रौर याद रहा वह ग्रन्तिम क्षण जब कांपती, थरथराती ग्रौर विलीन होती हुई ध्वनि-ग्राकृतियां एक दूसरे से मिलकर एकरूप हो गयीं ग्रौर मूक हो गयीं उस कसे हुए तार की तरह, जो झनझना कर शान्त हो जाता है, जिसकी ऊंची ग्रौर तेज ध्वनि धीमी ग्रौर हल्की होकर विलीन-सी होती सुनाई देती है ... लगता था निस्सीम गगन से उतरती हुई कोई चीज ग्रन्तराल के ग्रभेद्य ग्रन्धकार में समा रही है ...

ग्रौर फिर सब कुछ ग्रंधकार में समा गया ग्रौर मौन हो गया।

ग्रन्धकार ग्रौर मौन... ग्रभी भी धूमिल ग्राकृतियां ग्रन्धकार में साकार होने का प्रयत्न कर रही थीं। परन्तु न उनका रंग था, न रूप ... ग्रब केवल ग्रन्धकार को काटते हुए सुरों के कुछ उतार-चढ़ाव ही शेष रह गये थे – नीचे, बहुत नीचे। ग्रौर ग्रन्त में वे भी ग्रनन्त शून्य में विलीन हो गये।

ग्रौर तब कमरे के भीतर का जीवन उस रूप में उसके कानों तक पहुंचने लगा, जिसे सुनने का वह ग्रभ्यस्त हो चुका था। वह मानो जाग उठा था, लेकिन ग्रभी भी दीपित, प्रसन्नचित्त खड़ा मां ग्रौर मक्सिम के हाथ दबा रहा था।

"तुझे क्या हो गया?" मां ने परेशानी भरे स्वर में पूछा।

"कुछ नहीं। सिर्फ़ ... मुझे ऐसा लगता है ... मैंने तुम्हें देख लिया है, तुम सब को। मैं ... मैं सो तो नहीं रहा हूं?"

"ग्रौर ग्रब?" मां ने घबराते हुए पूछा। "ग्रब तुझे याद है, याद रहेगा?"

प्योत्र ने गहरी सांस ली।

"नहीं," बड़ी कठिनाई से वह बोला। "नहीं। किन्तु कोई बात नहीं। क्योंकि ... क्योंकि ग्रब मैंने वह सब उसे दे दिया है, उस बच्चे को ग्रौर ... ग्रौर सब को ..."

वह थरथराया और चेतनाशून्य हो गया। उसका चेहरा सफ़ेद पड़ गया था, किन्तु उसपर अब भी तृप्ति एवं संतोष का हर्षमय भाव झलक रहा था।

उपसंहार

तीन वर्ष बीत गये।

"कोन्त्राक्ती"* के समय कीयेव में एक नये, अद्भुत संगीतज्ञ को सुनने के लिए भीड़ की भीड़ जमा थी। वह अन्धा था, किंतु उसकी संगीत-प्रतिभा और उसके जीवन के बारे में तरह-तरह की कहानियां मशहूर हो गयी थीं। लोगों का कहना था कि वह एक धनी परिवार में पैदा हुआ था और बचपन में अन्धे भिखारियों का एक दल उसे उसके घर से उड़ा ले गया था और वह उनके साथ गांव-गांव की ख़ाक छानता-फिरा, जब तक कि एक दिन एक प्रसिद्ध प्रोफ़ेसर का ध्यान उसकी अद्भुत संगीत प्रतिभा पर नहीं पड़ा। कुछ लोग यह भी कहते थे कि वह ख़ुद ही घर से भागकर भिखारियों के एक दल में शामिल हो गया था। उनके कथनानुसार उसके इस प्रकार भाग जाने का कारण शायद यह था कि वह जीवन में कोई रोमांचकारी अनुभव प्राप्त करना चाहता था। कुछ भी हो, हाल लोगों से खचाखच भरा था। जनता को कहा गया था कि कार्यक्रम से प्राप्त धन कल्याणकारी कामों में लगाया जायेगा, पर किन कामों में—यह कोई भी नहीं जानता था। फिर भी टिकट सभी बिक गये थे।

मंच पर एक युवक दिखाई दिया और हाल में सन्नाटा छा गया। युवक का चेहरा पीलापन लिये था और बड़ी-बड़ी आंखें बहुत सुंदर थीं। यदि ये आंखें जड़वत् एक ओर जमी हुई न दिखाई देतीं और यदि वह एक सुनहरी बालों वाली युवती—लोगों का कहना था कि वह उसकी पत्नी है—का सहारा लिये आता हुआ न दीख पड़ता, तो यह विश्वास हो न होता कि वह अन्धा है।

---

*हम एक बार फिर अपने पाठकों को याद दिला दें कि "कोन्त्राक्ती" स्थानीय रूप से कीयेव में होनेवाले मेले को कहते थे।—ले०

"आश्चर्य की बात नहीं कि जनता उससे इतनी प्रभावित है," हाल में कोई आलोचक अपने पड़ोसी से कह रहा था। "उसकी शक्ल ही ऐसी है कि ध्यान एकदम उसकी ओर खिंचा चला जाता है।"

वास्तव में ही तन्मयता का भाव लिये उसका गोरा चेहरा, जड़ आंखें और उसकी सम्पूर्ण आकृति से ही श्रोताओं को कोई नवीन, बिल्कुल अनूठा संगीत सुनने की आशा लगने लगती थी।

दक्षिणी रूस की जनता को अपनी लोक धुनों से बहुत प्यार है और वह उनके वादकों का मान करना भी जानती है, पर यहां मेले में जमा तरह-तरह के लोगों की भीड़ भी पहले क्षण से ही संगीत में अभिव्यक्त भावों की गहराई, उनकी सचाई पर मंत्र-मुग्ध हो गयी। अन्धा संगीतज्ञ लोक-धुनों पर आधारित मुक्त संगीत-रचनाएं बजा रहा था और उसकी इन रचनाओं से, उसके संगीत से उस प्रकृति के साथ उसके तादात्म्य का परिचय मिल रहा था, जो सदा से ही लोक-धुन और लोक-संगीत का स्रोत रही है। सुरीली, लचीली संगीत-लहरी रंगों की विविधता लिये बह रही थी, कभी हर्षोल्लासमय गान का रूप लेती और कभी मन की पीड़ा लिये उदास गीत में वह निकलती। कभी-कभी लगता यह आकाश में तूफानी बादल गरज रहे हैं और उनकी गड़गड़ाहट उसके निस्सीम विस्तार में गूंज रही है; कभी केवल किसी प्राचीन क़ब्र के टीले पर घास की मर्मर बीते दिनों की याद दिलाती सुनाई देती।

अन्तिम सुर के हवा में विलीन होते-होते विशाल हाल करतलध्वनि से गूंजने लगा। अन्धा संगीतज्ञ नतमस्तक आश्चर्यचकित बैठा उस हर्षध्वनि को सुनता रहा। और लो, उसने फिर हाथ उठाये और सुर-कुंजिकाओं पर उंगलियां दौड़ाने लगा। हाल में फ़ौरन मौन छा गया।

इसी समय मक्सिम ने हाल में प्रवेश किया। उन्होंने इस जन-समूह को ध्यान से देखा। सभी लोग एक ही भाव में बह रहे थे, सबकी उत्सुक, चमकती आंखें अन्धे पर लगी थीं।

बूढ़ा बैठा सुन रहा था और प्रतीक्षा कर रहा था। इन ध्वनियों के पीछे छिपे मानव-हृदय को इस भीड़ में उससे अधिक और कोई नहीं समझता था। उसे लग रहा था कि संगीतज्ञ की आत्मा से प्रस्फुटित हो रहा यह संगति-प्रवाह सहसा रुक जायेगा, कि यह शक्तिशाली मुक्त संगीत पहले की तरह एक व्यथित पीड़ादायी प्रश्न का रूप ले लेगा और उसके

अन्धे शिष्य की आत्मा में एक नया घाव कर देगा। किन्तु संगीत में कोई व्याघात न पड़ा—वह विकसित होता गया, सशक्त होता गया, पूर्ण होता गया और श्रोताओं को मंत्रमुग्ध-सा करता हुआ उनपर छाता गया।

जितने ध्यान से मक्सिम ने उसे सुना, उतनी ही स्पष्टता के साथ उन्हें उसके वादन में परिचित धुनें सुनाई पड़ने लगीं।

हां, यह वही ध्वनियां थीं: भीड़ के शोर-गुल से भरी सड़क की ध्वनियां। उज्ज्वल, गरजती, जीवन से भरपूर लहर चल रही है—छिटकती हुई, चमकती हुई, हजारों ध्वनियों में बिखरती हुई; यह कभी ऊंची उठती है, बढ़ती है और कभी फिर नीचे गिरकर हल्के-हल्के कलकल करती बहने लगती है और इस सब में वह शांत, गरिमामय, निर्लिप्त, शीतल और विरक्त बनी रहती है।

और फिर सहसा मक्सिम का दिल बैठ गया। एक बार पहले की ही तरह संगीतज्ञ की उंगलियों तले से एक करुण क्रन्दन के स्वर फूट निकले।

स्वर निकले, हाल में गूंजे और हवा में विलीन हो गये। और फिर कलकल करती जीवन की और भी उज्ज्वल और भी शक्तिशाली, हर्षोन्माद से भरपूर चमकती-दमकती, लहराती ध्वनियां गूंज उठीं।

हां, यह क्रन्दन उसके निजी दुःख का क्रन्दन नहीं था, यह केवल उसकी अन्धी वेदना नहीं थी। मक्सिम की आंखें छलछला आयीं। उनके चारों ओर बैठे लोगों की आंखें भी गीली हो आयी थीं।

"उसकी आंखें खुल गयी हैं, हां, हां यह सच है,—उसके मन की आंखें खुल गयी हैं," मक्सिम सोच रहे थे।

स्तेपी की बहती हुई वायु के समान कोमल, हृदय को प्रफुल्लित करनेवाली, निश्चिंत, निर्बाध और जीवन-दायिनी सुर-लहरियों, कोलाहलपूर्ण विविध जीवन और गम्भीर एवं भव्य लोक-संगीत के स्वरों के बीच रह-रह कर अधिकतर दृढ़ता के साथ अन्तस् तक को झकझोर डालनेवाले सुर संगीतज्ञ के वाद्य से फूट रहे थे। इन सुरों के प्रभाव की शक्ति निरन्तर बढ़ती जा रही थी।

"ठीक, ठीक, मेरे बच्चे, सुनाये जा," मक्सिम ने हृदय से उसका मूक अनुमोदन किया। "ऐसे ही हर्ष और आह्लाद के बीच ही यह सचाई भी इनको सुनाता जा ..."

क्षण भर बाद उस विशाल हाल में मंत्रमुग्ध श्रोताओं पर केवल अन्धों का ही गीत छाया हुआ था ...

"अन्धे को दे, दाता-आ-आ ... मसीहा-आ-आ के नाम पर ..."

परन्तु अब यह केवल भीख की विनती नहीं थी और न ही भिखारियों का करुण क्रंदन, जो सड़क के शोर-गुल में खो जाता है। इस गीत में वह सब था, जो पहले भी था, जब उसके प्रभाव में प्योत्र का चेहरा विकृत हो उठता था और हृदय को कुरेदनेवाली उसकी पीड़ा को सहने की शक्ति के अभाव में वह पियानो छोड़कर भाग उठता था। अब उसने अपनी आत्मा में उस पीड़ा पर विजय पा ली थी और इस समय वह यहां एकत्रित जनता तक जीवन की भयावह सचाई, उसकी पूरी गहराई मे पहुंचाकर, उसके हृदयों पर विजय पा रहा था ... यह प्रकाशपूर्ण दिवस की पृष्ठभूमि मे अंधेरी रात की व्याख्या और आनन्द की चरम सीमा के बीच वेदना का स्मारण था।

ऐसा लगा जैसे श्रोताओं पर वज्राघात हुआ है। हर हृदय कांप रहा था मानो संगीतज्ञ की चपल उंगलियों ने उसके तारों को झनझना दिया हो। संगीत समाप्त हो गया, परन्तु जनता निश्चल बैठी रही। हाल पर मौत का सन्नाटा छा रहा था।

"हां, उसने देखना सीख लिया है," नतमस्तक होते हुए मक्सिम सोचने लगे, "अन्धी, स्वार्थपूर्ण और अशमनीय पुरानी वेदनाओं के स्थान पर अब उसकी आत्मा में जीवन के सच्चे ज्ञान का प्रकाश है। उसने दूसरों के सुख-दुःख को समझना सीखा है, उसने देखना सीखा है। और अब वह भाग्यवानों को उनकी याद दिला सकेगा, जो कम भाग्यशाली हैं, अभागे हैं ..."

बूढ़े सिपाही का माथा और झुक गया। आखिर उसने भी इस दुनिया में अपना काम पूरा कर लिया। उसका भी जीवन व्यर्थ नहीं गया। संगीत इसी सन्देश का वाहक था। यह वह संगीत था, जिसमें अद्‌भुत क्षमता थी, आत्मा पर अधिकार जमा लेने की अद्वितीय शक्ति थी, जो हाल में गूंज रहा था, जन-जन पर मंडरा रहा था . . . .

. . . .

अन्धे संगीतज्ञ का यह पहला प्रयास था।

१८८७–१८९८

पाठकों से

प्रगति प्रकाशन इस पुस्तक की विषय-वस्तु, अनुवाद और डिजाइन के बारे में आपके विचार जानकर आपका अनुगृहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त करके भी हमे बड़ी प्रसन्नता होगी।

कृपया हमें इस पते पर लिखिये:

प्रगति प्रकाशन,
२१, जूबोव्स्की बुलवार,
मास्को, सोवियत संघ।